The Region of Eastern U. P. Under the Mughals From 1707 to 1761 A. D.

(A Regional Study)

१७०७ से १७६१ ई. के मध्य मुगलों के अधीन पूर्वी उत्तर प्रदेश का क्षेत्र

(एक क्षेत्रीय अध्ययन)

The Thesis for The Degree

of

Doctor of Philosophy

Submitted by
RAJESH SINGH

Supervised by
DR. HERAMB CHATURVEDI

Department of Medieval and Modern History
University of Allahabad
Allahabad
1993

= प्रा-क्-क-थ-न =

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी0फिल0 उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध " 1707- 1761 ई0 " के मध्य मुगलों के अधीन पूर्वी उत्तर प्रदेश का क्षेत्र (एक क्षेत्रीय अध्ययन) " में 1707 से 1761 ई0 के मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश को परिभाषित करने के अतिरिक्त इस क्षेत्र में होने वाली राजनीतिक गतिविधियों, सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक प्रगति तथा सांस्कृतिक उपलब्धियों की समीक्षा की गयी है । इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण होने में कुछ व्यक्तियों ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है, उन्हें साधुवाद किये बगैर मैं अपना दायित्व पूर्ण न कर सकूँगा ।

मैं अपने निर्देशक डा0 हेरम्ब चतुर्वेदी के प्रति बार - बार सम्मान प्रकट करता हूँ, जिनके कुशल एवं स्नेहिल निर्देशन में इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया । मैं उनकी पत्नी श्रीमती आभा चतुर्वेदी के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने के लिए सदैव प्रेरित किया ।

मैं अपने पिता श्री बालमुकुन्द सिंह एवं माता श्रीमती लीलावती देवी को शत -शत नमन करता हूँ जिनके स्नेह व उत्साहवर्धन ने मुझे इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने के लिए मुझे प्रेरणा व शक्ति प्रदान की ।

मैं अपनी सौम्य पत्नी श्रीमती शान्ति सिंह के लिए किन शब्दों का प्रयोग करूँ, मैं नहीं जानता, परन्तु इतना अवश्य है कि उनका सहयोग इस शोध प्रबन्ध के पूर्ण होने में अविस्मरणीय है ।
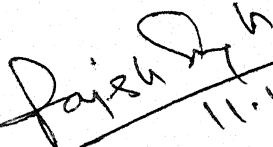
मैं अपने विभाग के समस्त प्राध्यापकों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनसे मुझे समय - समय पर उचित सलाह प्राप्त हुई ।

मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय ,इलाहाबाद, ईश्वरी प्रसाद शोध संस्थान, इलाहाबाद, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर, तिलक धारी महाविद्यालय, जौनपुर, सिवली नेशनल कालेज आजमगढ, आदि के पुस्तकालयाध्यक्षों एवं उन कर्मचारियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने मुझे शोध कार्य हेतु पुस्तके उपलब्ध करायी ।

मैं अपने परम मित्रों श्री राहुल दुबे, श्री ऋषि मुनि उपाध्याय, श्री अंशुमान सिंह, कु0 अलका सिंह तथा श्री अनिल कुमार पाण्डेय को जीवन पर्यन्त विस्मृत नहीं कर सकता जिनके प्रेरणात्मक सहयोग ने इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में योगदान किया ।

अन्त में मैं इस शोध प्रबन्ध का टंकण कार्य करने वाले श्री राकेश कुमार शुक्ला को हृदय से धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने व्यक्तिगत रुचि के साथ इस कार्य को सम्पादित किया । साथ ही शुभम् फोटो कापियर्स के प्रबन्धक श्री राकेश कुमार जायसवाल, श्री नीरज जायसवाल, श्री सुनील जायसवाल तथा अन्य समस्त कर्मचारियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ ।

साभार।

Rajesh Singh
11.10.93

(राजेश सिंह)
"शोध छात्र"
मध्य/आधुनिक इतिहास विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद ।

अ-नु-क्र-म-णिका

xx xxx xxxx
xxxxxxx
xxxxx
xxx
x

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

x अध्याय - एक x

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

पूर्वी उत्तर प्रदेश - परिभाषित

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

पूर्वी उत्तर प्रदेश : परिभाषित

भौगोलिक सीमांकन एवं पृष्ठभूमि :

पूर्वी उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत विभिन्न सरकारें थीं । ये सरकारें इलाहाबाद, बनारस, चनाडा (चुनार), गाजीपुर, करिहा, कोर्रह, कालिंजर, मानिकपुर, जौनपुर, जनूबी (दक्षिणी), जनूबी चनाडा (दक्षिणी चुनार), गर्बी (पश्चिमी) कड़ा सरकार, गर्बी (पश्चिमी) कुर्रा (कोड़ा) सरकार और अवध सूबे के अन्तर्गत आने वाली पूर्वी उत्तर प्रदेश में स्थित गोरखपुर सरकार थी ।

यह द्वितीय जलवायु (इक्लीम दोम) में स्थित था । जौनपुर जिले के अन्तर्गत सिझौली से दक्षिण पहाड़ियों तक लम्बाई 160 कोस और चौसाघाट से घाटमपुर तक इसकी चौड़ाई 122 कोस थी । इसके पूर्व में बिहार, उत्तर में अवध, दक्षिण में बंधु (रीवां राज्य में स्थित) पश्चिम में आगरा था । पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में बड़ी नदियाँ, "गंगा" और यमुना " थी । यहाँ अन्य छोटी भी नदियाँ भी थी । जैसे रिहन्द

केन, सरयू, राप्ती, घाघरा, और वरूणा आदि ।[1] यहाँ की जलवायु स्वास्थ्य वर्धक थी । गर्मी और शीत ऋतु में दोनों ही लगभग शीतोष्ण थीं ।[2] यहाँ तरह - तरह के मेवे, फूल और सब्जियाँ पैदा होती थी । यहाँ खरबूजा और अंगूर बहुत पैदा होता था । पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में खेती अच्छी होती थी । जोआरी और लहदरा पैदा नहीं होता था, मोंठ की पैदावार कम थी ।[3] पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में विशेषकर, सुखदास, मधकर और झनवाँ नामक धान, जो सफेदी, कोमलता, सुगन्ध और स्वाद में अनुपम थे, पैदा होता था । फूल, फल[4] और शिकार

- -

1· आइने अकबरी (अनुवादक हरिवंश राय शर्मा),खण्ड-3,पृ0-150 तथा मोरलैण्ड,मुस्लिम भारत की ग्रामीण अर्थ व्यवस्था(हिन्दी अनुवादक कमलाकर तिवारी), 1963 , पृ0- 37

2· आइने अकबरी,खण्ड-3 ,पृ0-150,तथा मोरलैण्ड,पृ0-37

3· आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 151

4· वही, पृ0- 162-63 तथा तुजुके जहाँगीरी,पृ0-252 तथा मोरलैण्ड, पृ0 - 169

भाँति - भाँति के थे ।[5] पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में मिहिरकुल नामक कपड़ा अच्छा बुना जाता था, विशेषकर बनारस,जलालाबाद और मऊ में इस कपड़े की बुनावट होती थी । जौन और जफरवाल स्थानों में ऊनी कपड़े की बुनावट होती थी ।[6]

पूर्वी उत्तर प्रदेश का क्षेत्र :

इलाहाबाद सूबा :

पूर्वी उत्तर प्रदेश के इस सूबे का प्राचीन नाम प्रयाग था । सम्राट अकबर ने इसका नाम इलाहाबाद रखा ।[7] उन्होंने यहाँ पर एक पत्थर विशेष के द्वारा किले का निर्माण करवाया । और बहुत सी महत्वपूर्ण इमारतों का निर्माण करवाया । तीर्थ स्थानों के रूप में हिन्दू

5• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 -151

6• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 151

7• वही तथा मोर लैण्ड, पृ0 - 38 ,110,327

समुदाय के मध्य यह स्थान अत्यधिक महत्वपूर्ण था इस स्थान की महत्ता गंगा, यमुना तथा सरस्वती नदियों के संगम के रूप में हिन्दू समुदाय के मध्य यह स्थान अत्यधिक महत्वपूर्ण था । इस स्थान की महत्ता गंगा यमुना तथा सरस्वती नदियों के संगम से और अधिक हो गयी थी; यद्यपि सरस्वती अदृश्य थी।[8] आज भी यह मान्यता विद्यमान है । कन्तर गाँव के निकट हाथियों का शिकार अत्यधिक प्रचलित था । आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि जब बृहस्पति सिंह राशि में प्रवेश करता है तब गंगा में से एक छोटी पहाडी प्रकट होती है और एक माह तक रहती है । लोग इस पहाडी पर बैठकर पूजन अर्जन करते थे ।[9]

इलाहाबाद सूबे में 9 सरकार (जिले) और 15 दस्तूरूल अमल (राजस्व संहितायें) हैं ।[10] जिसमें इलाहाबाद सरकार में 15 महल

8• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0- 151

9• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 151

10• वही, पृ0 - 72

3 दस्तूरूल अमल थे। हवेली इलाहाबाद आदि में तीन .. महल अर्थात इलाहाबाद के निकटस्थ भाग कन्तित और आगरा सूबे की सीमा पर स्थित भाग तथा । दस्तूरूल अमल थे। इलाहाबाद अर्थात अरैल में 4 महल । दस्तूरूल अमल था ।[11] भदोही में सात महल अर्थात भदोही, सिकन्दरपुर, सोरावं, सिंगरोर, नह, केवाई, हादियाबाद (झूँसी) और एक दस्तूर था ।[12] बनारस सरकार में 8 महल तथा एक दस्तूरूल अमल था । इसका विवरण इस प्रकार है - हवेली बनारस, शहर बनारस, पन्द्रहा, कसवार, हरदुआ, बयालसी ।[13] जौनपुर सरकार में 41 महल और 2 दस्तूर हैं । हवेली जौनपुर आदि में 39 महल । दस्तूर थे । अल्दीमों, अंगली, भिसेरी, भदावं, तलहनी, जौनपुर, हवेली जौनपुर, चाँदीपुर बघर, चाँदा, चिड़िया, कोटा, चकेसर, खरीद, खासपुर, टांडा, खानपुर, देवगाँव, रारी, संभोली, सिकन्दरपुर, सगदी, सरहजपुर, सादियाबाद, जफराबाद,

---

11• वही, -

12• वही

13• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 72

करियात, स्वेहा, कोला, देसवा, घोसी, कोडिया, गोपालपुर, केराकत, मडियाहूँ, मोहम्मदाबाद, मझोरा, मऊ, निजामाबाद, नैगुन, नाथुपुर मुंगरा आदि : 2 महल अर्थात मुंगरा और गुडवाहा तथा । दस्तूर थे।[14]

चनाडा (चुनार) सरकार में 14 महल । दस्तूर अर्थात हवेली चनाडा, अहिरबाडा, भोली, बढोल, टांडा घोस, राघूपुर, जो गाँव नदी के किनारे पर स्थित थे। मझवारा, महवारी, महवई , सिलपुर, और नखन थे।[15]

गाजीपुर सरकार में 18 महल । दस्तूर अर्थात हवेली गाजीपुर, बलिया, पचोतर, बलहावास, भरियाबाद, बराइच, चौसा, दोहमा, सैयदपुर, नम्दी जहूराबाद, करियात परनी, कोपाछीत, गढा, करेन्दा, लखनेसर, मदन बनारस, मुहम्मदाबाद तथा परहाबरी थे।[16]

- -

14• वही, पृ0 - 72,73

15• वही, पृ0 - 73

16• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 73

कर्रहा सरकार, में 12 महल । दस्तूर अर्थात, कर्रहा शहर, हवेली, कर्रहा, ऐछी, अर्थबन, अजासा, रारी करारी, कोतला, कौरा जिसे साधारणतया करसों कहते थे, फतेहपुर, हसवा, और हंसगांव थे ।[17]

कोर्रह सरकार में 8 महल 3 दस्तूर थे । हवेली कोर्रह आदि में 2 महल । दस्तूर अर्थात हवेली कोर्रह और घाटमपुर थे । कोटिया आदि में 3 महल । दस्तूर अर्थात कोटिया, गुज़ीर और केरनपुर किनार आदि थे । जाजमऊ के अन्तर्गत 3 महल । दस्तूर अर्थात जाजमऊ, मुहासमिपुर और मंझावन थे ।[18]

कालिंजर सरकार में 10 महल । दस्तूर अर्थात कालिंजर वाहवेली, उगासी, अजयगढ, सिहोंडा, सिभौमी, शादीपुर, रसन, खन्देह, महोबा,

---

17• वही, पृ0 - 73

18• वही, पृ0 - 73

और मौदहा थे ।[19]

मान्किपुर सरकार में 14 महल 2 दस्तूर थे । हवेली मानिकपुर आदि में 10 महल । दस्तूर अर्थात् मान्कि- बा- हवेली, अरकल, बहलोल, सलवन, जलालपुर, बल्खर, करियात करारा, पायगाह , खतौत, नसीराबाद और राय बरेली के अन्तर्गत 4 महल, । दस्तूर अर्थात रायबरेली, तलहन्डी, जायस और डलमऊ इत्यादि थे ।[20]

इलाहाबाद सरकार में 15 दस्तूरूल आल, 10 महल, 573311 बीघा 14 विस्वा भूमि थी । इसमें 9 महल की नादी माल गुजारी 20833374 1/2 दाम और स्यूरगाल 747001 1/2 दाम थी । इलाहाबाद सरकार में प्रशासन व्यवस्था को सुदृढ बनाने के लिए सेना के विभिन्न

- -

19• वही, पृ० - 73

20• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ० - 73

अंग विद्यमान थे । इस सरकार में 580 सवार और 7100 पैदल सिपाही थे । इलाहाबाद सरकार में हवेली के साथ गंगा और 7100 पैदल सिपाही थे । इलाहाबाद सरकार में हवेली के साथ गंगा और यमुना के संगम पर पत्थर का एक सुदृढ़ किला भी था ।[21] भदोही में गंगा के किनारे ईंट का किला था । इस सन्दर्भ में जलालाबाद एवम् बन्दरा के सिवाय अन्य तीन महल थे परन्तु इनका वर्णन अप्राप्य है । सोरावं नामक स्थान इलाहाबाद सरकार के अन्तर्गत था । सिंगरौर नामक स्थान पर गंगा के तट के किनारे ईंट का एक पक्का किला था । इलाहाबाद सरकार के अन्तर्गत ही सिकन्दरपुर भी था । कन्तिर ﴾ कन्तर ﴿ में गंगा तट पर पत्थर का किला था । केवाई तथा हादियाबास भी इलाहाबाद सरकार के अन्तर्गत थे । खैरागढ़ में पहाडी पर पत्थर का किला निर्मित किया गया था । मह अलबन्द में भी पहाडी पर पत्थर के किले का निर्माण किया गया था ।[22]

- -

21• वही, पृ0 - 152

22• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 152

सरकार बनारस :

आधुनिक युग में वाराणसी के नाम से प्रसिद्ध यह नगर साधारणतया लोगों की भाषा में बनारस कहा जाता था।[23] यह बहुत बडा नगर था जो वरूणा और अस्सी नामक नदियों के मध्य स्थित था ।[24] प्राचीन काल में यह काशी के नाम से भी विख्यात था ।[25] वर्णन के अनुसार यह नगर धनुषाकार बसा हुआ था और गंगा नदी प्रत्यंचा की भाँति बहती थी । प्राचीन काल में बनारस में एक मन्दिर था जिसकी परिक्रमा लोग काबा की भाँति करते थे और मुसलमानों की हज की यात्रा के समान ही यहाँ आकर हिन्दू सम्प्रदाय

23· मोरलैण्ड-, पृ0 - 208

24· आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 -151

25· वही ।

के लोग धार्मिक कृत्य सम्पन्न करते थे । बनारस प्राचीन काल से ही विद्या अर्जन का प्रमुख केन्द्र रहा है । यहाँ विद्यार्थी सुदूर क्षेत्रों से आकर शिक्षा प्राप्त करते थे ।[26]

सरकार बनारस में 177 परगने थे । इनका कुल राजस्व 21 करोड़ 24 लाख 27 हजार और 419 जब्ती थे अर्थात वहाँ पर फसलों से खास दर पर मालगुजारी की जाती थी । बनारस सरकार की नापनी हुई भूमि 3968018 बीघा और 3 विस्वा थी । बनारस सरकार की माल - गुजारी 20,39,71,224 दाम पर थी । यहाँ के 46 परगने नगदी थे अर्थात यहाँ पर सामान्य दर से मालगुजारी ली जाती थी । इन परगनों की मालगुजारी 94,56,595 दाम थी । इन परगनों का स्यूरगाल 116547 दाम था । बनारस सरकार में प्रशासनिक व्यवस्था को सुदृढ़

- -

26• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 151

रखने के लिए सेना की विभिन्न टुकड़िया तैयार की गयी थीं । बनारस सरकार की सेवा में 11375 सवार, 237870 पैदल सिपाही और 323 हाथी थे ।[27]

बनारस शर्की पूर्वी सरकार में । दस्तूर 8 महल 136869 बीघा 12 विस्वा भूमि, 8869312 दाम नादी, 338184 दाम सुयूरगाल, विभिन्न जातियाँ 830 सवार और 8400 पैदल सिपाही थे । बनारस शर्की पूर्वी सरकार में अफराद, बयरलिसी, पन्दरहा, कसवार और हरदुआ भी थे । बनारस में एक हवेली और कटेहर में ईंट का एक पक्का किला निर्मित्त किया गया था ।

सरकार जौनपुर :

जौनपुर[28] के प्रमुख सुल्तानों में सुल्तानुशर्क ने पाँच वर्ष

27• आइने अकबरी, खण्ड- 3 पृ0 - 151

28• मोरलैण्ड, पृ0 - 126

छ: माह तक शासन किया ।[29] इसके पश्चात मुबारक शाह ने एक वर्ष और कुछ समय तक शासन किया ।[30] मुबारक शाह के पश्चात सुल्तान इब्राहिम ने सर्वाधिक लम्बे समय तक शासन किया । सुल्तान इब्राहिम का शासन काल लगभग चालीस वर्ष तक रहा ।[31] इसके पश्चात सुल्तान महमूद ने लगभग 21 वर्ष तक शासन किया ।[32] सुल्तान महमूद के पश्चात मुहम्मदशाह ने लगभग पाँच माह तक शासन का कार्यभार सम्भाला ।[33] अन्त में हुसैन ने उन्नीस वर्ष तक जौनपुर पर शासन किया ।[34]

29• याहिया बिन अहमद, तारीखे मुबारकशाही, पृ0-159, तबकाते अकबरी, भाग-1, पृ0 -257, तथा फरिश्ता, गुलशने इब्राहिमी, पृ0-304

30• तबकाते अकबरी, पृ0 - 274

31• मुहम्मद जकी, तारीखे महोम्मदी, पृ0 - 427

32• तबकाते अकबरी, पृ0-532, मीरातुल इसरार, फोलियो 541 अ तथा फरिश्ता , जिल्द-2, पृ0- 308

33• तबकाते अकबरी, पृ0-204, तारीखे फरिश्ता, पृ0-309, नेल्सन राइट, कैटलाग आफ दि क्वायन्स इन दइण्डियन म्यूजियम कलकत्ता, जि0-2 पृ0 - 164

34• डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर, पृ0-164, तथा ट्वाइलाइट, फुटनोट-111 पृ0 - 151

इस प्रकार इन छ: सुल्तानों ने जौनपुर पर लगभग 98 वर्ष तक शासन किया और जौनपुर साम्राज्य को प्रगति के पथ पर अग्रसर किया ।

पहले जौनपुर सूबा दिल्ली के सुल्तानों के अधीन था।[35] जब सुल्तान महमूद बिन सुलतान मुहम्मद बिन सुल्तान फीरोजशाह दिल्ली का सम्राट बना तो उसने मलिक सरवर नामक एवं नंपुसक को, जिसको उसके पूर्ववर्ती सुलतान ने " ख्वाजये - जहाँ " की उपाधि से विभूषित किया था,[36] को सुल्तानुश्शर्क की उपाधि प्रदान की और जौनपुर का शासक उसे बनाया ।[37] उसके देहान्त के बाद उसका दत्तक पुत्र मुबारक करनफूल राज्य के सरदारों की सहायता से गद्दी पर बैठा ।[38] तथा अपने नाम का खुत्बा और सिक्का जारी किया ।[39] जब मल्लू खाँ के पास यह

- -

35• अफीफ ,तारीखे फीरोजशाही,पृ0-138,तथा तारीखे मुबारक शाही, पृ0 - 126 से 128

36• निजामुद्दीन अहमद, तबकाते अकबरी, पृ0 - 273

37• वही

38• वही, पृ0 - 274, तथा तारीखे मुबारकशाही, पृ0 - 169

39• हफ्ते मुल्कन,पृ0-112,तथा मोहम्मद सादिक बिन मुहम्मद सोलह

समाचार पहुँचा तब उसने सेना एकत्र करके युद्ध के लिए दिल्ली से प्रस्थान किया [40] और गंगा के तट पर डेरा लगाया । [41] यह सूचना पाकर शर्की सुलतान ने भी भारी सेना के साथ गंगा के दूसरे किनारे पर डेरा डाला । [42] परन्तु दोनों ही सेनाएं बिना किसी परिणाम के वापस लौट गयी । [43] मुबारक शाह की मृत्यु के पश्चात उसके छोटे भाई इब्राहिम को गद्दी पर बैठाया गया । [44] इब्राहिम के काल में जौनपुर राज्य ने निरन्तर प्रगति की । शिक्षा, कृषि, धर्म, व्यापार, वाणिज्य आदि सभी क्षेत्रों में जौनपुर राज्य ने इब्राहिम के ही काल में हिन्दुस्तान विकास किया । इब्राहिम के ही काल में हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध ज्ञानी काजी शहाबुद्दीन ने अपने धार्मिक

40• तबकाते अकबरी, पृ0-274, तथा तारीखे मुबारक शाही, पृ0-170

41• तबकाते अकबरी, पृ0 - 274

42• गुलशने इब्राहिमी, पृ0-304, तारीखे मुबारकशाही, पृ0-170

43• वही

44• तबकाते अकबरी, पृ0-274, गुलशने इब्राहिमी, पृ0- 305

कृत्यों से जौनपुर राज्य को गौरवान्वित किया ।[45] इब्राहिम के प्राणांत के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र भीखन खाँ सुल्तान महमूद के नाम से गद्दी पर बैठा । अपने अलोकप्रिय कार्यों के कारण उसे शीघ्र ही सिंहासन से उतार दिया गया । उसके पश्चात उसका भाई हुसेन सिंहासनारूढ़ हुआ।[46] उसने अच्छे कार्य किये जिसके कारणउसे लोकप्रियता प्राप्त हुई । प्रशंसा से गर्वोन्मुख हो गया और उसने सुलतान बहलोल से युद्ध किया और अन्ततः पराजित हुआ ।[47] सुलतान बहलोल ने अपने पुत्र बारबक को जौनपुर में छोड़ा और शासन उसके सुपुर्द किया ।[48] बहलोल की मृत्यु के उपरान्त

- -

45. ख्वालिये नूर, जि0 -2, पृ0 -34, तथा फरिश्ता, पृ0-306

46. तबकाते अकबरी, पृ0 - 279 तथा गुलशने इब्राहिमी, पृ0 - 307

47. सलातीने अफगाना, पृ0-10, 11, मौल्वी खैरुद्दीन, जौनपुर नामा, फो0 - 5 ब,

48. अब्दुल्ला, तारीखे दाउदी, फो0-20अ, ख्वाजा नियामतुल्ला, मखजन

दिल्ली का सिंहासन सुल्तान सिकन्दर के हाथों में केन्द्रित हुआ । बारबक के सहयोग से सुलतान हुसैन ने सेना एकत्र की और दिल्ली के विरुद्ध कई प्रयास किये, परन्तु वह सफल न हो सका । अन्त में हुसैन शाह शर्की वंश का अन्त हो गया ।[49]

उस समय जौनपुर शुमाली (उत्तरी) सरकार में 2 दस्तूर, 41 महल, 870265 बीघा 4 विस्वा भूमि, 56394107 दाम नक्दी, 4717654 दाम स्यूरगाल, विभिन्न जातियाँ, सेना में 915 सवार और 36000 पैदल सिपाही थे ।[50] अल्दीमऊ, आंलो, बिहतरी, भदाँव, तिलहवी, चाँदीपुर, बडहर, चाँदा, चिरैयाकोट, चकेसर, खासपुर, टाँडा, खानपुर, देवगाँव, रारी, संझौली, सगडी, सुरहुरपुर, शादियाबाद, जफराबाद, करियात मित्तू, करियात दोस्तपुर, करियात मेंदा, करियात सेवथा, कोला, घिसवा, घोसी, गढवारा, कौड़िया, गोपालपुर, केराकत,

---

49. आइने अकबरी, पृ0- 159 तथा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर पृ0 - 164

50. आइने अकबरी, पृ0 - 153

मोहम्मदाबाद, मेंगरा, मंझौरा, पुऊ, निजामाबाद, नेगुन, नाथूपुर आदि जौनपुर सरकार के अन्तर्गत थे। जौनपुर सरकार में खरीद सराह के तट पर ईंट का किला, सिकन्दरपुर में ईंट का पक्का किला और मड़ियाहूँ में ईंट का किला निर्मित्त किया गया था।[51]

गाजीपुर शर्की (पूर्वी) सरकार :

गाजीपुर शर्की (पूर्वी) सरकार में। दस्तूर[52] 19 महल 288770 बीघा[53] 7 बिस्वा जमीन, राजस्व 13431308 दाम, नक्दी 131824 दाम स्यूरमाल, विभिन्न जातियाँ, 310 सवार और 16650 पैदल थे।[54]

- -

51• आइने अकबरी, पृ0- 153, 154, 155

52• मोरलैण्ड, रायल एशियाटिक सोसायटी (जर्नल), 1918, पृ0-12, 13

53• मोरलैण्ड, पृ0 - 120

54• आइने अकबरी, भाग-3, पृ0 - 152

गाजीपुर शर्की (पूर्वी) सरकार के अन्तर्गत बलिया, पचेहर, बिल्हाबास, बहरिया बाद, बहराइच, चौसा, देहबा, सैयदपुर नक्दी, जहूराबाद, गाजीपुर, करियाल पटनी, कोपाहीत, गन्डा (गदा) करेन्दा, लखनेसर, मदन बनारस, मुहम्मदाबाद, और परहारबारी थे। जहूराबाद में हवेली थी।[55]

मानिकपुर सरकार :

मानिकपुर सरकार के अन्तर्गत 2 दस्तूरूल अमल, 14 महल, 666222 बीघा 5 विस्वा जमीन, 39916527 दाम नक्दी, 8446173 दाम स्यूरगाल, विभिन्न जातियाँ, 2040 सवार, 2900 पैदल थे।[56] इसके अन्तर्गत अलोल, तेलहन्डी आदि थे। अवल में ईंट का एक किला जलालपुर, बलकार में ईंट का एक किला, जायस में ईंट का एक किला,

---

55. वही, पृ० - 152- 153

56. आइने अकबरी, पृ० - 155

डलमऊ में गंगा तट पर ईंट का एक किला था ।[57] रायबरेली में सईनदी, के तटपर ईंट का एक किला, सलोन में ईंट का एक किला, काथौर में ईंट का एक किला, मानिकपुर में हवेली के साथ गंगा तट पर ईंट का एक किला था । इसके अलावा मानिकपुर सरकार में करियात करारा, करियात पयावाह और नसीराबाद भी अधीन थे ।[58]

जनूबी ﴾दक्षिणी﴿ सरकार :

जनूबी दक्षिणी सरकार में ।। महल, नापी हुयी भूमि 508273 बीघा 12 विस्वा, 23839470 दाम नक्दी, 614580 दाम सुयूरगाल , विभिन्न जातियाँ, 1210 सवार तथा 112 हाँथी और 18100 पैदल थे ।[59]

57• वही

58• वही, पृ0- 156

59• वही, पृ0 - 157

जनूबी सरकार के अन्तर्गत झगवासी में ईंट का पक्का किला, अजय गढ में पहाड़ पर पत्थर का किला, सिहौंदा में केन नदी के तट पर पत्थर का किला, सिकौनी में ईंट का पक्का किला, शादीपुर में पत्थर का किला, रसन, कालिंजर में हवेली, बरेला में ईंट का पक्का किला, महोबा में पत्थर का किला और कस्बे के दोनों तरफ ऊँची पहाड़ियाँ, मोदहा में पत्थर का किला थे।[60]

जनूबी चनाडा (दक्षिणी चुनार) सरकार :

दक्षिणी चुनार सरकार में । दस्तूरूल अमल 13 महल, 160270 बीघा 8 बिस्वा जमीन, 5810654 दाम नकदी, 109065 दाम सुयूरगाल, 5200 सवार और 18000 पैदल थे।[61]

जनूबी चनाडा सरकार के अन्तर्गत अबीरवारा, मोली, (मुड़ली) बढौत, (बढोल), टाँडा, झूस, राहूपुर, नदी के इस किनारे के गाँव

60• वही,

61• आइनेअकबरी, पृ0- 156, तथा जैरेट, पृ0- 158

मंझवारा, महायच, सहवारी, महवई थे, चनाडा में हवेली के साथ पत्थर

का एक किला भी था ।[62]

जनूबी दक्षिणी में भथगोरा सरकार के अन्तर्गत 39 महल

7262780 नक्दी, 4304 सवार, 200 हाथी, तथा 57000 पैदल थे ।

गर्बी (पश्चिमी) कडा सरकार :

गर्बी कड़ा सरकार के अन्तर्गत 1 दस्तूर, 12 महल 447556

बीघा 19 बिस्वा भूमि, 22082048 दाम " नक्दी ",[63] 1498862दाम

"सुयूरगाल"[64], विभिन्न जातियां, 390 सवार, और 8700 पैदल थे ।[65]

62• आइने अकबरी, पृ० - 156

63• मोरलैण्ड, पृ०- 133

64• आईन, भाग-1, पृ०= 301

65• आइने अकबरी, भाग -3, पृ० - 158, 159 तथा मोरलैण्ड, पृ० - 37

गर्वी कड़ा सरकार के अन्तर्गत, ऐछी, अथर्बन , अपास्य, हवेली, कड़ा, शदी, शहर (बलदह), कड़ा में गंगा तट पर किला था, जिसका निचला भाग पत्थर का और ऊपरी भाग ईंट का था। करारी में जमुना के किनारे ईंट का मजबूत पक्का किला था। कोतला, कोनरा उर्फ कोसों में ईंट का पक्का किला था। फतेहपुर हसवा हतगाँव और हंसवा गर्वी (पश्चिमी)कड़ा सरकार के अन्तर्गत अन्य स्थान थे।[66]

गर्वी (पश्चिमी (कुर्रा (कोड़ा (सरकार :

गर्वी कुरा सरकार के अन्तर्गत 3 दस्तूर 9 महल , 341170 बीघा 10 विस्वा जमीन, 17397567 दाम, 469350 सयूरगाल, विभिन्न जातियाँ, 500 सवार, 15000 पैदल तथा 10 हाथी थे।[67]

66• आइने अकबरी, भाग -3,पृ0 - 158, 159

67• आइने अकबरी, पृ0 - 158

गर्वी कुर्रा सरकार में जाजमऊ में गंगा तट पर किला, कुर्रा में रिन्द नदी के तट पर ईटों का पक्का किला तथा कैमी नामकर गाँव जहाँ फूल और रंग पैदा होते थे, घाटमपुर, मझावन, कोरिया, गुनेर, किरनपुर किनार और मुहसिनपुर थे।[68]

गोरखपुर सकरार :

अवध सूबे के अन्तर्गत पूर्वी उत्तर प्रदेश में गोरखपुर सरकार थी।[69] गोरखपुर सरकार की प्रमुख नदियाँ सरू ‡ सरयू ‡, घाघर ‡ घाघरा ‡ और राप्ती है। यहाँ कृषि उन्नत अवस्था में थी विशेषकर सुखदास, मधकर, तथा झनवाँ नामक धान, जो सफेदी, कोमलता, सुगन्ध और स्वाद में अनुपम होता था। भाँति - भाँति के फूल, फल और

68• वही

69• मोरलैण्ड, पृ0 - 37

शिकार होते थे । गर्मी और शीत दोनों ऋतु लगभग शीतोष्ण थी ।[70]

गोरखपुर सरकार में । दस्तूर 24 महल, 244283 बीघा 13 विस्वा भूमि, 11926790 दाम नक्दी 51235 दाम स्यूरगाल, 1010 सवार, 2200 पैदल और विभिन्न जातियाँ थीं ।[71]

रिहली या सदौली, उन हौला, बामनपारा, भावपारा गोरखपुर सरकार के अन्तर्गत थे । इसके अलावा अतरौला में ईंटका पक्का किला, विनायकपुर में ईंट का पक्का किला, तेलपुर में ईंट का पक्का किला, चिलूपारा और दयिापार में ईंट का पक्का किला, देवापारा और कोतला में दो महल, रसूलपुर और घोसी में दो महल तथा रामगढ़ और गौरी में दो महल गोरखपुर सरकार के अन्तर्गत थे । गोरखपुर में हवेली

- -

70• आइने अकबरी, भाग -3, पृ0 - 160

71• वही, पृ0 - 162, 163

के साथ राप्ती नदी के तट पर ईट का पक्का किला था ।[72]

कटिहला, कहलापार तथा महोली में ईट का पक्का किला था। मगहर तथा रतनपुर में दो महल और ईट का पक्का किला था । मडवा भी गोरखपुर सरकार के अन्तर्गत था ।[73]

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र की प्रमुख फसलें :

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र की " रवी "[74] की प्रमुख फसलों में गेहूँ[75], काबुली चना,[76] देशी चना[77] जौ हरा, जौ (खोयद) जो

72• वही, पृ0-162,163

73• आइने अकबरी, भाग-3, पृ0 - 162,163

74• मोरलैण्ड, पृ0-116

75• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0-74, तथा जैरेट, पृ0-60 तथा थामस, क्रानिकल आफ पठान किंग्स आफ दिल्ली, पृ0-424

76• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0-74 तथा जैरेट, पृ0-60 तथा मोरलैण्ड पृ0- 113,114

77• आइने अकबरी, खा0-3, पृ0-74, तथा मोरलैण्ड-पृ0-113,114

बाली में नहीं है, मसूर, मुअसफर का बीज, पोस्ता, तरकारी, अलसी, सरसों, अर्जल, मटर, गाजर , प्याज, मेथी, विलायती खरबूजा, देशी खरबूजा, जीरा, काला जीरा, कूर धान, अजवाइन, इत्यादि थीं।[78]

" खरीफ"[79] की प्रमुख फसलों में पौडा, साधारण गन्ना, काला धान, आलू, कपास, मोंठ, अर्जन, नील, मेंहदी, सन, तरकारी, पान, सिंघाडा, जुआर[80], केंरी, विलायती खरबूजा "तिल, मूँग, हल्दी, मूँजी, धान ,माश, गाल, तुरिया, तरबूज, लोबिया, गाजर, अरहर, लहदरा, कोदरम, मड़वा, सांवा और कुल्त थीं।[81]

- -

78• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 74

79• मोरलैण्ड- पृ0- 116

80• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0-76 तथा मोरलैण्ड-, पृ0-113, 114

81• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0 - 76

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र की प्रमुख जातियाँ :

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में पायी जाने वाली प्रमुख जातियों में राजपूत, चन्देल, ब्राहमण, कायस्थ, खन्दाल, राजपूत बिरासी, भर, रहमतुल्लाही, गहरवाल, रघुवंशी, बचगोती, सैयद, अंसारी, सिद्दीकी कोसक, कुर्मी, राजपूत, कौशिक, कायस्थ, राजपूत गौतमी, सैयद राजपूत, शेख जादा, बावरिया, तुर्कमान, खन्द, राजपूत खन्दवाल, बिसेन, गवरिया बैस, गढवाल परिहार, गोंड ६ राजपूत, गौतमी, बिसेन गवरिया, बैस, गढवाल परिहार, गोड, बागरी, फारूकी, अफगान, खरी, लोदी, राजपूत बैस, राजपूत दीक्षित, राजपूत चन्देल, अफगाने मियाना, राजपूत सूरजवंशी और सोमवंशी के अलावा अन्य जातियाँ भी निवास करती थी ।[82]

पूर्वी उत्तर प्रदेश की आर्थिक पृष्ठभूमि :

बादशाह के ध्यान देने से जैसे सोना और चाँदी

- -

82• आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0-152, 159, 162, 163

बहुत अधिक शुद्ध कर दिये गये थे । उसी प्रकार विभिन्न मुद्राएं शुद्ध और सुन्दर बनायी गयी जिससे कोषागार की शोभा बढ़ी । जिससे लोगों को सुख प्राप्त हुआ ।[83] इनमें स्वर्ण मुद्राएं, चाँदी के सिक्के तथा ताँबे के सिक्कों का प्रचलन हुआ । सोने के सिक्के चार स्थानों पर बनाये जाते थे ।चाँदी और ताँबे के सिक्के दस अन्य नगरों में ढाले जाते थे ।[84] पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में इलाहाबास ﴾ इलाहाबाद ﴿ में चाँदी के सिक्कों की ढलाई होती थी ।[85] जबकि 28 नगरों में केवल ताँबे के सिक्के ढाले जाते थे । पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में बनारस, जौनपुर और गोरखपुर में ताँबे के सिक्कों की ढलाई होती थी ।[86] टकसाल की समृद्धि से कोष भरता था और इससे प्रत्येक कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न होता था । नगर

83• आइने अकबरी,खण्ड-1,पृ0 - 38

84• वही,पृ0-41,तथा परमेश्वरी लाल गुप्ता,क्वायन्स पृ0-94,95 तथा ब्राउन, क्वायन्स आफ इण्डिया, पृ0- 80

85• आइने अकबरी, खण्ड-1,पृ0-41, तथा होदीवाला,पृ0-125,तथा हरिशंकर श्रीवास्तव,पृ0- 172

86• वही तथा हरिशंकर श्रीवास्तव,मुगल शासन प्रणाली,पृ0-169

तथा गाँव दोनों के निवासियों का कार्य द्रव्य से पूरा होता था। मनुष्य अपनी इच्छानुसार उसका उपयोग करता था।[87] टकसाल के सहायक दरोगा और सैरफी (सर्राफ या ऋण देने वाला) थे।[88] इसके अलावा खोटा सोना खरा करने की विधि, चाँदी को शुद्ध करने की विधि, चाँदी को सोने से अलग करने की क्रिया, राख से चाँदी निकालने की विधि भी राज्य की आर्थिक समृद्धि में सहायता करते थे। विभिन्न कालों में सिक्कों के मूल्य परिवर्तित होते रहे।[89]

- -

87• आइने अकबरी, खण्ड-1, पृ0 - 29

88• वही, पृ0-30, तथा होदी वाला, स्टडीज इन इण्डो मुस्लिम हिस्ट्री, पृ0236, 244, तथा ए0एस0श्रीवास्तव, अकबर द ग्रेट, भाग-2 पृ0 - 207-209 तथा हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 170

89• आइने अकबरी, जैरेट, भाग-2, पृ0-25, तथा फास्टर, अर्ली ट्रैवल्स, पृ0- 101 तथा इरफान हबीब, ऐग्रेरियन, सिस्टिम, पृ0-364-392

वस्त्र :

इस काल में तरह - तरह के वस्त्रों का निर्माण होता था । योग्य कारीगर भारत आये तथा कारीगरी सीखने का काम बहुत प्रचलित हो गया था । पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में इलाहाबाद में मिहिर कुल नामक वस्त्र तैयार किया जाता था ।[90] इस कपड़े की बुनावट विशेष कर मऊ, जलालाबाद एवं बनारस में होती थी ।[91] जौन तथा जफरवाल नाम क स्थानों पर उनी कपड़े की बुनावट का कार्य होता था ।[92]

90• आइने अकबरी, खं0- 1, पृ0- 96

91• वही, खण्ड-3, पृ0 - 151

92• वही

पूर्वी उत्तर प्रदेश का राजनीतिक इतिहास

(1707 से 1761 ई0 तक)

अठारहवीं शताब्दी में औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य का क्रमिक पतन आरम्भ हो गया। इसका प्रमुख कारण 1707 ई0 के बाद के सम्राटों का विलासी तथा कमजोर होना था। केन्द्रीय प्रशासन दरबार की दलगत राजनीति, अमीरों, की महत्वाकांक्षाओं, राजपूताना और पंजाबकी समस्या से ग्रसित था। मुगल प्रशासन मे बहुत कम सूबेदार ऐसे थे जो दायित्वों के निर्वाह में संलग्न थे अन्यथा शेष ने दरबारी राजनीति में अधिक रूचि ली। कुछ मुगल अमीरों ने अपनी विद्रोही भावना का लाभ उठाकर स्वतन्त्र राज्य एवं रियासतें स्थापित कर लीं। सन् 1722 ई0 में सआदत खाँ बुरहानुकूल मुल्क ने अवध की सूबेदारी प्राप्त की।[1] उसकी आकांक्षा सदैव दरबार में सर्वोच्चतास्थापित करने की रही। सआदत

---

1. शाहनवाज खाँ, मआसिर-उल- उमरा, खण्ड-1, (एच0बेवरीज कृत अंग्रेजी अनुवाद) पृ0 - 465

सआदत खाँ ने अवध को वंशानुगत शासन का सूबा बनाने का प्रयास किया और उसने मुर्तजा खाँ नामक अमीर की बनारस, चुनार, आजमगढ़, गाजीपुर और जौनपुर की सरकारें इजारे पर ले लीं।[2] इस कारण इलाहाबाद सूबे के अधिकांश क्षेत्रों पर उसका अधिकार हो गया। इस अधिकार से यह स्पष्ट होता है, कि, अब सआदत खाँ को इस भूमि पर कृषि में संलग्न शक्तिशाली जमीदारों को नियन्त्रित करना था ताकि वे भूराजस्व की निर्धारित राशि निश्चित समय पर वसूल करके, केन्द्र को प्रेषित कर सकें। इस कारण से अवध के नवाबों ने भी जमीदारों पर नियन्त्रण करने हेतु सैनिक अभियान चलाया था। जमीदारों पर फलस्वरूप इस काल में नवाबों और जमींदारों के मध्य सैनिक संघर्ष आरम्भ हो गया। इस समय के नवाबों ने मुगल दरबार में भी रूचि थी जिसके कारण उनकी पकड़ जमीदारों पर कमजोर पड गयी। जमीदारों ने स्थिति का लाभ उठाकर राजनीतिक शून्य व अपनी बढ़ती शक्ति का लाभ उठाकर स्वायत्त राज्य बनाने आरम्भ

2• बलवन्त नामा, पृ0 – 2,8, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, अवध के प्रथम दो नवाब, पृ0 – 47

कर दिये । जमींदारों ने नवाबों के शत्रुओं के विरुद्ध षडयन्त्र में भी हिस्सा लिया और नवाबों के शत्रुओं से भी समझौते किये और उनकी शरण ली । 1750 ई0 के बाद तो अंग्रेजों ने भी पूर्वी उत्तर प्रदेश के इस भू भाग में रुचि लेनी प्रारम्भ कर दी । अंग्रेजी सत्ता ने भी अठारहवीं शताब्दी के सातवें - आठवें दशक में ज़मीदारों पर नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास किया । जिसके कारण अंग्रेजी सेनाओं और जमींदारों में संघर्ष आरम्भ हो गया । इसके परिणामस्वरूप 18वीं शताब्दी में जमीदारों का अवध के नवाब तथा अंग्रेजी सत्ता से संघर्ष आरम्भ हो गया ।

1707 ई0 से 1722 ई0 के मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजनीतिक गतिविधियाँ

मुगल सम्राट औरंगजेब के दक्षिण चले जाने और वहाँ के युद्धों में व्यस्त रहने के कारणउत्तरी भारत में राजनीतिक वातावरण अस्थिर हो गया ।

छोटे - छोटे शासकों में शासक के प्रति भय कम हो गया तथा वे मुगल साम्राज्य के नियमों की अवहेलना करने लगे । पूर्वी उत्तर प्रदेश के विभिन्न मुगल सरदारों फौजदारों और शक्तिशाली जमींदारों ने भी विद्रोही परम्परा को अपनाया । मुगल सम्राट बहादुर शाह प्रथम, फर्रुख सियर और मुहम्मद शाह के समय में स्थिति निरन्तर बिगड़ती गयी । 1703 ई0 से 1722 ई0 के मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश के सरदारों और जमींदारों के निम्न प्रमुख विद्रोह किये -

जौनपुर सरकार में महाबत का विद्रोह (1703 ई)

अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ में जौनपुर में महावत नामक जमींदार ने विद्रोह किया । औरंगजेब ने इस सन्दर्भ में इलाहाबाद के सूबेदार सिपहदार खाँ को इस विद्रोह को कुलचने का आदेश दिया । मुगल सम्राट औरंगजेब ने महाबत की जमींदारी को छीनकर उसे सांवलदास के पुत्र अटल सिंह को प्रदान किया तथा उसे 500 जात और 50 सवार का

मनसब भी प्रदान किया ।[3] महाबत के विरूद्ध सफल अभियान करने पर सिपहदार खाँ के मनसब में 500 सवार की वृद्धि की गयी ।[4]

3• अखबारात (आर०ए०एस०सी०) 47 खण्ड48 इयर्स, वाल्यूम , 12 (प० - 253 ए०, वाल्यूम 13, पृ० - 48 बी उद्धत एस०एन०सिन्हा सूबा आफ इलाहाबाद, पृ० - 81 । सिन्हा के अनुसार, महाबत अजमत खाँ का पुत्र था और वह निजामाबाद का जमीदार था। किन्तु शाही आदेश के क्रियान्वयन न हो पाने के कारण अटल सिंह महाबत की जमीदारी पर अधिकार न कर सका । महाबत जमीदार बना रहा और 1715 ई० में उसने पुन: विद्रोह किया ।

4• साकी मुस्तैद खाँ, मआसिर, ए- आलमगीरी (जे०एन० सरकार कृत अंग्रेजी अनुवाद (1947, पृ० - 286, 287 , शाहनवाज खाँ, मआसिर- उल - उमरा (एच० बेवरीज कृत अंग्रेजी अनुवाद (खण्ड-1 पृ० - 626•

सरकार बनारस में विद्रोह :

मुगल सम्राट बहादुरशाह के समय में प्रशासन अव्यवस्थित हो गया । इसका लाभ, उठाकर पूर्वी जिलों में भी विद्रोह हुए । स्थानीय सरदारों और जमींदारों ने स्थिति का लाभ उठाकर भू राजस्व देने से इनकार कर दिया । इन स्थानीय शासकों ने लूटपाट की प्रक्रिया भी आरम्भ कर दी । परगना कसबार में स्थित जखिनी के शक्तिशाली जमींदारों ने इस भूभाग ने अपने पूर्वजों की भाँति स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने के लिए बनारस सरकार से मुगल अधिकारियों को निकाल दियाऔर इस क्षेत्र में लूटपाट आरम्भ कर दी । अन्त में सम्राट फर्रुख सियर के समय में इन विद्रोहियों के विरुद्ध शाही सेना ने प्रयाण किया और विद्रोह को पूर्णतया कुचल दिया गया ।[5]

1715 ई0 में निजामाबाद (सरकार जौनपुर) में महाबत खाँ का विद्रोह

पूर्वी उत्तर प्रदेश में विद्रोहों की परम्परा आरम्भ हो चुकी

5· बलवन्त नामा, पृ0 - 1, 2

थी । इसी क्रम में जनवरी 1715 ई0 में जौनपुर सरकार में स्थित परगना निजामाबाद के शक्तिशाली जमींदार महाबत खाँ ने बिगड़ती राजनीतिक स्थितियों का लाभ उठाते हुए मुगल शासक के विरूद्ध विद्रोह किया । महावत खाँ ने कुचलकर उसे शान्तिपूर्वक रहने के लिए बाध्य किया । इस सन्दर्भ में जौनपुर के फौजदार चिनकिलीच खाँ के मध्य विवाद भी हो गया ।

क्योंकि चिनकिलीच खाँ, महावत खाँ का समर्थक था । परन्तु इसके बाद महाबत खाँ के सरबुलन्द खाँ से पारिवारिक सम्बन्ध स्थापित हो गया । महाबत खाँ ने सरबुलन्द खाँ के पुत्र से अपनी पुत्री का विवाह किया ।[6] इस पारिवारिक सम्बन्ध के कारण महाबत खाँ को आगे चलकर

- -

6• अखबारात, खण्ड- 12, भाग -1, पृ0 - 223, 2 सफर 1127 हिजरी बृहस्पतिवार (27 जनवरी 1715 ई0) पृ0 - 268 , 25 सफर 1127, हिजरी, शनिवार (19 फरवरी, 1715 ई0) उद्धृत वीरेन्द्र कुमार वर्मा, सूबा आफ इलाहाबाद 1707-1765 (अप्रेकाशित शोध प्रबन्ध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय , 1969)

अत्यधिक राजनीतिक लाभ हुआ ।[7] इसके पश्चात सरबुलन्द खाँ, 20 जनवरी 1715 ई० को इलाहाबाद लौट आया ।[8] मुगल सम्राट फर्रुखसियार ने सर बुलन्द खाँ की सफलताओं से प्रेरित होकर उसे 6500 जात और 5000 सवार का मनसब प्रदान किया ।[9]

- -

7. सैय्यद अमीर अली रिजवी, सरगुजश्त-ए- राजगान-ए-आजमगढ, प0 - 14 बी - 15ए, तारीख - ए - आजमगढ, पृ0- 20 बी, 21 ए, एफ0एच0फिशर, स्टैटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव.... खण्ड-13, भाग- 1, आजमगढ, पृ0 - 136, एच0आर0नेविल ,डिस्ट्रिक्ट गजेटियर बलिया,पृ0-149,एच0आर0नेविल, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आजमगढ,पृ0- 170, बीरेन्द्र कुमार वर्मा, सूबा आफ इलाहाबाद, पृ0 - 47

8. अखबारात, वाल्यूम,12, भाग-11, पृ0-223,.268 उद्धृत वीरेन्द्र वर्मा, सूबा आफ, इलाहाबाद । पृ0 - 47

9. अखबारात, वाल्यूम,14, पार्ट -1, पृ0 - 48, 6 खी, 11,1127 हिजरी ,बृहस्पतिवार0 31 मार्च 1715 ई0 ।

निजामाबाद ऽ सरकार जौनपुर में महाबत खाँ का पुन: विद्रोह

ऽ सितम्बर 1716 ई0 जून 1717 ई0 ऽ

परगना निजामाबाद के महावत खाँ ने सितम्बर 1716 ई0 में पुन: विद्रोह किया और गाजीपुर सरकार के विभिन्न भू - भागों पर अधिकार कर लिया । उसने एक बड़ी सेना एकत्रित कर ली । 16 शब्बात 1128 हिजरी शनिवार ऽ 22 सितम्बर 1716 ई0 ऽ को इलाहाबाद के सूबेदार छबीलाराम तथा जौनपुर के फौजदार गिरधर बहादुर को विद्रोहियों के विरुद्ध तत्काल कदम उठाने का आदेश मुगल शासक द्वारा दिया गया ।[10]

जौनपुर के फौजदार गिरधर बहादुर द्वारा महाबत को पराजित न कर पाने के कारण राजा छबीलाराम नवम्बर 1715 ई0 में स्वयं युद्ध के लिए तत्पर हुआ । महाबत खाँ ने भयवश अपने परिवार

10• अखबारात वाल्यूम 16, पृ0-96, इस विद्रोह में महाबतखाँ की सहायता विहार के प्रसिद्ध विद्रोही कुंवर धीर सिंह का पुत्र सुदिस्ठ नारायण कर रहा था । उद्धृत वीरेन्द्र कुमार वर्मा, सूबा आफ इलाहाबाद ••••पृ0- 53

को सुरक्षित स्थान पर भेज दिया । यद्यपि महाबत खाँ शक्ति, धन, बल में कम नहीं था फिर भी छबीलाराम ने उसे पराजित करके पलायन के लिए बाध्य कर दिया ।[11]

लेकिन इस सैन्य सफलता के बाद भी महाबत खाँ की शक्ति शेष थी । इसलिए जौनपुर के फौजदार गिरधर बहादुर ने उसके विरूद्ध अभियान जारी रखा । गिरधर बहादुर ने 18 से 20 अप्रैल 1717 ई0 तक आजमगढ़ के किले का घेरा डाला और उस पर अधिकार कर लिया । किन्तु विद्रोही पुन: पलायीत हो गये ।[12] अपने 6 - 7 हजार सवारों के साथ महाबत खाँ ने आजमगढ़ के किले से भागकर घाघरा नदी आसपास

- -

11• अखबारात ,वाल्यूम - 17, पार्ट -11, पृ0 - 150,23, जिलहिज्ज, 1128 हिजरी (28 नवम्बर 1716 ई0 (उद्धृत बीरेन्द्र कुमार वर्मा , सूबा आफ इलाहाबाद , पृ0 - 53

12• अखबारात ,वाल्यूम -21, पृ 0- 2,4,11 जमाद , 1129 हिजरी, रविवार, (12 मई 1717 ई 0)

के घने जंगलों में शरण ली । तत्पश्चात पीछा किये जाने पर अवध की सरकार गोरखपुर के सीमावर्ती भूभाग में महाबत खाँ ने शरण ली । मुगल सेना ने लगभग 200 गढ़ियों को नष्ट कर दिया तथा दस लाख रूपये की आय की विद्रोहियों की जागीर पर अधिकार कर लिया ।[13] इन परिस्थितियों से विवश होकर महाबत खाँ ने छापा मार युद्ध प्रणाली को अपनाया ।[14] इस नवीन परिस्थितियों में भी सरबुलन्द खाँ ने पारिवारिक सम्बन्धों के कारण विद्रोही महाबत खाँ को जौनपुर का फौजदार नियुक्त करने के लिए मुगल दरबार में संस्तुति की ।[15] परन्तु स्वाभाविक रूप से इसे मुगल दरबार ने नामंजूर कर दिया । इस घटना से उत्साहित होकर महाबत खाँ ने सेना एकत्रित करके पुन: शाही सेना पर आक्रमण आरम्भ कर दिये । किन्तु इस समय राजा छबीलाराम ने अपने भतीजे की सहायता से पच्चीस दिनों तक महाबत खाँ के विरूद्ध सैनिक अभियान चलाया और

- -

13• सैय्यद अजमुल रजा रिजवी, ए स्टडी आफ जमींदार्स आफ इस्टर्न उत्तर प्रदेश इन 18वीं सेन्चुरी (शोधप्रबन्ध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय पृ0- 324

14• वीरेन्द्र कुमार वर्मा, सूबा आफ इलाहाबाद •••पृ0 - 54

15• वही

युद्ध के दौरान विद्रोहियों को बड़ी मात्रा में रसद छोड़कर भागने पर विवश कर दिया । जंगलों में घेराबंदी करके महाबत खाँ के बड़े भाई इकराम खाँ को घेरे में ले लिया गया । घमासान युद्ध में छबीलाराम सफल हुआ परन्तु इकराम भागने में सफल हो गया । विभिन्न प्रयत्नों के बाद भी महाबत खाँ को सफलता प्राप्त नहीं हुई । शाही सेनाओं ने पूरे क्षेत्र पर नियन्त्रण स्थापित कर लिया और जून 1717 ई० में राजा छबीलाराम ने युद्ध में प्राप्त सम्पत्ति में से 119 तोला सोना वजीर खाँ के माध्यम से मुगल सम्राट के पास भेंट स्वरूप भेजा ।[16]

16• अखबारात, वाल्यूम-21, पृ0-20, 18, रजब 1129 हिजरी, सोमवार (17 जून, 1717 ई0) उद्धत वीरेन्द्र कुमार वर्मा, सूबा आफ इलाहाबाद••• पृ0-55, इन्तजाम-ए- राज -ए आजमगढ़ के लेखक गिरधारी ने आजमगढ़ के राजा अजमत खाँ से राजस्व एकत्रित करने हेतु इलाहाबाद के नाजिम छबीला राम के आने , राजा अजमत खाँ द्वारा उसे हरबंसपुर के किले में उसे घेर लेने, छबीलाराम की सहायता के लिए इलाहाबाद के सूबेदार बेनी बहादुर के आने तथा अजमत खाँ के मारे जाने का वर्णन किया है । गिरधारी इन्तजाम

- -

-ए- आजमगढ , पृ0 - 46 ए - 50 ए किन्तु गिरधारी का विवरण गलत है क्योंकि नवाब बेनी बहादुर नामक कोई व्यक्ति उस अवधि में इलाहाबाद का सूबेदार नहीं था । छबीला राम स्वयंइलाहाबाद का सबूेदार था । छबीला राम के पश्चात गिरधर बहादुर इलाहाबाद का सूबेदार हुआ । इस अवधि में आजमगढ का जमींदार महाबत खाँ था और जौनपुर का फौजदार गिरधर बहादुर । अतएव इलाहाबाद के सूबेदार छबीला राम से ही महाबत खाँ का सघर्ष हुआ । इस संघर्ष का विवरण गिरधारी को ठीक से ज्ञात न था । उद्धृत श्री सैयद नजमुल रजा रिजवी, था । शोध प्रबन्ध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।

सरकार गोरखपुर (सूबा अवध) में राजनीतिक गतिविधियाँ :

यद्यपि गोरखपुर सरकार के अन्तर्गत 1700 ई0 से 1722 ई0 के मध्य मुगल सत्ता के विरुद्ध कोई राजनीतिक विप्लव और अशान्ति का वातावरण नहीं रहा परन्तु मुगल प्रशासन की अयोग्यता एवं शिथिलता का लाभ उठाकर यहाँ के स्थानीय शासकों को ने सर्वाधिक स्वतन्त्रता का उपभोग किया ।[17]

अठारहवीं शताब्दी के प्रथम बाइस वर्षों में जमींदारों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई और पूर्वी उत्तर प्रदेश में जमींदार स्वतन्त्र शासक की भाँति व्यवहार करने लगे । यद्यपि यदा कदा विद्रोह करके उन्होंने

---

17. सी0ओ0जी0 (गोरखपुर) वाल्यूम - 15, फाइल - 17 सीरियल नं0 - 11, पृ0 - 93, राजबली पाण्डेय, गोरखपुर जनपद और .... पृ0 - 227 ,आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव,अवध के प्रथम दो नवाब,पृ0-35,36 ,ई0टी0एटकिंसन,स्टेटिस्टकल डिस्क्रिप्टिव ....वाल्यूम - 6, पार्ट - 11, गोरखपुर , पृ0 - 443, 444

मुगल शासकों से अपनी स्थिति का आकलन किया । इन्होंने मुगलों की भू राजस्व व्यवस्था को भी नष्ट करने के प्रयास किये । किन्तु इस काल में इलाहाबाद तथा अवध के शक्तिशाली सूबेदारों ने विशेषकर सरबुलन्द खाँ, छबीलाराम, नागर तथा गिरधर बहादुर ने सफल सैनिक अभियान द्वारा मुगल सत्ता की सर्वोच्चता को बनाए रखा ।

§ब§ 1722 ई0 से 1739 ई0 के मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजनीतिक गतिविधियाँ :

मुगल सम्राट मुहम्मदशाह ने अपने प्रारम्भिक शासन काल में मुर्तजा खाँ नामक अमीर को बनारस, चुनार, गाजीपुर, तथा जौनपुर की सरकारों के भू भाग को जागीर के रूप में प्रदान किया था ।[18] नवाब मुर्तजा खाँ ने

18· बलवन्त नामा, पृ0 - 2, किन्तु गुलाम हुसैन के अनुसार," नवाब मुर्तजा खाँ को बनारस की फौजदारी दी गयी, थी," गुलाम हुसैन खाँ, तारीख ए- बनारस, पृ0 -5, बी, 6ए, जहीरूद्दीन मलिक भी गुलाम, हुसैन खाँ के कथन को सत्य मानते हैं । जहीरूद्दीन मलिक, दि रेन आफ मुहम्मद शाह, पृ0 - 338

रूस्तम अली खाँ को जागीर की व्यवस्था हेतु नायब नियुक्त किया और उसने पाँच लाख रूपये वार्षिक राजस्व देना स्वीकार किया ।[19] सआदत खाँ शक्तिशाली सूबेदार था और उसे उस अवधि की सूबेदारी 1822 ई0 में प्राप्त हुई । उसने सात लाख रूपये वार्षिक राजस्व देने के बदले में 1728 ई0 में नवाब सआदत खाँ ने भी आठ लाख रूपये वार्षिक राजस्व के प्रतिरूप में उक्त जागीर की व्यवस्था का दायित्व मीर रूस्तम अली के हाथों में ही रहने दिया ।[20] अतः अब पूर्वी उत्तर प्रदेश का क्षेत्र 1728 ई0 में अवध के नवाब के हाथों में आ गया । अवध के नवाब ने मुगलों के प्रतिनिधि के रूप में शासन पर अपनी पकड़ बनाने का प्रयास किया । 1722 ई0 से 1739 ई0 के मध्य अवध के नवाब सआदत खाँ, बनारस सूबे के नायब मीर

19• बलवन्तनामा, पृ0-2, गुलाम हुसैन खाँ, तारीख - ए- बनारस पृ0 - 6ए ।

20• बलवन्तनामा, पृ0-8, लेखक ने सआदत खाँ को अवध तथा इलाहाबाद का सूबेदार नियुक्त किये जाने का उल्लेख किया है, जो त्रुटिपूर्ण है ।

रूस्तम अली खाँ तथा इस भू भाग के अन्य जमींदारों के मध्य पारस्परिक विवरण निम्न प्रकार से है -

1722 ई0 के बाद मुगल सत्ता पूर्णतया शिथिल हो चुकी थी। मुगल सत्ता की समस्त शक्ति अमीरों, सूबेदारों तथा जमींदारों के हाथों में केन्द्रित हो गयी थी । पूर्वी उत्तर में अब अमींदार अपनी स्वायत्त स्थिति बनाने में सफल हो गये थे और मुगल सत्ता को राजनीतिक चुनौती देने में सक्षम थे। पूर्वी उत्तर प्रदेश के भू भागों और भू राजस्व तथा अन्य राजस्व पर जमीदारों का ही अधिकार हो गया था । अत: पूर्वी उत्तर प्रदेश में मुगलों की राजनीतिक स्थिति के विवेचन के लिए जमीदारों का अध्ययन आवश्यक ही नहीं अपरिहार्य भी है ।

सरकार गोरखपुर के जमीदारों ने मुगल सत्ता की निर्बलता को आँक कर सरकारी राजस्व का भुगतान रोक दिया तथा आर्थिक राजनीतिक अराजकता की स्थिति उत्पन्न कर दी । इस स्थिति को बुटवल के राज परिवार की एक शाखा ने और भी खराब कर दिया । बंजारों की सहायता से बुटवल राजा के छोटे भाई तिलक सेन ने परगना तिलपुर

पर अधिकार करके जिले के उत्तरी भाग में बड़े पैमाने पर लूटपाट आरम्भ कर दी । इस अव्यवस्था को समाप्त करने के लिए सआदत खाँ ने 1725ई0 में सैन्य अभियान आरम्भ किया परन्तु भौगोलिक स्थिति के कारण विद्रोहियों का पूर्ण दमन न हो सका । वे नवाब की सेना के लौटते ही पुनः लूटपाट आरम्भ कर देते थे ।[21] इस सैन्य अभियान के कारण कुछ शान्ति व्यवस्था अवश्य स्थापित हुई ।

नवाब सआदत खाँ ने राजस्व एकत्रित करने के लिए कठोर नियम भी बनाये और राजस्व वसूली के लिए कड़े प्रशासनिक कदम भी उठाये गए । उदाहरण के लिए , गोरखपुर के सत्तासी राजाओं की जमींदारी परगना हवेली, गोरखपुर, भौवापार तथा सिलहर में फैली हुई थी ।सत्तासी राजाओं के मनमाने व्यवहार के कारणउसकी गतिविधियों पर अंकुश लगाया

21• आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, अवध के •• , पृ0 - 43,44 ,
राजबली पाण्डेय, गोरखपुर जनपद और ••• पृ0 - 255, 256

गया । नवाब सआदत खाँ के दीवान आत्माराम ने 1137 फसली (1739 ई0) में सत्तासी राजा का अलग से ताल्लुका बना दिया जो ताल्लुका गजपुर के नाम से जाना गया ।[22]

सत्तासी राजा के इस ताल्लुके में 464 मौजे थे जिनमें से 283 मौजे राजा को " नानकार" के रूप में दिया गया था ।[23] राजस्व एकत्र करने में सआदत खाँ ने सैन्य बल का भी प्रयोग किया । जब पारिवारिक सम्बन्धों के कारण सत्तासी राजा सर्वदमन सिंह ने नवाब की सेना के विरुद्ध उनवल के राजा की सैन्य सहायता की तो उसे अर्थदण्ड दिया गया और उनवल राजा का शेष भू - राजस्व भी सर्वदमन सिंह से वसूल किया गया ।[24] परन्तु इन सब कार्यवाहियों के बाद भी सआदत खाँ मात्र चार

---

22. सी0ओ0जी0(गोरखपुर)वाल्यूम नं0-70, फाइल नं0-82, सीरियल नं0-15 पृ0 189, 190, वाल्यूम नं0 74, फाइल नं0 91, सीरियल नं0-58, पृ0 120, 121

23. सी0ओ0जी0 (गोरखपुर) वाल्यूम नं0 - 74, फाइल नं0 91 सीरियल नं0 - 58 , पृ0 - 120 , 123

24. नागेश्वर प्रसाद सिंह वर्मा, नाग कोशलोत्तर, प्रथम खण्ड, राजा सर्वदमन सिंह से सम्बन्धित विवरण ।

लाख रूपये 1731 ई० तक एकत्रित कर सका।[25] यहाँ के प्रमुख जमींदारों जैसे मझौली का राजा भीममल्ल तृतीय आदि अभी भी नवाब के नियन्त्रण से मुक्त थे।[26] 1732 ई० से 1737 ई० तक मराठों की समस्याओं में तथा 1739 ई० में नादिरशाह के आक्रमण के विरूद्ध युद्ध में सम्मिलित होने के कारण सआदत खाँ आन्तरिक प्रशासन पर विशेष ध्यान न दे सका इस कारण गोरखपुर सरकार के जमींदार नवाब के अधिकारियों की अवहेलना करते रहे।[27] इस काल में सत्तासी राजा ने अपनी स्थिति सुदृढ कर ली और 1742 ई० में उसके ताल्लुके में 928 मौजे हो गये।[28]

- -

25. सी०ओ०जी०(गोरखपुर) वाल्यूम नं० - 15, फाइल नं० -17, सीरियल नं० - 11, पृ० - 93,94

26. लाल खड्ग मल्ल, विश्वेन वंश, ... पृ० - 70, मो०अ०ग० फारूकी, शजरे शादाब, पृ० - 86,87

27. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, दि फर्स्ट टू नवाब्स आफ अवध, पृ० - 52, 58

28. सी०ओ०जी०, (गोरखपुर), वाल्यूम नं०-70, फाइल नं० -22 सीरियल नं० - 15, पृ०- 190

आजमगढ़ के जमींदार महाबत खाँ का नवाब द्वारा दमन

आजमगढ़ के जमींदार ने केराकत, सैदपुर, भिटरी, शादियाबाद बहरियाबाद, जुहूराबाद आदि, सरकार जौनपुर , गाजीपुर के परगनों पर अधिकार कर लिया । यह भूभाग नवाब खानखाना के पुत्र की जागीर में था । अत: जागीरदार इन भू भागों की आय न प्राप्त होने पर उसने म महाबत खाँ से प्रार्थना की और इस आशा में काफी दिनों तक प्रतीक्षा की। महाबत खाँ द्वारा इन्कार करने पर जागीरदार ने दिल्ली में मुगल सम्राट से फरियाद की । इस पर सम्राट ने नवाब आसफ खाँ के नेतृत्व में महाबत खाँ के विरूद्ध सेना भेजी । जिसे महाबत खाँ ने मार कर भगा दिया । अत: मुगल सम्राट ने सआदत खाँ को कार्यवाही करने का आदेश दिया । नवाब के सेना सहित बढ़ने से भयभीत होकर महाबत खाँ ने समझौते का प्रयास किया । नवाब अपनी सेना सहित जौनपुर पहुँच गया । उसने जौनपुर से बहराम खाँ को अपने साथ लिया और गम्भीरपुर पहुँच गया। नवाब ने चार लाख रूपये की माँग की जिसे स्वीकार नहीं किया गया।

अत: अब नवाब सेना सहित सराय रानी तक पहुँच गया । सआदत खाँ ने आजमगढ पहुँच कर किले को घेर लिया । नवाब की सेना का मुकाबला न कर पाने के कारण महाबत खाँ जिला गोरखपुर के परगना सिलहट में भाग गया । नवाब सआदत खाँ ने स्थिति का लाभ उठाकर आजमगढ की सम्पत्ति को लूटा । तत्पश्चात महाबत खाँ के पुत्र इरादत खाँ को चार लाख चौसठ हजार रूपये वार्षिक राजस्व देने की शर्तों पर सआदत खाँ ने आजमगढ की जमींदारी लौटा दी । यह सूचना पाकर महाबत खाँ आजमगढ लौटा किन्तु नवाब ने उसे और उसके दो पुत्रों को बन्दी बना लिया ।[29] महाबत खाँ की मृत्यु नवाब के बंदी के रूप में गोरखपुर

---

29. तारीख - ए- आजमगढ, प0 -22 बी,26ए, सरगुजश्त,ए-राजगान, ए-आजमगढ,ब0 16 बी,18 बी, जहीरूउद्दीन,मालिक, द रेन आफ पृ0-327,328,338,आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, अवध के प्रथम दो नवाब,पृ0- 48, जे0आर0रीड, रिपोर्ट आन दि डिस्ट्रिक्ट आफ आजमगढ .....1877, एपेंडिक्स नं0-1, पृ0 - 8ए,9ए, जे0के0 हालोज ,डिस्ट्रिक्ट गजेटियर,..(गोरखपुर डिवीजन) (आजमगढ) 1935, पृ0- 38, गिरधारी के अनुसार " राजा महाबत खाँ

1732ई0में ही हो गयी ।[30]

सरदार बनारस के जमींदार एवं मीररूस्तम अली खाँ

1719 ई0 से 1738 ई0 तक बनारस, चुनार, जौनपुर और गाजीपुर का प्रशासन मीर रूस्तम अली खाँ के हाथों में केन्द्रित रहा । इस अवधि में दौरान उसने नवाब मुर्तजा खाँ तथा अवध के नवाब सआदत खाँ के प्रतिनिधि के रूप में भी कार्य किया । मीर रूस्तम अली खाँ ने राजस्व प्राप्ति के लिए कठोरता का प्रदर्शन किया । उदाहरणार्थ, गाजीपुर के परगना खारीद में स्थित सुखपुरा नामक ग्राम के जमींदारों द्वारा राजस्व के भुगतान में शिथिलता बरतने का कार्य किये जाने के कारण मीर रूस्तम अली खाँ ने

खाँ और उसके दो पुत्रों को बन्दी बनवाने में उसके पुत्र इरादत खाँ का हाथ था ।" गिरधारी, इन्तजाम-ए- राज-ए-आजमगढ ,पृ0-65 बी,71ए-74बी, किन्तु गिरधारी का विवरण सन्देहास्पद है ।

30• तारीख - ए- आजमगढ, पृ0 - 27 ए । तथा आजमगढ का डिस्ट्रिक्ट गजेटियर , 1911, पृ0 - 17।

उनके विरुद्ध अभियान किया और गाँव के सभी लड़ाकू व्यक्तियों को मार डाला।[30ए] इसके बावजूद भी बनारस सूबे के जमींदार राजस्व का नियमित भुगतान नहीं करते थे।[31] इसका प्रमुख कारण मीर रूस्तम अली खाँ का लापरवाह होना था। जिसका लाभ मंसाराम को हुआ जो अब उत्थान की ओर अग्रसर था। मंसाराम मीर रूस्तम अली की सेवा में आया और अपनी शक्ति बढ़ाकर उसने अवध के सूबेदार सफदरजंग से जौनपुर, चुनार और बनारस को 13 लाख रूपये वार्षिक राजस्व की शर्त पर अपने पुत्र बलवन्त सिंह के नाम इजारे पर ले लिया।[32]

इस प्रकार 1719 ई0 में 1739 ई0 के मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश के जमींदारों ने स्वतन्त्र सत्ता बनाने का प्रयास किया परन्तु अवध के नवाब सआदत खाँ ने मुगल प्रतिनिधि के रूप में उन पर नियन्त्रण रखा।[33] किन्तु

- -

30•ए• विस्टन ओल्टम, हिस्आरिकल एण्ड स्टैटिस्टिकल मेमायर•••पार्ट-1, पृ0 - 89,

31• गुलाम हुसैन खाँ, तारीख - ए- बनारस ,प0-17बी,19बी,सूबा इलाहाबाद में सरकार तरहर के परगना चौरासी के जमीदारों के विरूद्ध रूस्तम अली खाँ को स्वयं जाना पड़ा। बलवन्त नामा,पृ0-7

फिर भी विभिन्न अवसरों पर बहुत से जमींदारों ने अपनी शक्ति को बढ़ाया । मंसाराम का उत्थान एक जमींदार की मुगल व्यवस्था के अन्तर्गत एक कूटनीतिक विषय थी जिसे तत्काल आंका न जा सका ।[34]

1739 ई0 से 1754 ई0 के मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजनीतिक गतिविधियाँ :

19 मार्च 1739 ई0 को नवाब सआदत खाँ की मृत्यु के पश्चात अवध की सूबेदारी उसके दामाद अबुल मंसूर खाँ सफदरजंग को मुगल सम्राट द्वारा प्रदान की गयी ।[35] सफदरजंग इसके पूर्व अवध के नायब सूबेदार के रूप में राज्य की समस्त समस्याओं से परिचित हो चुका था ।

34· सैयद नजमुल रजा रिजवी, (शोध प्रबन्ध, इ0वि0वि0) 1983 पृ0 - 244

35· मुफ्ती गुलाम हजरत, क्वायफ - ए - जिला - ए - गोरखपुर, पृ0 - 8, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, दि फर्स्ट टू··· पृ0-91,92 हरिचरन दास, चहार गुलजार शुजाई (इलियट व डाउसन, हिस्ट्री अनुवाद मथुरा लाल शर्मा) ख0- 8, पृ0 - 159

परन्तु नादिरशाह के प्रथम आक्रमण ,1748 ई0 में मुगल सम्राट अहमदशाह द्वारा विजारत के पद पर नियुक्त किये जाने के कारण दरबार की दलगत राजनीति में तथा मराठों व फर्रुखाबाद के अफगानों की समस्या में अधिक समय गंवाना पड़ा ।[36] जिसके कारण वह प्रशासन पर पूर्ण नियंत्रण न रख सका। सफदर जंग की कठिनाइयों से लाभ उठाकर इस क्षेत्र के जमीदारों ने विद्रोही कार्य करने के प्रयास किये । विभिन्न सरकारों और सफदरजंग के साथ इस अवधि में निम्न सम्बन्ध रहा -

सफदर जंग और गोरखपुर सरकार :

नवाब सआदत खाँ गोरखपुर सरकार के भू भाग पर उतना नियंत्रण

---

36. मुफ्ती गुलाम हजरत, क्वायफ़, ए - जिला - ए - गोरखपुर, पृ0 - 8, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, दि फर्स्ट टू...पृ0-102 112 , 115, 128, से 141 से 166, 175 से 191 तथा सरदेसाई 11, पृ0- 186

न रखा सका जितना कि सफदर जंग ने रखा,। सफदर जंग ने 1743 ई0 में मीर खुदायार खाँ को गोरखपुर का चकलादार नियुक्त किया । मीर खुदायार खाँ ने विद्रोही व्यक्तियों को निष्कासित करके पूरे भू भाग पर नियंत्रण स्थापित किया । उसके पश्चात नियुक्त चकलादारों में मीर बाकर, राम नारायण तथा माज उद्दीन खाँ ने भी गोरखपुर सरकार पर कठोर नियंत्रण बनाए रखा ।[37] इन चकलादारों के भय से सरकार गोरखपुर के सर्वाधिक प्रतिष्ठित जमींदार मझौली के राजा शिवमल्ल ने नवाब सफदर-जंग से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर लिया ।[38] सरकार गोरखपुर से राजस्व वसूली में कठोरता बढ़ती गयी और 1746 ई0 से लगभग 6,25,151 रूपये वार्षिक राजस्व औसत रूप से अधिकारियों द्वारा एकत्रित किया गया।[39]

- -

37• मुफ्ती गुलाम हजरत ,क्वायफ - ए- फिला - ए - गोरखपुर
पृ0 - 15

38• लाल खड्ग बहादुर मल्ल, विश्वेनवंश •••• पृ0 - 70

39• सी0ओ0जी0 (गोरखपुर) वाल्यूम नं0 - 15, फाइल नं0 17
सीरियल नं0 -11, पृ0 - 96

इसी समय फर्रुखाबाद के बंगश नवाबों से सफ्दर जंग पराजित[40] हो गया । इसका लाभ उठाकर परगना धुरियापार में स्थित बढ़यापार तथा परगना सिधुआ जोबना में स्थित पडरौना के जमींदारों ने विद्रोह कर दिया । किन्तु उस समय गोरखपुर के चकलादार माजुद्दीन खाँ ने उनके विद्रोह को दबाकर दण्डित किया ।

नवाब सफ्दर जंग ने परगना तिलपुर के जमींदार (तिलक सेन के पुत्र) एवं उसके सहयोगी बंजारों के विरूद्ध सेना भेजकर लूटपाट पर रोक लगा दी है । परगना तिलपुर पर अधिकार करके उसे बूटबल के राजा के अधीन कर दिया गया जिसने की राजस्व देना स्वीकार किया।[41] इस प्रकार नवाब के अधिकारियों ने गोरखपुर सरकार पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित किया ।

40· मुफ्ती गुलाम हजरत, क्वायफ-ए-जिला-ए-गोरखपुर, पृ0-9

41· आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, अवध के प्रथम दो नवाब, पृ0-44
राजबली पाण्डेय, गोरखपुर जनपद और पृ0-256· गोरखपुर और बस्ती के गजेटियर, 1907, पृ0- 153 से 182

परगना आजमगढ में राजनीतिक गतिविधियाँ :

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

नवाब सआदत खाँ द्वारा राजा महाबत खाँ को दण्डित किये जाने के पश्चात 1750 ई० तक आजमगढ का राजा अवध के नवाब के प्रति स्वामिभक्त बना रहा । परन्तु सफदरजंग की बंगश -नवाबों के हाथों हुए पराजय ने आजमगढ के राजा इरादत खाँ को विद्रोही सामन्तों के गुट में शामिल होने के लिए प्रेरित किया । उसने अहमद खाँ बंगश द्वारा नियुक्त बनारस के गवर्नर साहिब जुमा खाँ की सैनिक सहायता की ।[42]

- -

42· बलवन्त नामा पृ0- 26, एफ0 एच0फिशर, स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव वाल्यूम, 13, भाग-1, (आजमगढ) पृ0- 136, जे0आर0 रीड रिपोर्ट आन दि ···· 1877, अपेन्डिक्स नं0 -1, पृ0 - 9ए, विलियम इर्विन " दि बंगश नवाब्स आफ फर्रुखाबाद - ए- क्रानिकल (1713-1857), जर्नल आफ दि एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल ,वाल्यूम - 48, भाग -1, 1879, पृ0-82, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, अवध के ···· पृ0- 48

किन्तु मराठों की सहायता से नवाब सफ्दर जंग ने बंगश नवाब को पराजित कर स्थिति को अपने पक्ष में कर लिया । इन परिस्थितियों में साहिब जमा खाँ के प्रयासों को असफल बनाकर उसे पलायित होने के लिए मजबूर किया । राजा इरादत खाँ ने स्थिति की गम्भीरता को समझकर अपने पुत्र जहाँ खाँ को आजमगढ की जमींदारी सौंप दी तथा स्वयं को नवाब के दण्ड से बचा लिया ।[43]

इधर बनारस के राजाओं की स्थिति में भी परिवर्तन आ रहा था । 1738 ई0 में बनारस में मंसाराम की मृत्यु हो गयी तथा अब बनारस जौनपुर और चुनार की व्यवस्था उसके पुत्र बलवन्त सिंह के हाथों में केन्द्रित हो गयी ।[44] बलवन्त सिंह ने अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को

- -

43• सैयद जनमुल रजा रिजवी ," ए जमींदार - फेमिली आफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, " इ0 हि0का0पु0 ,बम्बई,1980, पृ0- 242;

44• बलवन्त नामा, पृ0-10,12 , विल्टन ओल्टम, हिस्टारिकल एण्ड स्टेटिस्टिकल मेमायर,••••भाग-1, पृ0-99,100, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव,अवध के प्रथम दो नवाब, पृ0- 203,204

सर्वोच्च प्राथमिकता दी । उसने अपनी स्थिति को मजबूत बनाने के लिए प्राथमिकता की । उसने अपनी स्थिति को मजबूत बनाने के लिए इलाहाबाद के सूबेदार अमीर खाँ के माध्यम से मुगल सम्राट मुहम्मदशाह को नजराने के रूप में कुछ धन प्रेषित किया । इससे प्रभावित होकर मुहम्मद शाह ने बलवन्त सिंह को परगना कसवार, अफराद, कटेहर और भावत की जमींदारी प्रदान की तथा उसे राजा की उपाधि से विभूषित किया। मुहम्मदशाह ने बलवन्त सिंह को इन परगनों पर अधिकार रखने का प्रमाण पत्र भी प्रदान किया । बलवन्त सिंह ने अपने पूर्वजों के निवास स्थान मंशापुर में एक गढ़ी का भी निर्माण कराया ।[45] अवध का नवाब सफदरजंग, राजा बलवन्त सिंह पर अधिक विश्वास न कर सका । इस सन्दर्भ में उसने राजस्व की वसूली के लिए तथा राजस्व का नियमित भुगतान प्राप्त के उद्देश्य से अपने एक नायब तथा उसके साथ रूप सिंह को बनारस में प्रतिनिधि के तौर पर नियुक्त किया । इन्हें " सजावल " कहा गया । राजा बलवन्त

- -

45· बलवन्तनामा, पृ०-21, विल्टन ओल्टम, हिस्टारिकल एण्ड स्टेटिस्टिकल मेमायर, ··· भाग- 1 पृ० - 100

सिंह इन्हीं प्रतिनिधियों के माध्यम से नियमित राजस्व का भुगतान करता रहा तथा नवाब के प्रति विनम्र तथा विश्वास पात्र बना रहा । इसी समय मुगल सम्राट ने नवाब सफदर जंग को अफगानों के आक्रमण का मुकाबला करने के लिए दिल्ली बुला लिया । बलवन्त सिंह ने नवाब की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर उसके राजस्व वसूल करने वाले प्रतिनिधियों को राज्य से निष्कासित कर दिया । इसी क्रम में बलवन्त सिंह ने भू राजस्व के भुगतान को रोक दिया तथा बनारस की सीमा से लगे इलाहाबाद के आस पास के क्षेत्रों को लूटना आरम्भ कर दिया।[46] बलवन्त सिंह द्वारा 1748 ई0 में भदोही के किले पर अधिकार कर लिया।[47] इन घटनाओं के कारण इलाहाबाद का नायब सूबेदार अली कुली खाँ, बलवन्त सिंह का मुकाबला करने के लिए आगे बढ़ा परन्तु छल प्रपंच द्वारा

- -

46\. बलवन्त नामा, पृ0- 21,22 , विल्टन ओल्टम,भाग-1,पृ0-100

47\. बलवन्तनामा, पृ0-22,23, विल्टन ओल्टम, हिस्टारिकल एण्ड स्टैस्टिकल मेमायर,,...भाग-1, पृ0 - 100

बलवन्त सिंह ने उसे भी पराजित कर दिया ।[48] इसी समय 1750ई0 में सफदर जंग बंगश नवाब अहमद खाँ से पराजित हो गया । अहमद खाँ ने अपने एक सम्बन्धी साहिबजमा खाँ को जौनपुर, गाजीपुर , बनारस चुनार, की सरकारों तथा आजमगढ एवं माहुल आदि स्थानों का गवर्नर नियुक्त किया । साहिब जमां खाँ को यह भी आदेश दिया गया कि वह सैन्य कार्यवाही करके बलवन्त सिंह को निष्कासित कर दे । साहिब जमां खां की सहायता बंगश नवाब, आजमगढ, तथा माहुल के जमींदारों ने की । नवाब अहमद खाँ बंगश ने स्वयं इलाहाबाद के किले पर अधिकार करने के उद्देश्य से प्रस्थान किया । उस नवीन परिस्थिति में राजा बलवन्त ने अपने विश्वासपात्र प्रतिनिधियों को बंगश नवाब के पास बहुमूल्य उपहारों के साथ भेजा और बंगश नवाब की अधीनता में कार्य करने का प्रस्ताव भी रखा । वह स्वयं भी बंगश खाँ नवाब के आमन्त्रण पर

- -

48• बलवन्त नामा, पृ0 - 23,25

इलाहाबाद मिलने गया । बंगश नवाब ने राजा बलवन्त सिंह को अपनी आधी जमींदारी पर अधिकार रखने की अनुमति इस प्रस्ताव के साथ दी कि वह आधा भू भाग तत्काल साहिब जमा को सौंप दिया । नवीन परिस्थितियों और बंगश नवाब की शक्ति को देखकर राजा बलवन्त सिंह ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया । इसी समय नवाब सफदरजंग ने बंगश नवाब के विरूद्ध सैन्य नवाब सफदरजंग ने बंगश नवाब के विरूद्ध सैन्य अभियान के लिए दिल्ली से प्रस्थान किया । इस नयी परिस्थिति के कारण अहमद शाह बंगश तत्काल इलाहाबाद छोडने के लिए विवश हो गया। अत: परिस्थिति को लाभ उठाकर राजा बलवन्त सिंह ने अब निर्बल हो गये साहिब जमा खां को तत्काल अपनी जमींदारी छोडकर जाने का आदेश दे दिया । साहिब जमा खां तत्काल आजमगढ और पुन: वहां से भी बिहार में स्थित बेतिया के राजा के यहां चला गया। इस प्रकार परिस्थितियों का लाभ उठाकर राजा बलवन्त सिंह ने अपने व्यक्तिगत हितों और स्वार्थों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी । वह निरन्तर अपनी स्वामिभक्ति को परिवर्तित करता रहा और किसी के प्रति स्वामिभक्त नहीं रहा । इधर सफदर जंग ने अफगानों को पराजित करके

असफल प्रयास किया । इसी मध्य नवाब सफदर जंग को अहमदशाह अब्दाली की समस्या से निपटने के उद्देश्य से मुगल सम्राट ने दिल्ली बुलाया । परिस्थितियों वश नवाब सफदर जंग ने बलवन्त सिंह को 1751-52 ई0 में एक खिलअत भेजकर बढ़े हुए राजस्व की शर्त पर उसके भू भागों को लौटा दिया और राजस्व वसूली के लिए एक प्रतिनिधि नूरूल हसन खाँ को नियुक्त करके नवाब सफदर जंग वापस फैजाबाद आ गया । फैजाबाद पहुँचने के तुरन्त बाद उसने दिल्ली के लिए प्रस्थान किया ।[50]

दिल्ली पहुँचने के बाद सफदर जंग विभिन्न समस्याओं से जूझता रहा । इनमें प्रमुख अहमदशाह अब्दाली की समस्या, दरबारी षडयन्त्रों तथा मराठों की समस्या प्रमुख थी । बनारस में राजा बलवन्त सिंह ने अपनी सुरक्षा का सुदृढ़ प्रबन्ध करते हुए राम नगर में किले का निर्माण कराया तथा विजय गढ़ , अगोरी, लतीफ पुर तथा पसीता के किलों पर भी अधिकार

---

50. बलवन्त नामा, पृ0- 29 से 31, विल्टन ओल्टम, भाग -1, पृ0-100, 101, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, अवध के प्रथम दो नवाब, पृ0- 204 , 20

कर लिया ।[51] उसने बिहार की सरकार शाहाबाद के परगना कड़ा, मंगरौर को जमींदारी पर भी अधिकार कर लिया ।[52] दिल्ली से लौटने के पश्चात नवाब सफदर जंग ने पुन: बलवन्त सिंह के विरुद्ध सैन्य अभियान आरम्भ किया परन्तु राजा बलवन्त सिंह बनारस से पलायित कर गया । इसी समय मराठों की समस्या के कारण सफदर जंग को पुन: मुगल सम्राट के बुलाने पर दिल्ली वापस लौटना पड़ा । अत: राजा बलवन्त सिंह पुन: दण्डित होने से बच गया ।[53] इस प्रकार 1739 से 1754 ई0 के मध्य बलवन्त सिंह लगातार अपनी राजनैतिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिए प्रयत्नशील रहा और अन्तत: सफल रहा ।

51· बलवन्त नामा, पृ0-31 से 34, विल्टन ओल्टम, हिस्टारिकल एण्ड स्टैटिस्टिकल मेमायर, भाग -1, पृ0- 101 तथा सैयद नजमुल रजा रिजवी (शोध प्रबन्ध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, 1983) पृ0-251

52· बलवन्त नामा, पृ0- 34, से 36, विल्टन ओल्टम, भाग-1, पृ0-102 तथा सैयद नजमुल रजा रिजवी, पृ0- 252

53· आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, शुजाउद्दौला, खण्ड-1 पृ0- 29,20

नवाब सफदर जंग की कठिनाइयों का लाभ उठाकर कुछ अन्य जमींदारों ने भी अफगानों की स्थिति को सुदृढ़ बनाने का प्रयास किया । बंगश नवाब अहमद खां द्वारा नियुक्त वायसराय साहिब जमां खां की सहायता माहुल के जमींदार शमशाद जहां, गडवारा के जमींदार हिम्मत बहादुर तथा मछली शहर के जमींदार शेख कबूल मोहम्मद ने की ।[54] इस प्रकार पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र के जमींदारों ने सफदर जंग की कठिनाइयों से लाभ उठाकर अपनी शक्ति को विस्तारित करने का निरन्तर प्रयास किया।

1754 ई० से 1761 ई० के मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजनीतिक गतिविधियाँ :

नवाब सफदर जंग की मृत्यु 1753 ई० में हुई तत्पश्चात उसका पुत्र शुजाउद्दौला अवध एवं इलाहाबाद का सूबेदार बना ।[55] इस परिवर्तन

54, बल्वन्त नामा, पृ०- 26 से 36 सैयद नजमुल रजा रिजवी, पृ०- 252

55• आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव ,शुजाउद्दौला ,खण्ड-1, पृ०- 15,16

का राजाओं व जमीदारों ने लाभ उठाने का प्रयत्न किया परन्तु शुजाउद्दौला मुगल साम्राज्य के विजारत का पद प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील था । इसी कारण वश मुगल साम्राज्य का वजीर इमादुलमुल्क उसे अवध एवं इलाहाबाद की सूबेदारी से पदच्युत कराना चाहता था । जिसके कारण शुजाउद्दौला को वजीर के साथ युद्ध करना पड़ा । शुजाउद्दौला के समय में ही अवध पर अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण का भय, मुगल शाहजादा अली गौहर को अवध तथा इलाहाबाद में उपस्थिति तथा बंगाल व बिहार की पुर्नविजय जैसी समस्याएं भी संकट की स्थिति उत्पन्न कर रहीं थी । इसी समय शुजाउद्दौला अवध की सूबेदारी के प्रतिद्वन्दी अली कुली खाँ को समाप्त करने, मुगल सम्राट शाह आलम द्वारा वजीर नियुक्त किये जाने के पश्चात अंग्रेजी कम्पनी के साथ संघर्ष एवं पराजय तथा उसके पश्चात अपनी स्थिति को पुनः सुदृढ बनाने आदि जैसी समस्याओं में भी निरन्तर व्यस्त रहा ।[56] इस कारण पूर्वी उत्तर प्रदेश के जमींदारों और राजाओं ने सदैव

56• सैयद नजमुल रजा रिजवी, पृ0- 253

उसका लाभ उठाकर सत्ता की अवहेलना करने का प्रयास किया । इसी मध्य अंग्रेजी कम्पनी ने भी हस्तक्षेप की प्रक्रिया आरम्भ की जिसके कारण शुजाउद्दौला की स्थिति निरन्तर कमजोर हुई और जमींदारों ने भी अंग्रेजी सत्ता का साथ देते हुए उनकी भारत में सत्ता स्थापना के प्रयत्नों को प्रोत्साहित किया ।

शुजाउद्दौला के समय में सरकार गोरखपुर के भूभाग पर नियुक्त चकलादारों का पर्याप्त नियंत्रण रहा । मझौली के राजा शिवमल्ल तथा बुटवल के राजा महादत्त सेन, शुजाउद्दौला से सदैव भयभीत रहे । परन्तु बक्सर के युद्ध में शुजाउद्दौला की पराजय ने उसकी स्थिति कमजोर कर दी । यद्यपि नवाब के एक अधिकारी अबुल बख्त खाँ ने अंग्रेजी सेनाओं को सलेमपुर में प्रवेश करने से रोक दिया तथा मझौली के राजा अजीत मल्ल को भी पलायन करने पर विवश कर दिया ।[57] सत्तासी राजा सन्मान सिंह तथा अमोढा

57· लाल छं· बहादुर मल्ल, बिसेन वंश ····· पृ० - 71,72

(उद्धृत सैयद नजमुल रजा रिजवी, पृ० - 254)

के राजा जालिम सिंह ने विद्रोही स्वर अपनाया तथा स्वतन्त्र आचरण का प्रदर्शन किया ।[58] अंग्रेजों से सन्धि के पश्चात शुजाउद्दौला ने गाजीपुर के नवाब फजल अली खाँ को गोरखपुर का भू भाग इजारे पर दे दिया, जिसने इस भू भाग पर नियन्त्रण स्थापित किया ।[59] बड़े जमींदारों को छूट व सुविधाएं भी दी जिससे की वे विद्रोह न कर सके । यद्यपि कभी कभी राजस्व के प्रश्न पर फजल अली खाँ के आमिलों से इन जमींदारों का संघर्ष होता रहा ।

यद्यपि आजमगढ के राजाओं ने शुजाउद्दौला के विरुद्ध कोई संदेहास्पद कदम नहीं उठाया । परन्तु राजस्व के नियमित भुगतान में बाधा पडने पर शुजाउद्दौला ने 1761 ई0 में अपना प्रतिनिधि भेजा ।

- -

58• मुफ्ती गुलाम हजरत, क्वायफ - ए- जिला- गोरखपुर, पृ0-14से. 16

59• मुफ्ती गुलाम हजरत, क्वायफ - ए- जिला - ए- गोरखपुर, पृ0-16 तथा मो0अ0ना0 फारूकी, शजरे-शादाब, पृ0- 93 से 97

शुजाउद्दौला के प्रतिनिधि और आजमगढ के राजा जहाँ खाँ के मध्य राजस्व के भुगतान के प्रश्न पर संघर्ष हुआ जिसमें दोनों की मृत्यु हो गयी ।[60] अत: नवाब के मंत्री बेनी बहादुर ने आजमगढ का शासन के गाजीपुर के फजल अली खाँ को सौंप दिया ।[61] फजल अली ने तीन वर्षों तक आजमगढ से राजस्व की वसूली की । परन्तु फजल अली खाँ के आतंक के कारण शुजाउद्दौला ने उसे हटाकर अन्य इजारेदारों को भूभाग प्रदान किये ।[62] जहाँ खाँ के चचेरे भाई आजम खाँ एवं द्वितीय ने बक्सर युद्ध में शुजाउद्दौला की सहायता करके विश्वास प्राप्त किया । उसे

60• सैयद अमीर अली रिजवी,सरगुजश्त - ए- बाजगान-ए- आजमगढ, प0 -22 ए0बी0, गिरधारी, इन्तजाम -ए- राज- ए- आजमगढ प0 - 93 ए,94 बी, तारीख - ए- आजमगढ ,पृ0- 28 बी, 29 ए ।

61• जे0आर0रीड, रिपोर्ट आन दि डिस्ट्रिक्ट आफ आजमगढ, 1877 एपेन्डिक्स नं0 -1, पृ0- 10ए

62• जे0आर0रीड, रिपोर्ट आन दि डिस्ट्रिक्ट आफ आजमगढ ,1877 एपेन्डिक्स नं0 -1, पृ0- 10ए ।

आजमगढ़ का राजा नियुक्त करके राजस्व एकत्रित करने का अधिकार दिया गया । आजमखाँ द्वितीय 771 ई0 तक अपने शासन का उपभोग करता रहा । आजम खाँ द्वितीय की मृत्यु के उपरान्त परिवार में किसी को योग्य न पाकर आजमगढ़ के शासन को हस्तगत करके वहाँ चकलादार की नियुक्ति की गयी ।[63] इन चकलादारों ने भू राजस्व एकत्रित करने और प्रशासन को सुव्यवस्थित रखने का कार्य किया ।

बनारस के राजा बलवन्त सिंह का नवाब शुजाउद्दौला के साथ सम्बन्ध

नवाब सफदर जंग की मृत्यु के उपरान्त बनारस के राजा बलवन्त सिंह ने अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण करने का प्रयास किया । इस क्रम में उसने चुनार के किलेदार आगामीर को रिश्वत देकर किले पर अधिकार करने का प्रयास किया । इस षडयन्त्र की सूचना मिलते ही शुजाउद्दौला ने बलवन्त सिंह को दण्डित करने के लिए प्रस्थान किया परन्तु बलवन्त सिंह ने सपरिवार लतीफपुर के किले में शरण ली । शुजाउद्दौला ने

63• सैयद नजमुल रजा रिजवी, पृ0 - 257

बलवन्त सिंह को गिरफ्तार करने के लिए अधिकारियों की नियुक्ति की । यह सूचना प्राप्त होते ही बलवन्त सिंह ने विजयगढ़ के किले में भाग कर शरण ली । उसने अपनी सहायता हेतु मराठों की सेना भी बुलायी म बलवन्त सिंह के विरुद्ध फजल अली खाँ ने भी प्रयास किये ताकि उसे बन्दी बनाया जा सके ।[64] इसी समय अहमदशाह अब्दाली ने भारत विजित करने के लिए दिल्ली में प्रवेश किया । इस परिस्थिति में मुगल साम्राज्य के वजीर ने शुजाउद्दौला से तत्काल सहायता माँगी ।[65] अत: अपने अधिकारियों के परामर्श पर शुजाउद्दौला ने राजा बलवन्त सिंह को पाँच लाख रूपये भेंट तथा पाँच लाख रूपये वार्षिक राजस्व के समझौते पर क्षमा कर दिया तथा परगना भदोही को भी जागीर के रूप में प्रदान किया।[66]

- -

64. बलवन्त नामा, पृ0- 37,38 ,विल्टन ओल्टम, भाग-1,पृ0-102
    आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव,शुजाउद्दौला,खण्ड-1,पृ0-32,33

65. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, शुजाउद्दौला ,खण्ड-1,पृ0- 33

66. बलवन्तनामा, पृ0- 38.39, विल्टन ओल्टम, भाग-1, पृ0-102
    तथा ए0एल0 श्रीवास्तव,खण्ड-1, पृ0- 33,34

इन घटनाक्रमों के उपरान्त शुजाउद्दौला वापस फैजाबाद आ गया तथा अहमदशाह अब्दाली के अवधपर सम्भावित आक्रमण से रक्षा के प्रबन्ध में संलग्न हो गया ।[67]

राजा बल्वन्त सिंह की स्वतन्त्र होने की आकांक्षा पुन: बलवती हो उठी । उसने सर्वप्रथम गाजीपुर के फजल अली खाँ को शुजाउद्दौला के नायब बनी बहादुर की सहायता से निष्कासित करवाने में सफलता मिली तथा इजारे पर गाजीपुर का भू भाग भी प्राप्त कर लिया ।[68] राजा बल्वन्त सिंह ने 1758- 59 ई0 में चौसा की जमींदारी तथा किला और 1759-60 ई0 में इलाहाबाद सरकार के तरहर में स्थित परगना कन्तित पर भी अधिकार कर लिया ।[69] यद्यपि शुजाउद्दौला

- -

67· आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, शुजाउद्दौला ,खण्ड-1, पृ0 - 34

68· बलवन्तनामा, पृ0 - 40,41 ,विल्टन ओल्टम ,भाग-1,पृ0- 102

69· बल्वन्तनामा,पृ0- 41 से 43 ,विल्टन ओल्टम, भाग-1, पृ0-102

के प्रतिद्वन्दी मुहम्मद मुहम्मद कुली खाँ को बन्दी बनाने में राजा बलवन्त सिंह ने सहायता की थी तथापि दोनों में सम्बन्ध अच्छे नहीं थे। राजा बलवन्त सिंह नवाब के प्रति सदैव संशकित रहा। इसी कारणवश 1760-61 ई0 में मुगल सम्राट से मिलने के लिए नवाब शुजाउद्दौला द्वारा बनारस आने पर राजा बलवन्त सिंह भाग कर विन्ध्य की पहाड़ियों में चला गया तथा इस अवसर पर भी बेनी बहादुर के कारण नवाब शुजाउद्दौला, राजा बलवन्त सिंह को बन्दी बनाने के कारण नवाब शुजाउद्दौला, राजा बलवन्त सिंह को बन्दी बनाने के लिए अधिक समय न दे सका।[70]

शुजाउद्दौला ने मीर कासिम को बंगाल में पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए अंग्रेजों से युद्ध का बंगाल में पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए अंग्रेजों से युद्ध का निर्णय लिया तथा मीर कासिम तथा मुगल सम्राट के साथ

70• बलवन्त नामा, पृ0 - 46, 47

बनारस पहुँचा ।[71] राजा बलवन्त सिंह अविश्वास के कारण सपरिवार लतीफपुर भाग गया । राजा बलवन्त सिंह ने शुजाउद्दौला के पटना प्रस्थान पर ही बेनीबहादुर के आश्वासन पर उपस्थित होने के लिए चल पड़ा । परन्तु बलवन्त सिंह के प्रति नवाब शुजाउद्दौला अभी भी सशंकित था । पटना अभियान में असफल होने के पश्चात नवाब ने राजा बलवन्त सिंह को गाजीपुर के परगना मुहम्मदाबाद में अमला नामक ग्राम में अंग्रेजों के विरुद्ध सुरक्षात्मक तैयारी करने के लिए भेज दिया । परन्तु बक्सर के युद्ध की पराजय ने शुजाउद्दौला को हतोत्साहित कर दिया । सूचना प्राप्त होते ही राजा बलवन्त सिंह बनारस स्थित राम नगर किले में आ गया। मुगल सम्राट शाह आलम ने अब अंग्रेजों की शरण ले ली थी । परिस्थितियों को देखते हुए राजा बलवन्त सिंह ने भी अंग्रेजों का संरक्षण प्राप्त करने के उद्देश्य से बिहार के नायब नाजिम राजा शिताब राय के माध्यम

- -

71· हरि चरन दास, चहार-गुलजार शुजाई (इलियट व डाउसन, हिन्दी अनुवाद ,मथुरा लाल शर्मा) खण्ड-8, पृ0- 160

से मेजर मुनरो को बक्सर विजय के उपलक्ष्य में बधाई सन्देश तथा उपहार भेजे ।[72] राजा बलवन्त सिंह ने राजा शिताब राय के माध्यम से मेजर मुनरो से बनारस, जौनपुर, आजमगढ आदि जिलों को इजारे पर देने की प्रार्थना की ।[73] राजा बल्वन्त सिंह ने मेजर मुनरो के बनारस आगमन पर सुरक्षात्मक दृष्टिकोण अपनाते हुए लतीफपुर के किले में शरण ली ।[74] मेजर मुनरो ने उसके भू भाग को एक वर्ष के पट्टे पर उसे लौट दिया ।[75] इस सन्दर्भ में ये उल्लेखनीय है कि राजा बल्वन्त सिंह को पट्टा प्रदान करने के पूर्व मेजर मुनरो ने मुगल सम्राट से राजा बलवन्त सिंह की जमीदारी के भूभागों पर अंग्रेजी कम्पनी के अधिकार की सनद

---

72. सैययद नजमुल रजा रिजवी, पृ0-262

73. वही

74. बल्वन्त नामा, पृ0-53, तथा ए0एल0 श्रीवास्तव, शुजाउद्दौला, खण्ड- I, पृ0- 255

75. बल्वन्तनामा, पृ0 - 53, ए0एल0 श्रीवास्तव, खण्ड-I, पृ0 - 255

प्राप्त कर ली थी ।[76] अन्ततोगत्वा लिखित समझौते के उपरान्त ही राजा बलवन्त सिंह ने राम नगर में प्रवेश किया । इसके उपरान्त राजा बलवन्त सिंह ने अंग्रेजों की सहायता करते हुए मेजर कारनाक को चुनार अभियान के समय आठ लाख रूपये के अतिरिक्त सैन्य सहायता भी प्रदान की ।[77] इसके फलस्वरूप 1765 ई0 में लार्ड क्लाइव ने शुजाउद्दौला की इच्छा के विपरीत राजा बलवन्त सिंह की जमींदारी को बनाये रखने का एक अनुच्छेद की सन्धि पत्र में रखवाया ।[78] इससे राजा बलवन्त सिंह को अंग्रेजों से सुरक्षा तथा संरक्षण प्राप्त हुआ । परन्तु इसका विपरीत प्रभाव यह पड़ा कि अंग्रेजों को पूर्वी उत्तर प्रदेश में हस्तक्षेप का अवसर प्राप्त हो गया । राजा बलवन्त सिंह ने समयानुकूल अपने हितों की

76• विल्टन ओल्टम, भाग-1, पृ0-103 तथा सैयद नजमुल राजा रिजवी, पृ0 262•

77• बलवन्तनामा, पृ0- 53,54, सैयद गुलाम हुसैनखाँ, सियर-उल-मुताखरीन खण्ड-11, (नोटामानुस कृत, अंग्रेजी अनुवाद) पृ0-577, ए0एल0 श्रीवास्तव, खण्ड-1, पृ0-275

क्योंकि यह युग राजनैतिक अस्थिरता का युग था तथा ऐसे अस्थिर वातावरण में अपने सत्ता सुख तथा अपने हितों को सुरक्षित रखना उस काल में एक दूरदर्शिता पूर्ण निर्णय था । यही कार्य राजा बलवन्त सिंह ने किया ।

इलाहाबाद सन्धि के पश्चात नवाब शुजाउद्दौला, राजा बलवन्त सिंह को पदच्युत करने के प्रयास में निरन्तर लगा रहा परन्तु अंग्रेजों के संरक्षण के कारण 1770 ई0 तक राजा बलवन्त सिंह ने आजीवन अपने क्षेत्र पर अधिकार बनाए रखा ।[79]

1707 ई0 से 1761 ई0 के मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजाओं को वाह्य गतिविधियों में अपनी श्रेष्ठतम तथा क्षमता का प्रदर्शन तो करना ही पडता था परन्तु वे पारिवारिक विवादों में भी काफी धैर्य का प्रदर्शन

- -

78• सी0यू0एचिसन, ए कलेक्शन आफ ट्रीटीज ····खण्ड-11, पृ0-77 बलवन्त नामा, पृ0-57, 58, तथा सैयद गुलाम हुसैन खाँ, सियर-उल-मुताखरीन खण्ड-11 ﴾नोटामनुस कृत अंग्रेजी अनुवाद﴿ पृ0-584, 585

79• बलवन्तनामा, पृ0-58, 63, सैय्यद गुलाम हुसैन खाँ, सियर-उल-मुताखरीन खण्ड-11 ﴾नोटागानुस कृत अंग्रेजी अनुवाद﴿ पृ0-20, 21, विल्टन ओल्टम, भाग-1, पृ0-104, 105, ए0एल0श्रीवास्तव, शुजाउद्दौला, खण्ड-11, पृ0-30, 31 तथा 112 से 115

भी करते थे । बाँसी, गोरखपुर, के सत्तासी राजा, मझौली के राजा, पडरौना के राजा, बुट्वल ,आजमगढ़, माहुल, बनारस, भदोही, अमोढा, आदि क्षेत्रों के राजा व जमींदार पारिवारिक विवाद व कलह का भी सामना करते रहे । इन राजाओं व जमींदारों के पारस्परिक सम्बन्ध में भी सद्भावनापूर्ण न थे । क्षेत्र विस्तार की नीति के फलस्वरूप उनमें संघर्ष होना स्वाभाविक था । पूर्वी उत्तर प्रदेश में गोरखपुर, बुट्वल, सत्तासी राजाओं तथा पडरौना के शासकों के मध्य संघर्ष होता रहा । अमोढा में राजपूत तथा कायस्थ जमींदारों के मध्य संघर्ष हुआ ।[80] सत्तासी राजाओं का परगना सिलहट के प्रश्न पर मझौली के राजाओं से संघर्ष हुआ । आजमगढ के राजाओं का अपनी जमींदारी के अन्तर्गत पलवार राजपूतों से घाघरा नदी के उत्तर में गोरखपुर के जमींदारों से तथा दक्षिणपूर्व में बनारस के राजाओं के साथ शत्रुता पूर्ण सम्बन्ध बना रहा ।[81]

80• एल0वीने, सेटिलमेण्ट रिपोर्ट•••गोरखपुर,1868,पृ0- 249,250

81• जे0आर0रीड, रिपोर्ट,आन दि डिस्ट्रिक्ट आफ आजमगढ ••••1877 एपेडिंक्स नं0-1, पृ0-8ए, गिरधारी, इन्तजाम-ए-राज-ए-आजमगढ़, पृ0-49बी,50ए, बल्वन्तनामा, पृ0-26, तथा सैयद नजमुल रजा रिजवी पृ0 - 290

माहुल के राजा दीदार जहाँ का आजमगढ़ के राजा आजम खाँ द्वितीय से शत्रुता पूर्ण सम्बन्ध रहा ।[82] बनारस के राजा बलवन्त सिंह का लखनेसर के सेंगर राजपूत जमींदारों से संघर्ष हुआ ।[83] इसी प्रकार के आपसी संघर्ष गडवारा, बगुली आदि के मध्य भी हुए । बड़ागाँव, कोपा तथा खारीद के जमींदारों का बलिया के हल्दी राजाओं से संघर्ष चलता रहा ।

इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ से ही पूर्वी उत्तर प्रदेश के राजाओं ने मुगल साम्राज्य के विघटन का लाभ उठाकर विद्रोही आचरण अपनाया और स्वतन्त्र सत्ता स्थापित करने का प्रयास किया । बनारस के राजा ने तो स्वायत्त राजा बनने का सफल प्रयास किया । 1761 ई0 तथा कालान्तर में अंग्रेजी सत्ता को भी इन्हीं राजाओं तथा जमींदारों ने पूर्वी उत्तर प्रदेश में प्रवेश करने का अवसर दिया । अतः ये

- -

82. सैयद नजमुल रजा रिजवी, पृ0- 29।

83. बलवन्तनामा, पृ0 - 48 से 50

स्पष्ट है कि पारस्परिक कलह , संघर्ष और स्वार्थ परक राजनीति ने इन राजाओं और जमींदारों को पतन शील होने की ओर अग्रसर किया जिसकी परिणति अंग्रेजी सत्ता की स्थापना के रूप में हुई ।

xxxxxxxxxx
xxxxxxxx
xxxxxx
xxxxx
xxx
x

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय - तीन

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

x

x सामाजिक - इतिहास x

x

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

सामाजिक - इतिहास

प्राचीन काल से ही भारतीय समाज विभिन्न जातियों एवं समुदायों के सम्मिश्रण का केन्द्र रहा है । मध्यकालीन भारत में इस्लामी संस्कृति का तीव्र गति से विस्तार होने के कारण मुस्लिम समुदाय ने भारतीय समाज में एक विशेष स्थान निर्धारित किया । वहीं हिन्दू समाज ने अपनी पुरातन संस्कृति एवं मान्यताओं के तहत अपना स्थान अक्षुण्य बनाए रखा । हिन्दू समाज ने मुस्लिम समाज के साथ समन्वय स्थापित करते हुए विपरीत परिस्थितियों में भी अपनी परम्पराओं को जीवित रखा । भारत में इस नये सम्मिश्रित समाज के उदाहरण के रूप में पूर्वी उत्तर प्रदेश का समाज है, जिसके अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से हमें इसे हिन्दू और मुस्लिम वर्गों में विभक्त कर रहे हैं ।

हिन्दू समाज :-

वर्ण व्यवस्था हिन्दू समाज की एक महत्वपूर्ण विशेषता है । यद्यपि हिन्दू समाज में प्रारम्भ से ही जाति निर्धारण व्यक्ति के जन्म के

आधार पर होता रहा है।[1] प्रसिद्ध यात्री अलबरूनी ने मध्यकालीन हिन्दू समाज के सामाजिक वर्गों का विस्तृत वर्णन किया है। जाति प्रथा के सम्बन्ध में अलबरूनी का मत इस प्रकार है - " हिन्दू अपनी जाति को वर्ण अथवा रंग कहते हैं तथा वंशावली की दृष्टि से उन्हें "जातक" अथवा "जन्म " कहते हैं। आरम्भ से ही ये चार जातियाँ (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) विद्यमान है।"[2]

ब्राह्मण :-

ब्राह्मण हिन्दू समाज में सर्वश्रेष्ठ स्थिति रखता था। बारहवीं शताब्दी के अन्त तक ब्राह्मण समाज प्रादेशिक आधार पर विभाजित हो रहा था तथा उनमें जातियाँ और उपजातियाँ स्थापित हो रही थीं।[3]

1· दि लीगेसी आफ इण्डिया, सं0 जी0सी0गारेट, आक्सफोर्ड, 1962, पृ0 124 ; सी0डी0एम0जोड, दि हिस्ट्री आफ इण्डियन सिविलाइजेशन, लन्दन, 1936, पृ0 - 4

2· अलबरूनीज इण्डिया, भाग-1, (सचाऊ), पृ0 - 100

3· वी0एन0एस0 यादव, पृ0 - 19

इस समय पूर्वी उत्तर प्रदेश में ब्राह्मणों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई। इस काल में ब्राह्मण कोई भी व्यवसाय कर सकते थे।[4] परन्तु ब्राह्मण अधिकांशत: अध्यापन के ही कार्य में संलग्न रहे।[5] इनको प्राय: विप्र कहकर भी सम्बोधित किया जाता था।[6] क्षेत्रीय शासकों के पतन के साथ ही ब्राह्मणों की स्थिति निरन्तर दयनीय होती चली गयी तथा अट्ठारहवीं शताब्दी में इस वर्ग ने व्यवसायिक प्रवृत्ति के चलते अनेक व्यवसायों को अपनाया।[7]

4• वी०एन०एस०यादव, पृ0- 19

5• कबीर ग्रन्थावली, दोहा-63 पृ0- 10 ; भूषण ग्रन्थावली, पृ0-83 छन्द - 293; सोमनाथ ग्रन्थावली, खण्ड-2, पृ0-319, छ0-3

6• मृगावती, दो0 - 1, पृ0-1, तथा मधुमालती, दो0-1, पृ0- 81, 102, 438•

7• वी०एन०एस०यादव, पृ0- 24, पृ0-24, तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, द सोसायटी आफ नार्थ इण्डिया इन द सिक्सटीन्थ सेन्चुरी, पृ0-28, 29

क्षत्रिय :-

प्राचीन समाज की व्यवस्था के अन्तर्गत अगला स्थान क्षत्रिय को प्राप्त था। जिसके विषय में यह धारणा थी कि इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के बाहु तथा उनके कन्धों से हुई है ।[8] समाज में क्षत्रियों का स्थान ब्राह्मण के बाद था ।[9] क्षत्रियों का कार्य प्रजा पर शासन करना तथा उनकी रक्षा करना था ।[10] मुसलमानों के आगमन के पश्चात् से ही समाज में परिवर्तन की गति बढ़ गयी । तुर्कों के बढ़ते हुए प्रभाव एवम् क्षत्रियों की पराजय से उनके राज्य समाप्त होने लगे तथा हिन्दू समाज

---

8. अलबरूनीज इण्डिया, (सचाऊ), पृ0- 101

9. वही, पृ0- 136, कबीर ग्रन्थावली, दो0 - 11, पृ0- 376 ; सोमनाथ ग्रन्थावली पृ0- 699, दो0 - 20 , ट्रेवर्नियर, ट्रेवल्स इन इण्डिया , पृ0 - 143.

10. अलबरूनीज इण्डिया, भाग - 1, पृ0 - 161-62 , देव ग्रन्थावली, पृ0 - 185, छन्द - 94, ट्रेवर्नियर , पृ0 - 143 ।

की प्राचीन मान्यताएं व परम्पराएं ही नहीं अपितु वर्ण व्यवस्था भी नष्ट होने लगी ।[11] इस प्रकार अट्ठारहवीं शताब्दी में क्षत्रियों की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गयी । राजकुल से सम्बन्धित होने के कारण इन्हें राजपुत्र अथवा राजपूत कहकर पुकारा गया ।[12]

उनकी अनेक शाखाएं प्रशाखाएं थीं । तत्कालीन समय में राजपूतों ने मुगल साम्राज्य की अत्यधिक सेवा की और उनके साम्राज्य

- -

11· वर्ण रत्नाकर, पृ0- 31 , तथा इनके पतन शील होने की प्रक्रिया के लिये देखें, हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 37, 38·

12· खाफी खान, मुन्तखब्वुल - लुबाब §इलियट व डाउसन, भाग - 7, पृ0- 300 से 302 § , देखें आर0 एस0शर्मा की इण्डियन फ्यूडलिज्म्, ट्वेवर्नियर पृ0- 143 , मोहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इण्डिया, पृ0-14, 19, काली किंकर दत्ता, सर्वे आफ इण्डियाज सोशल लाइफ एण्ड इकनामिक कन्डीशन इन "एट्टीनथ सेन्चुरी, पृ0- 27,65, 68 ·

विस्तार के लिए वे ही मूलत: उत्तरदायी रहे ।[13]

वैश्य :

केवल व्यवसायिक कार्यों में लिप्त रहने वाला वर्ग वैश्य के रूप में जाना जाता था ।[14] ब्राह्मण व क्षत्रिय के पश्चात् समाज में वैश्य का स्थान था । दसवीं शताब्दी में राजनीतिक व आर्थिक पतन के कारण वैश्यों की स्थिति परिवर्तित हो गयी तथा वैश्य एवं शूद्र में कोई विशेष अन्तर नहीं रह गया ।[15] परन्तु बारहवीं शताब्दी तक वाणिज्य के विकास के साथ ही वैश्य समुदाय की स्थिति सुदृढ़ हो गयी तथा अठारहवीं शताब्दी

13· ट्रेवर्नियर, पृ0 - 143, शिवराज भूषण, पृ0- 34, छ0 204, गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास ।

14· अलबरूनीज इण्डिया, (सचाऊ), पृ0 - 138

15· राधेश्याम, पृ0 - 209

में पूर्वी उत्तर प्रदेश में यह वर्ग अपनी समृद्धि एवं सम्पन्नता की स्थिति में विद्यमान था ।[16]

शूद्र :-

प्राचीन भारतीय समाज में शूद्रों को हेय दृष्टि से देखा जाता था । वे दासों की भाँति कार्य करते थे , जिसके बदले में उच्च जातियों द्वारा प्रदत्त धन ही उनकी आजीविका का साधन था ।[17] बारहवीं शताब्दी के बाद इनकी स्थिति में परिवर्तन हुआ तथा पन्द्रहवीं शताब्दी तक इन्हीं में से धार्मिक व सामाजिक सुधारक भी उत्पन्न हुए, जिन्होंने भक्ति आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया ।[18] अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक पूर्वी उत्तर प्रदेश के शूद्रों की स्थिति में बहुत परिवर्तन आ चुका था,

---

16• ट्रेवर्नियर, पृ0-144,145 , मनूची, भाग-3, पृ0- 36, 293, काली किंकर दत्ता, पृ0-43, मो0यासीन , पृ0- 85

17• सोमनाथ ग्रन्थावली , पृ0- 627, छ0 - 49

18• हेरम्ब चतुर्वेदी, उल्लिखित शोध प्रबन्ध, पृ0- 58

परन्तु फिर भी यह वर्ग समाज में शोषण का पात्र बना रहा ।[19]

पूर्वी उत्तर प्रदेश के हिन्दू समाज के ढाँचे में आन्तरिक एवं वाह्य दबावों के कारण निरन्तर परिवर्तन आया तथा तत्कालीन हिन्दू समाज स्पष्टतः तीन वर्गों में विभाजित हो गया । प्रथम वर्ग -अभिजात वर्ग था, द्वितीय पुरोहित वर्ग तथा तीसरा सर्वसाधारण वर्ग था ।

हिन्दू अभिजात वर्ग :-

इस वर्ग में हिन्दू शासक, अमीर तथासमाज के उच्च परिवारों के सदस्य थे । विभिन्न श्रेणियों के हिन्दू अमीर तथा स्वायत शासकों के लिए कई पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया गया । उदाहरण-

---

19· ट्रेवर्नियर, ट्रेवल्स इन इण्डिया, पृ0 - 144, देव ग्रन्थावली , पृ0-5 दो 0 -9, काली किंकर दत्ता, पृ0 - 621, जी0एस0 घुर्ये, कास्ट, क्लास एण्ड आक्यूपेशन, पृ0 - 80

स्वरूप राजा, राना, राय, रावत जमींदार इत्यादि ।[20]

इस काल में राज्यों के अन्तर्गत स्वायत्त शासकों का अस्तित्व विद्यमान था । इसी काल में गोरखपुर तथा खरोसा के रायों का उल्लेख प्राप्त होता है।[21] जौनपुर में हिन्दू अभिजात वर्ग काफी सुदृढ़ स्थिति में विद्यमान था । इस प्रकार प्रशासन में मुसलमानों की प्रधानता के बावजूद हिन्दू अभिजात वर्ग की स्थिति प्रतिष्ठित बनी रही । हिन्दू जमींदारों की स्थिति मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर थी । प्रथम, कि वे शासक के प्रति निष्ठावान है या नहीं तथा द्वितीय कि उनकी व्यक्तिगत सामाजिक स्थिति कैसी है ? यद्यपि इस काल में पूर्वी उत्तर प्रदेश में अनेक हिन्दू शासकों ने केन्द्र की कमजोर स्थिति का

- -

20. हेरम्ब चतुर्वेदी, अध्याय 2,3 पृ0 - 65 से 138 तथा राधेश्याम पृ0 - 270

21. रिजवी, पृ0 - 40

लाभ उठाकर अपने को स्वतन्त्र घोषित किया । परन्तु अधिकांश हिन्दू जमींदार और अमीर केन्द्र के प्रति अधिकांश हिन्दू जमींदार और अमीर केन्द्र के प्रति निष्ठावान बने रहे तथा राज्य की निष्ठा प्राप्त करते रहे । जिन विद्रोही हिन्दू शासकों का उल्लेख प्राप्त होता है, वे समय - समय पर दण्डित भी किये गये ।

हिन्दू पुरोहित वर्ग :-

हिन्दू पुरोहितों ने ज्योतिषियों के रूप में अपनी पहचान बनाई ।[22] तत्कालीन समाज में ज्योतिषियों को उच्च स्थान प्राप्त था तथा उन्हें तत्कालीन शासकों का प्रश्रय भी प्राप्त हुआ । कोई भी मुहल्ला या कस्बा ज्योतिषियों से रिक्त नहीं था । ये ज्योतिषी कुण्डलियाँ बनाया करते थे तथा शहर के लोग ज्योतिषी के बिना परामर्श के कोई कार्य सम्पादित

- -

22• वी0एन0एस0 यादव, पृ0 - 20, तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0 - 22,

23•

नहीं करते थे । इस प्रकार इस काल में ब्राह्मणों ने ज्योतिष विद्या को अपनी आजीविका का साधन बना लिया था ।

सर्वसाधारण वर्ग :

इस काल में विभिन्न प्रकार के व्यवसायों को माध्यम बनाकर अपनी आजीविका चलाने वाला वर्ग सर्वसाधारण वर्ग कहा जाता था । हिन्दुओं में इन व्यापारियों के अर्न्तगत विभिन्न व्यवसाय होते थे । हिन्दू व्यापारी वर्ग इस काल में इतना समृद्ध हो गया था कि वह लोगों को ऋण प्रदान करने लगा था । जिन लोगों ने भिन्न - भिन्न व्यवसाय के माध्यम से अपनी आजीविका निर्धारित की, वे निम्नवत् हैं -

1. कल्लाल :-

मदिरा बनाने वाला कल्लाल के नाम से जाना जाता था, शराब उत्पादन में बड़ी भट्ठियों का प्रयोग किया जाता था, जिसमें "लहण " (खाद्यान्न) में गुड़ आदि मिलाकर मदिरा का निर्माण होता था।

2. स्वर्णकार :

सोने, चाँदी के आभूषणबनाने व बेचने वाले व्यवसायियों को स्वर्णकार कहा जाता था । इस काल में स्वर्णकार सोने की सफाई और शुद्धता से परिचित थे ।[23] अतः इस काल में आभूषण बनाई, ढलाई, व कटाईआदि का कार्य भी बारीक एवम् प्रशिक्षित ढंग से होता था ।

3. जुलाहे :-

यह वर्ग सूत कातने का काम किया करता था, जिससे वस्त्र तैयार किया जाता था ।

4. लोहार :-

लोहे द्वारा निर्मित्त सामानों को बनाने व बेचने वाले को लोहार के नाम से जाना जाता था । तलवार से लेकर व साधारण

---

23. घनानन्द (रीति काव्य संग्रह) पृ0-66, छ0-11, सुजान विलास, पृ0 - 670, छ0 -52,53, कालीकिंकर दत्त, पृ0-47, तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0 - 97

मकान व मन्दिरों के निर्माण तक में लोहार का कार्य आवश्यक ही नहीं अपरिहार्य था ।[24]

5· कुम्हार :-

मिट्टी के बर्तनों का निर्माण करने वाले "कुम्हार" को कबीरदास ने "कुलाल " कहा है ।[25] अठारहवीं शताब्दी में सामाजिक एवं धार्मिक आयोजनों के अवसर पर धातु निर्मित्त बर्तनों का बहुतायत से प्रयोग तो होता ही था, परन्तु मिट्टी के बर्तनों का विशेष महत्व था।

- -

24· मआसीर-ए-आलमगीरी, पृ0 - 187, कबीर, दो0-5, पृ0 -44, मृगावती, दो0- 35, पृ0 - 28, देव ग्रन्थावली, दो0 - 94, पृ0 - 278, हेरम्ब चतुर्वेदी , पृ0 - 95, 96, गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास, पृ0 - 482 ।

25· कबीर, दो0 -5, पृ0 - 44, हेरम्ब चतुर्वेदी, शोध प्रबन्ध,(अप्रकाशित, इ0वि0वि0) पृ0 -95,96

आधुनिक काल में भी ग्रामीण परिवेश के सामाजिक- धार्मिक कृत्यों पर मिट्टी के ही बर्तनों का प्राय: प्रचलन है । अठारहवीं शताब्दी में कुम्हार विभिन्न आकार प्रकार के मिट्टी के बर्तन बनाने में प्रवीण थे । मध्यकाल में कबीर ने मिट्टी के कच्चे बर्तनों को पकाने की विभिन्न विधियों का वर्णन किया है ।[26]

7. <u>बढ़ई :-</u>

लकड़ी का कार्य करने वाला व्यक्ति बढ़ई कहलाता था । लोहार की भाँति बढ़ई भी भवन निर्माण में आवश्यक रूप से संलग्न थे । अठारहवीं शताब्दी में भी घोड़ों के प्रचलन के कारण घोड़े की काठी के निर्माण का एक बड़ा उद्योग भी स्थापित हो गया था । बैलगाडी आदि बनाने के कार्य में भी बढ़ई संलग्न थे ।

---

26. कबीर, पृ0 - 1, दो0 - 3।

7. तेली :-

अठारहवीं शताब्दी में सरसों व अन्य तिलहनी फसलों से तेल निकालने का कार्य होता था, और इस कार्य को जो वर्ग करता था, उसे तेली कहा जाता था । यह कार्य वह अपने कोल्हू में बैलों की सहायता से करता था ।[27]

8. नाई :-

बाल बनाने और हज्जाम करने वाले को नाई कहा जाता था, अनेक अनुष्ठानों, सामाजिक और धार्मिक आयोजनों में इनकी उपस्थिति आवश्यक थी और ये वर्ग समाज के अविभाज्य अंग के रूप में था ।[28]

9. रंगरेज :-

कपड़ों की रंगाई एक व्यवसाय के रूप में प्रचलित था

---

27. देव ग्रन्थावली, दो० 92, पृ0-268, इरफान, पृ0-59, नीरा दरबारी पृ0- 179

28. हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0 - 87-88

तथा इस कार्य को करने वाले को "रंगरेज " कहा जाता था ।

10· नटः-

विभिन्न करतब दिखाकर लोगों का मनोरंजन करने वालों वालों को " नट " कहा जाता था ।[29] कबीर ने इन्हें बाजीगर भी कहा है ।[30] इस व्यवसाय में स्त्रियों की भी भागीदारी रहती थी । नट अथवा बाजीगर के साथ वे प्रायः मनोरंजन कार्यों में सहभागी थीं, इन्हें नटी अथवा बाजीगरनी कहा जाता था ।[31]

11· तंबोली :-

अठारहवीं शताब्दी के काल में पान सुपाड़ी के व्यवसाय में संलग्न व्यापारियों को "तंबोली " कहा जाता था ।[32] प्रायः शासकों के यहाँ स्वागत सत्कार हेतु विशेष रूप से इनकी नियुक्ति की

- -

29· कबीर, दो0-29, पृ0-11, तथा दो0 -109, पृ0-209

30· कबीर, दो0 - 34, पृ0 - 287

31· हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0 - 127

32· देव ग्रन्थावली , दो0 - 92, पृ0 - 268

जाती थी । पूर्वी उत्तर प्रदेश में पान का बहुतायत से प्रचलन था । और इसकी पैदावार भी अच्छी थी ।

12. धोबी :-

कपड़े धुलने वाले को धोबी कहा जाता था ।[33] आमतौर पर ये कुलीन और अभिजात्य वर्ग के कपड़े धुला करते थे । इनका महत्व अठारहवीं शताब्दी के समाज में भी यथावत बना रहा । अब मध्यम वर्ग के कपड़ भी ये लोग धोने लगे थे । शासकों के यहाँ इनकी विधिवत नियुक्ति भी की जाती थी ।[34] शताब्दियों से भारतीय ग्रामीण समाज कृषि कार्यों में ही विशेष रूप से संलग्न रहा । कृषि कार्य हेतु भी श्रमिक एवं ग्रामीण शिल्पकार तथा सेवक हिन्दू समाज के अविभाज्य अंग के रूप में विद्यमान रहे ।[35]

---

33. देव ग्रन्थावली, दो0-24, पृ0- 125, काली किंकर दत्त, पृ0-48, हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 86,87

34. हेरम्ब चतुर्वेदी , अध्याय-2 और 3

35. हेरम्ब चतुर्वेदी, अध्याय - 2 और 3

हिन्दू समाज के बहुत से व्यक्ति शासन की सैन्य व्यवस्था में उच्च पदों पर आसीन थे । पूर्वी उत्तर प्रदेश , जो प्राय: मुगल शासकों की छत्रछाया से स्वतन्त्र हो चुका था, यहां के हिन्दू सरदारों में नवल राय, राजा गिरधर बहादुर, छबीला राम आदि प्रमुख थे, जिन्होंने पूर्वी उत्तर प्रदेश की शासन व्यवस्था में अपना हाथ बटाया और शासन को प्रभावित करते हुए अपना प्रभाव स्थापित किया । इनकी भू राजस्व और सैन्य प्रशासन के अन्तर्गत विभिन्न हिन्दू अधिकारियों की नियुक्ति की गयी ।

मुस्लिम समाज :-

अठारहवीं शताब्दी के काल में मुस्लिम समाज की संरचना अत्यन्त सरल थी । मुगल साम्राज्य में 1707 ई0 के बाद के वर्षों में पूर्वी उत्तर प्रदेशके क्षेत्र प्राय: स्वतन्त्र हो चुके थे । इलाहाबाद,जौनपुर,बनारस, गोरखपुर की सरकारें अभी भी राज्यपालों के अधीन थीं । परन्तु मुगल शासन का प्रभाव अभी भी बना हुआ था । ये शासक प्रजा का नेता तथा समाज का प्रधान होता था । एक शासक तथा समाज के नेता की हैसियत

तक विदेशी मुसलमानों का आगमन निरन्तर जारी रहा ।[39] विदेशी मुसलमानों ने इस्लाम के सभी नियमों का पालन किया ।[40] विदेश से आने वाले प्रमुख मुसलमानों में तुर्क,अफगान,मुगल और ईरानी थे।[41] इन्होंने भारतीय मुसलमानों पर अपनी श्रेष्ठता स्थापित की और ये कई वर्गों में विभाजित हो गये । इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी में पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में मुसलमानों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई । अब भारतीय समाज में मुसलमानों ने अपना अलग अस्तित्व निर्धारित कर लिया था । आप्रवासी मुसलमानों के धर्म परिवर्तन के कारण भारतीय समाज में मुसलमानों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि ने अनेक समस्याएं उत्पन्न की तथा मुस्लिम समाज में आन्तरिक संघर्ष उत्पन्न होने लगा जिसके कारण वर्ग भेद की भावना को बल मिला । परिणाम स्वरूप मुस्लिम समाज वर्गों में विभाजित हो गया ।

- -

39. राधेयाम , पृ0 - 144

40. नीरा दरबारी, नार्दर्न इण्डिया अण्डर औरंगजेब,सोशल एण्ड इकनामिक कण्डीशन, पृ0 - 139

41. वही ।

मध्यकाल में दो स्थूल सामाजिक वर्ग थे - "अहल-ए-शेप" ¤तलवारधारी ¤ तथा " अहल-ए-कुलम " ¤लेखनीधारी ¤ [42] इसमें " अहल -ए- कुलम " वर्ग के लोग अठारहवीं शताब्दी तक पूर्णरूपेण विदेशियों तक ही सीमित था । इसी वर्ग से कातिब, दबीर, वजीर आदि की नियुक्ति होती थी । [43] कुलीन वर्ग ¤उमरा अथवा खान ¤ की गणना "अहल - ए- शेप " की श्रेणी में होती थी । वे साधारणतया शासक के पक्ष में होते थे । इस काल में मुस्लिम सैय्यदों का भी काफी सम्मान था । और उन्होंने समाज में काफी उच्च स्थान प्राप्त कर लिया था । [44] कुलीन वर्ग की रचना विजातीय थी, यथा तुर्की, अफगानी, अरबी पारसी, मिस्त्री, मुगल और भारतीय । मुस्लिम अभिजात्य वर्ग मध्यकाल

- -

42. हबीबुल्लाह, द फाउन्डेशन आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृ0-274

43. वही

44. मो0 यासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ मेडिवल इस्लामिक इण्डिया, पृ0 - 19

प्रारम्भिक हिस्से तक विदेशियों द्वारा गठित था । किन्तु अठारहवीं शताब्दी तक वे इस समाज के अविभाज्य अंग बन गए ।[45] भारतीय मुसलमानों की अधिकांश संख्या उन्हीं लोगों की है, जिनके पूर्वजों ने इस्लाम स्वीकार किया था ।[46] कुलीन वर्ग राज्य में सेनानायकों, प्रशासकों, तथा यदा- कदा राजकर्ता के रूप में अपने प्रभावयुक्त सामर्थ्य का प्रयोग करता था ।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में अन्य क्षेत्रों के समान ही उलेमाओं का महत्व था । ये आध्यात्मिक गुरू थे और आध्यात्मिक सिद्धांतों की व्याख्या करते थे ।[47] इस वर्ग के व्यक्ति अदालती और धर्मोपदेशक विषयक सेवाओं पर नियुक्त किये जाते थे । प्रत्येक मुस्लिम बस्ती की

- -

45. युसुफ हुसैन, डिलम्पसेज आफ मेडिवल इण्डियन कल्चर (एशिया पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली) पृ0- 129

46. वही

47. इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसीडिंग्स, पटना, 1954 तथा एम0 मुजीब पृ0- 207.

मस्जिद में एक इमाम, कातिब और एक मुफ्ती होते थे जो इस पक्ष का प्रतिनिधत्व करते थे तथा जिसे राज्य की मान्यता प्राप्त होती थी । वे मुस्लिम शिक्षा संस्थाओं पर भी नियंत्रण रखते थे । तथा इस प्रकार के धार्मिक चिन्तन एवं शिक्षा को प्रतिपादित करते थे, जो उसके विचारों को सुदृढ आधार प्रदान करता था ।[48] इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी में भी मध्यकाल की भाँति उलेमा वर्ग प्रभावी एवं सशक्त वर्ग था ।

सामान्य रूप से मुस्लिम समाज जाति प्रथा विहीन समाज था । कुलीन वर्ग के अतिरिक्त अन्य मुस्लिम जनता जनसाधारण के रूप में विद्यमान थी । इस काल में मुसलमानों का मुख्य व्यवसाय व्यापार था । इन्हीं मुस्लिम व्यापारियों ने मुसलामनों के मध्य वर्ग का सृजन किया । इसके अतिरिक्त विविध शिक्षा व धर्म प्रचार के साथ साथ मदरसों व मस्जिदों में शिक्षा देने वाले धर्मशास्त्री, शिक्षक, उपदेशक ,दार्शनिक ,साहित्यकार, लेखक तथा इतिहास कार आदि भी मध्य वर्ग के सदस्यों में समाहित थे ।[49]

48· तज्जालिये नूर, जिल्द -2, पृ0 - 34

49· राधेश्याम, पृ0- 191

इस प्रकार जैसे - जैसे नगरी करण की प्रवृत्ति बढ़ी, वैसे वैसे सामान्य आय अर्जित करने वाले लोगों का उत्कर्ष हुआ । ये मुसलमान समाज के मध्य वर्ग का अंग थे । मध्य वर्ग के नीचे मुस्लिम हज्जाम, दर्जी, धोबी मल्लाह घसियारे, बाजे वाले, तम्बोली, माली, तेली, मदारी, संगीतज्ञ और चरवाहे इत्यादि थे । भिखारी और निराश्रित भी इसी श्रेणी में आते थे ।[50]

मुसलमान आबादी का एक वर्ग गृह सेवकों तथा गुलामों के रूप में कार्यरत था, जिनकी विशाल संख्या थी । प्रत्येक शासक, कुलीन वर्ग तथा सम्पन्न व्यक्ति स्त्री पुरुषों को गुलाम के रूप में रखते थे । उन्हें गृहस्थी के कार्यों के अलावा कल कारखानों में भी नियुक्त किया जाता था ।[51] कभी - कभी शासक वर्ग इनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर उन्हें

- -

50. ए0 बी0एम0 हबीबुल्लाह, फाउन्डेशन आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया, पृ0- 274

51. पी0एन0ओझा, पृ0- 133-134

मुक्त कर देता था । चीन तुर्किस्तान, ईरान आदि देशों से गुलाम स्त्री पुरूषों को लाया जाता था । दासियाँ दो प्रकार की होती थीं - प्रथम वे, जो गृह सेवाओं के लिए प्रयुक्त होती थीं, द्वितीय श्रेणी में वे दासियाँ थीं जो मनोरंजन व समागम के लिए क्रय की जाती थीं ।

हिन्दू मुस्लिम अर्न्तक्रिया :-

पूर्वी उत्तर प्रदेश की मिश्रित जनसंख्या में अपनी विशिष्ट जीवन पद्धति का निर्वाह करते हुए हिन्दू मुसलमान साथ - साथ रहते थे । दोनों वर्गों की परम्परायें, विश्वास और विचार धारा भिन्न - भिन्न थे । विजयी मुसलमानों की हिन्दू भावनाओं एवं विश्वासों के प्रति सम्मान की भावना काफी कम थी । साथ साथ रहते हुए भी हिन्दुओं तथा मुसलमानों के विचारों में भिन्नता थी । ये स्पष्ट है कि मध्यकालीन भारतीय समाज में भी हिन्दू तथा मुसलामनों के मध्य विचारों में विभाजन था । तथा उनकी आध्यात्मिक, प्रेरणा केस्रोत अलग

अलग थे।[52] यही स्थिति अठारहवीं शताब्दी में भी बनी रही। जाति प्रथा इस विभाजन का मुख्य आधार थी, जिसका भारत के समस्त समाज सुधारकों द्वारा विरोध किया गया। ये विद्वान वर्णाश्रम व्यवस्था के साथ - साथ अन्ध-विश्वासों पर आधारित धर्मों की शत्रुता का उन्मूलन करने का सतत् प्रयास करते रहे। दोनों सम्प्रदायों ने एक दूसरे की अच्छी बातों का समर्थन किया। मुस्लिम सभ्यता की यह प्रमुख विशेषता थी कि वे जब भी मिलते थे तो परस्पर विचारों के आदान प्रदान को प्रमुखता देते थे। इस अच्छी परम्परा से हिन्दू भी प्रभावित हुए।

समाज में स्त्रियों की दशा :

समाज में स्त्रियों की दशा से ही सामाजिक अवस्था प्रतिबिम्बित होती है।[53] मध्यकाल में भी स्त्रियों की स्थिति प्राचीन भारतीय स्त्रियों के समान उच्च नहीं थी।[54] किसी भी स्त्री को स्वतन्त्र रूप से जीवन निर्वाह करने का कोई अधिकार नहीं था। जब वे अविवाहि

---

52. युसुफ हुसैन, पृ0- 121-122

53. रेखा मिश्रा (वर्तमान में प्रो0 रेखा जोशी), वीमेन इन मुगल

होती थीं तो वे पिता के नियंत्रण में रहती थी विवाहोपरान्त पति के और पति की मृत्यु के बाद पुत्र के नियंत्रण में रहना पड़ता था ।

होती थीं । तो वे पिता के नियंत्रण में रहती थी, विवाहोपरान्त पति के और पति की मृत्यु के बाद पुत्र के नियंत्रण में रहना पड़ता था ।[55]

शासक वर्ग एवं कुलीन वर्ग की स्त्रियों का एक विशिष्ट स्थान था । औरंगजेब और उसके परवर्ती काल में भी स्त्रियों के अधिकारों में कोई अन्तर नही पड़ा और वे राज - काज में भी पर्याप्त रूचि लेती रही ।[56] राजपरिवारों में स्त्रियों को पर्याप्त सम्मान प्राप्त था । शासक परिवार की स्त्रियों को उच्च शिक्षा का भी लाभ मिलता था । जबकि साधारण वर्ग की स्त्रियों को मात्र सामाजिक परम्पराओं एवं मान्यताओं का ही पालन करना पड़ता था और वे घरेलू कार्यों में ही व्यस्त रहती थीं । साधारण वर्ग की कुछ महिलाएं ही संगीतकार, अध्यापिका और नृत्यांगना के रूप में कार्य करती रहीं । मध्यम-वर्गीय

- -

55. मनु, पृ0- 327,328 तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0-139-140

56. अन्सारी, आई0सी0एस0, खण्ड-34, पृ0-3, रेखा मिश्रा, पृ0- 53

परिवार में स्त्री माँ के रूप में श्रद्धेय पत्नी , सहयोगी के रूप में देखी जाती थी तथा पारिवारिक मामलों में पर्याप्त हस्तक्षेप रखती थी । यद्यपि वाह्य मामलों में उनका हस्तक्षेप नहीं होता था । तत्कालीन भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति का अवलोकन निम्नलिखित मापदण्डों के आधार पर किया जा सकता है -

पर्दा - प्रथा :

पर्दा को फारसी शब्द के रूप में जाना जाता है तथा शाब्दिक अर्थ होता है "आवरण" । अपने मूल अर्थ के साथ ही इस शब्द ने एक और अर्थ अपना लिया । स्त्रियों की एकान्तता । जिसकी सार्थकता परिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा पर निर्भर करती है। यह प्रथा प्राचीन भारत में मान्य नहीं थी ।[57]

---

57. ए०एल०अल्टेकर, पोजीशन आफ वूमेन इन हिन्दू सोसायटी (1938) वाराणसी, पृ०- 206, ए० रशीद, सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इण्डिया, पृ०- 141-142, हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ०-181

भारत वर्ष में इस्लाम के आगमन के साथ ही पर्दा प्रथा का प्रचलन आरम्भ हुआ ।[58] सम्भवत: विदेशी आक्रमणकारियों से सुरक्षित रहने तथा कुछ सीमा तक शासक वर्ग के अनुसरण के रूप में यह प्रथा सामान्य हो चली थी ।[59] पूर्वी उत्तर प्रदेश के मुसलमान समुदाय में भी पर्दा प्रथा प्रचलित थी । मुस्लिम समाज में उच्च वर्ग की महिलाएं पर्दा करती थीं परन्तु जीविकोपार्जन के लिए बाहर जाने वाली निम्न और निर्धन वर्ग की महिलाएं इस प्रथा का कठोरता से पालन नहीं कर पाती थीं ।[60] उच्च वर्ग की महिलाएं हाथी अथवा पालकी पर बैठकर यात्रा करती थीं और उनके साथ अनुचर रहते थे । यात्रा करते

- -

58. बदायूँनी, खण्ड-2, पृ0-404-406, अब्दुर्रशीद, पृ0- 206 , हेरम्ब चतुर्वेदी , पृ0 - 147.

59. विद्यापति ठाकुर, सन्दर्भ -62, बर्नियर ,पृ0- 413, रेखा मिश्रा, पृ0- 134-35 हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 147

60. कीर्तिलता, पृ0- 32, कबीर,पृ0-275-76, दो0 15 , डी0लेट, पृ0- 81 , टाड, वाल्यूम-2, पृ0-710-711 ओविंगटन, पृ0-320

समय उच्च वर्ग की महिलाएं पर्दा का सख्ती से पालन करती थी ।[61] उच्च वर्ग की हिन्दू स्त्रियां भी पर्दा प्रथा का पालन करती थीं, जो उनके सम्मानीय होने का परिचायक था ।[62] मध्यम वर्ग की हिन्दू और मुस्लिम महिलाएं सामान्यतया बाहर जाने पर चेहरे पर आवरण अथवा बुर्के का प्रयोग करती थी।[63] हिन्दू स्त्रियों में पर्दे के प्रचलन को "घूंघट" कहा जाता था । सामान्यत: हिन्दू परिवार की स्त्रियां अपने श्वसुर तथा पति के सामने घूंघट निकालती थीं ।[64] इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अठारहवीं शताब्दी के तत्कालीन समाज में भी पर्दा प्रथा के प्रचलन के कारण हिन्दू और मुस्लिम स्त्रियों के विकास में पर्याप्त अवरोध उत्पन्न हुए । इस प्रथा ने ही उनमें " हीनता " की भावना एवं मानसिक अपरिपक्वता की भावना को प्रबल किया और उत्तरोत्तर उनकी स्थिति में गिरावट आती गयी ।

---

61. मनूची, खण्ड-2, पृ0-331, 333, 334, बर्नियर, पृ0-143, अन्सारी, खण्ड-34, पृ0-4, (दी हरम आफ ग्रेट मुगल्स), 1960
62. नीरा दरबारी, नार्दर्न इण्डिया अण्डर औरंगजेब, सोशल एण्ड इकनामिक कन्डीशन, पृ0-84
63. अन्सारी, खण्ड-34, पृ0-111, 112, 113, ओविंगटन, पृ0 - 213
64. जायसी (कहरानामा व मसलानामा) पृ0- 88, 92, मेन्डेलस्लो, पृ0-51

वेश्यावृत्ति :

इस काल में पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में समाज में वेश्याओं की पर्याप्त संख्या थी । विशिष्ट अवसरों, सार्वजनिक समारोहों, विवाह व त्योहारों के अवसर पर वेश्याओं तथा नर्तकियों को बुलाया जाता था ।[65] उन्हें सामान्यत: नर्तकी वेश्या, पातुर, गणिका आदि नामोंसे सम्बोधित किया जाता था ।[66] ये अवैध रूप से अपनी आजीविका में संलग्न रहती थीं और लोग अपनी काम पिपासा की तृप्ति के लिए इन वेश्याओं पर निर्भर थे । ये औरतें बाजार में एकत्रित होकर अन्य युवतियों को अपने पेशे में शामिल करने के लिए प्रलोभन देती थीं । वे अपनी अस्वाभाविक लज्जा का प्रदर्शन करके केवल धन प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहती थीं । वे पति के न होते हुए भी माँग में सिन्दूर धारण करती थीं । अठारहवीं शताब्दी में पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में इन वनिताओं को वर्णन से ये परिलक्षित होता है कि उस युग में वेश्या-वृत्ति एक विधि सम्मत सामाजिक बुनाई थी ।

सती प्रथा :

निःसंदेह हिन्दू स्त्री के विधवा होने की घटना को वैदिक काल

---

65. ज्योतिरेश्वर का वर्ण रत्नाकर (1940), चतुर्थ कल्लोल, पृ0-26, 27 तथा बर्नियर पृ0-274, तथा मनूची खण्ड-2, पृ0-337

66. वही तथा हेरम्ब चतुर्वेदी, पृ0- 179, 180

से ही दु:खद माना जाता रहा है ।[67] निम्न वर्गों के अतिरिक्त अन्य हिन्दू स्त्रियों को अपने पति की मृत्यु के बाद या तो अपने पति की चिता पर या एक अलग चिता पर जलकर मर जाना पड़ता था।[68] सामान्यतया हिन्दू स्त्री को पति की मृत्यु के बाद पुर्नविवाह की अनुमति नहीं थी।[69] उसके सामने दो ही विकल्प होते थे, या तो वह जीवन भर प्रताड़ित एवं दु:खदायी जीवन जिये अथवा मृत प्राप्त करने की इस आशिष्ट प्रथा को सती कहा गया ।[70] पति के साथ मरने को "सहगमन" अथवा "अनुमरण" कहा गया ।[71] प्राय: सती कर रहीं स्त्रियाँ अपने साथ सुहाग चिन्ह के साथ चिता पर आरूढ होती थी । इस प्रकार इस काल में सती प्रथा विद्यमान थी जो स्त्रियों की दयनीय और असहाय स्थिति की द्योतक थी । सती प्रथा न केवल पूर्वी उत्तर प्रदेश, उत्तरी भारत में प्रचलित थी वरन् कश्मीर बंगाल और राजस्थान में बहुतायत से प्रचलित थी ।[72] ये प्रथा विशेषकर राजपूत स्त्रियों के लिए एक अभिशाप

---

67. रेखा मिश्रा, पृ0-132, तथा नीरा दरबारी, पृ0- 80
68. विलियम क्रुक, पृ0- 153
69. नीरा दरबारी, पृ0- 80, 119
70. मनूची, खण्ड-3, पृ0- 116, नीरा दरबारी, पृ0 -80
71. मृगावती, पृ0-202, कबीर साखी सार, साखी-34, 36, पृ0-172, 173

थी, परन्तु इसमें गर्व की भावना भी निहित थी । पुर्नविवाह की घटनाएं भी इस काल में हुई । अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी में सती प्रथा को रोकने के सार्थक प्रयास को भी किये गये । मुगल शासकों ने भी अपने राज्यपालों को इस कुप्रथा को समाप्त करने के आदेश दिये थे ।[73] परन्तु 1707 ई0 के बाद पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में राजनैतिक अस्थिरता के वातावरण ने अवश्य ही इस कुप्रथा को समाप्त करने में ढील बरती होगी । 1707 ई0 में औरंगजेब ने भी सती प्रथा की निन्दा की और इस सम्बन्ध में उसने कामबख्श को एक पत्र भी लिखा । जिसमें अपनी प्रिय हिन्दू पत्नी उदयपुरी बेगम के सन्दर्भ में वर्णन किया ।[74] औरंगजेब की मृत्यु के बाद यह कुप्रथा राज्यपालों के ढीले रवैये के कारण रोकी न जा सकी और इसे हिन्दुओं का एक धार्मिक कृत्य मान लिया गया ।[75] यह कुप्रथा स्त्रियों की दयनीय स्थिति की द्योतक थी ।

---

73. थेवेनट एण्ड करारी, पृ0- 120

74. रूक्कात-ए-आलमगीरी, पत्र सं0 -8,72

75. चटर्जी, बंगाल इन रेन आफ औरंगजेब, कलकत्ता, 1967, पृ0- 22।

जौहर :-

राजपूत घरानों में प्रचलित " जौहर " सती प्रथा से भी भयानक थी । जब कोई राजपूत सरदार या उसके योद्धा युद्ध में पराजित हो जाते थे तब सामान्यत: वे अपने घर की महिलाओं को अग्नि को समर्पित कर देते थे अथवा मौत के घाट उतार देते थे । वे ऐसा इसलिए करते थे ताकि स्त्रियों के सतित्व की रक्षा हो सके । मध्यकाल में यह प्रथा प्रचलित थी।

स्त्री शिक्षा :

मुगल काल में स्त्री शिक्षा को नकारा नहीं गया, किन्तु यह मात्र राजघरानों, कुलीन परिवारों एवं सम्पन्न क्षेत्रों में सीमित थी ।[76] इस काल में पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में जौनपुर स्त्री शिक्षा का एक प्रमुख केन्द्र था।[77]

---

76. पी0एन0चोपड़ा, सोसायटी एण्ड कल्चर ड्यूरिंग दि मुगल एज, पृ0-148.

77. नीरा दरबारी, पृ0- 91

जौनपुर में इस काल में बौद्धिक क्षेत्र में स्त्रियों की शिक्षा सम्बन्धी प्रगति प्रशंसनीय है । लड़कियों की शिक्षा के लिए पृथक स्कूलों का प्रबन्ध था । औरंगजेब ने अपने शासन काल में शिक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से अपनी आय का एक बड़ा भाग इस मद में खर्च किया ।[78] औरंगजेब के इस प्रयास ने " मदरसों " में छात्रों की संख्या में बढ़ोत्तरी की ।[79] मध्य वर्ग की महिलाओं ने भी घरेलू कार्यों में व्यस्त रहते हुए शिक्षा में रूचि ली ।[80] उच्च वर्गीय स्त्रियाँ जो शिक्षा में रूचि रखती थीं, उनके लिए उत्तम व्यवस्था विद्यमान थी । अधिकतर स्त्रियाँ घरों में ही व्यक्तिगत शिक्षिकाओं के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करती थीं । मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा मकतब में होती थी, जो मस्जिदों से सम्बन्धित थी और हिन्दू स्त्रियों की प्राथमिक शिक्षा "पाठशाला " के माध्यम से होती थी ।[81] हिन्दू -मुस्लिम सम्प्रदाय में अल्पायु में ही विवाह की परम्परा ने स्त्री शिक्षा को हतोत्साहित किया। सामान्यतया स्त्री शिक्षा को पिता या पति द्वारा प्रोत्साहित नहीं किया

---

78. वही,

79. युसुफ हुसैन, आई0सी0, खण्ड-30, 1956, पृ0-117 (द एजूकेशनल सिस्टम इन मेडिवल इण्डिया)

80. नीरा दरबारी, पृ0- 78, 79, 80

81. चटर्जी, दि डिस्क्रिप्शन इज आफ हिन्दू स्कूल एजूकेशन, पृ0- 238

जाता था । अतः ये कहा जा सकता है कि उच्च वर्गीय हिन्दू तथा मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति कुछ ठीक थी, परन्तु निम्न वर्गीय महिलाएं अभी भी शोषण का शिकार थी ।[82]

शिक्षा व्यवस्था :

सत्रहवीं सदी के अन्त एवं अठारहवीं शताब्दी के आरम्भिक काल से शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति आरम्भ हो गयी, विशेषकर विज्ञान के क्षेत्र में विशेष कर घरों में धार्मिक शिक्षा को प्राथमिकता दी गयी ।

मुगलों की दरबारी भाषा फारसी थी । अरबी भाषा का प्रयोग धार्मिक कार्यों में प्रयोग होता था । हिन्दुओं की प्राचीन भाषा संस्कृत थी और यह अनेक प्रान्तीय भाषाओं की जननी भी थी । पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में हिन्दी भाषा का प्रचलन आरम्भ हो गया था । इसी से सम्बन्धित स्थानीय भाषाएं भोजपुरी और अवधी भी बहुतायत से प्रयोग की जा रही थी ।[83] फारसी और हिन्दी के मेल से उत्पन्न हिन्दुस्तानी का प्रयोग

82· की, इण्डियन,एजूकेशन, पृ0- 77

83· सिन्हा, पृ0- 410

हिन्दू तथा मुस्लिम अपने दैनिक जीवन में कर रहे थे ।

मध्यकाल में कागज उत्पादन के लिए सियालकोट प्रसिद्ध था ।[84] इसी प्रकार शहजादपुर में अच्छी किस्म के कागज का निर्माण होता था तथा देश के अन्य भागों में यही से भेजा जाता था ।[85] अठारहवीं शताब्दी में कागज का प्रयोग सामान्य हो चला था तथा उच्च वर्गीय समुदाय " नरकट " की " कलम " और दवात का प्रयोग लेखन कार्य हेतु करते थे । कश्मीर में उत्पादित उच्चकोटि की स्याही का प्रयोग लेखन कार्य के लिए किया जा रहा था।[86] स्कूलो के बच्चों लेखन के लिए लकडी की तख्ती का प्रयोग करते थे ।[87] तत्कालीन समाज में शिक्षा ग्रहण करने का एकमात्र उद्देश्य धार्मिक एवं नैतिक शिक्षण प्राप्त करना था ।

84· चोपडा, पृ0- 150

85· पीटर मुन्डी, खण्ड-2, पृ0- 98

86· चोपड़ा, पृ0- 158, 159

87· डेला वैले, उद्धत, व्हीलर की हिस्ट्री आफ इण्डिया, खण्ड- 4, पाठ -2, पृ0- 486, तथा नीरा दरबारी, पृ0- 89

सैनिक शिक्षा, शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अंग था । शिक्षकों को राजकीय कार्यों में सहयोग हेतु आमन्त्रित किया जाता था । वे राजनीतिक संस्थानों के सम्बन्ध में अत्यन्त व्यवहारिक ज्ञान रखते थे । अत: राजनीतिक ज्ञान भी शिक्षा का प्रमुख अंग था । छात्रों को ललित कलाओं का भी प्रशिक्षण दिया जाता था तथा छात्र संगीत, चित्रकला व अन्य ललित कलाओं के प्रशिक्षण हेतु शिक्षक के निवास स्थान पर जाते थे । यान्त्रिक प्रशिक्षण की भी व्यवस्था थी ।

धर्मशास्त्र एवं तात्विक विषयों के अतिरिक्त इतिहास छन्द शास्त्र, लेखन कला और गणित पर भी विशेष ध्यान दिया जाता था । धार्मिक शिक्षा का भी प्राविधान था, जो छात्रों के लिए विशेष रूप से अनिवार्य थी ।[88]

शिक्षा विधि :

मुस्लिम भारत में राज्य के समस्त मकतब, मदरसों, मस्जिदों एवं व्यक्तिगत भवनों में शिक्षा प्रदान की जाती थी । मुख्यतया शिक्षा की तीन

---

88. बार्रोलोमियो, पृ0- 263, 264 .

विधियाँ सर्वमान्य थी :-

1. उच्चतर शिक्षा

2. माध्यमिक शिक्षा

3. प्रारम्भिक या प्राइमरी शिक्षा

उच्चतर शिक्षा उच्च शिक्षित प्राध्यापकों द्वारा दी जाती थी । अठारहवीं शताब्दी में प्राचीन नालन्दा विश्वविद्यालय के समान कोई विश्वविद्यालय शिक्षा केन्द्र नहीं था ।[89] परन्तु इस काल में विश्वविद्यालय न होने के बावजूद भी बहुत से ऐसे शिक्षा केन्द्र प्रमुख थे, जहाँ इस प्रकार की शिक्षा प्रदान की जाती थी ।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में वाराणसी शिक्षा का एक प्रमुख केन्द्र था। जहाँ हिन्दुओं को विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा प्रदान की जाती थी ।[90]

- -

89. नीरा दरबारी, पृ0- 92

90. चोपड़ा, पृ0 - 135

मुस्लिम शिक्षा का प्रमुख केन्द्र जौनपुर था । जहाँ विद्वान छात्रों को शिक्षा प्रदान करते थे । समस्त प्रतिष्ठित सन्तों का मकबरा शिक्षा का एक प्रमुख केन्द्र माना जाता था । इन विद्वानों के असीम परिश्रम के कारण एवम् विद्वान होने के कारण लोग उनका आध्यात्मिक उपदेशक के रूप में सम्मान करते थे ।

प्राइमरी स्कूलों एवं व्यक्तिगत भवनों में प्रारम्भिक शिक्षा की उत्तम व्यवस्था थी, जब छात्र लिखने और पढ़ने में पारंगत हो जाता था तो उसे मकतब या मदरसों में कला एवम् विज्ञान के अध्ययन की अनुमति दी जाती थी ।

हिन्दुओं के लिए किसी स्कूल की स्थापना शासकों द्वारा नहीं की गयी । बहुत से स्थानीय राजाओं और उच्च वर्गीय जमींदारों ने "पाठ-शाला" की स्थापना की, जो कि मन्दिरों से सम्बद्ध कर दी गयी । पूर्वी उत्तर प्रदेश में पाठशालाओं की स्थापना की गयी । कम आयु की लड़कियाँ कुछ ही संख्या में पाठशाला जाती थीं । इन पाठशालाओं की स्थापना उच्च वर्गीय व्यक्तियों के विशाल भवनों में की जाती थी ।[91] इन पाठशालाओं

---

91. चटर्जी, पृ० -238

में सामान्यत: पाँच वर्ष तक के बच्चों को भर्ती किया जाता था और उन्हें प्रारम्भिक शिक्षा के तौर पर संस्कृत, गणित, व्याकरण आदि हिन्दू पण्डितों द्वारा पढ़ाया जाता था ।[92]

शिक्षा के क्षेत्र में धार्मिक संस्थायें महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती थीं । ग्यारहवीं शताब्दी के लगभग ही मुस्लिम क्षेत्रों में उच्च विद्या की संस्थाएं धार्मिक झुकाव के साथ शिक्षा केन्द्रों के रूप में विकसित हो चुकी थी, जिन्हें मदरसा कहा जाता था ।[93] ये मदरसे कट्टर धर्मवादिता के पोषक थे तथा इन्हें सरकारी आर्थिक सहायता प्राप्त थी ।[94] मदरसों के अलावा मकतब मुस्लिम राज्य में उच्च श्रेणी की शिक्षा केन्द्र थे जिनमें प्राथमिक तथा माध्यमिक से निम्न श्रेणी की शिक्षा की जाती थी । धर्म शिक्षा का मूल आधार था ।

---

92. नीरा दरबारी, पृ0" 89

93. जाफर, पृ0- 20

94 शेफाली चटर्जी, पृ0- 120

प्रत्येक मस्जिद में छात्रों को धर्म के साथ - साथ विज्ञान के सम्बन्ध में निर्देश देने के लिए अलग - अलग कक्षाएं होती थीं, जिनमें धार्मिक शिक्षा के साथ साथ धर्मनिरपेक्ष शिक्षा प्रणाली को भी महत्त्व दिया जाता था ।

इन धार्मिक तथा शिक्षा सम्बन्धी सुव्यवस्था को बनाए रखने के लिए अलग से विभाग भी खोले जाते थे । इन शिक्षा संस्थानों को आगे बढ़ाने के लिए पुस्तकालयों की भी स्थापना की जाती थी । सत्रहवीं एवम् अठारहवीं शताब्दी में उच्च वर्गीय शासकों, सामन्तों एवं दरबारियों ने अपने व्यक्तिगत पुस्तकालयों की भी स्थापना की ।[95]

इस काल में दरबार की भाषा फारसी थी । मुसलमानों के लिए " अरबी " भाषा थी । प्रत्येक मुस्लिम छात्र के लिए यह आवश्यक था कि वह कुरान का अध्ययन करे । उसके पश्चात उसे अन्य कक्षाओं एवं विज्ञान को पढ़ने की अनुमति थी ।

95· बर्नियर , पृ0- 325, थेवेनाट, खण्ड-3, अध्याय -1, पृ0 -90, पी0एन0 चोपड़ा, पृ0- 152, नीरा दरबारी, पृ0- 95

शिक्षकों को समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था । शिक्षकों से छात्र का पिता - पुत्र का सम्बन्ध था । इस काल में शिक्षा की घरेलू पद्यपि विकसित थी । कभी - कभी एक विद्वान व्यक्ति के निर्देशन में छात्रों को स्थान की सुविधा प्रदान की जाती थी जो सदा कदा छात्रों के लिए छात्रावास का भी प्रबन्ध करता था ।[96]

राज्य द्वारा परिचालित शिक्षण संस्थाओं के शिक्षकों को वेतन दिया जाता था । उनके वेतन के लिए कुछ - सम्पत्ति राज्य की ओर से निर्धारित थी परन्तु व्यक्तिगत स्कूलों के शिक्षक व्यक्तिगत सेवा एवम् पुरस्कार के अतिरिक्त कुछ नहीं लेते थे । गाँव के शिक्षकों का वेतन अनाज के रूप में प्रदान किया जाता था ।

उच्चतर शिक्षा के केन्द्र के रूप में जौनपुर विशेष रूप से उल्लेखनीय था । उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए मध्यकाल से ही भारत के समस्त भागों से छात्र यहाँ आते थे ।[97] यह सिलसिला अठारहवीं शताब्दी तक

- -

96• एन0एस0 ला0, प्रोमोशन आफ लर्निंग इन इण्डिया, पृ0 - 117

97• शेफाली चटर्जी, पृ0- 191

चलता रहा । यहाँ तक कि अफगानिस्तान तथा बुखारा के छात्र भी यहाँ के प्रसिद्ध विद्वानों का व्याख्यान सुनने आते थे । जौनपुरी शिक्षा की तुलना उन विश्वविद्यालयों की शिक्षा प्रणाली से की जा सकती हैं, जहाँ विभिन्न देशों में विद्वान शिक्षा देते थे एवं विदेशों में शिक्षा के नवीनतम विकास के प्रति अपने को जागरूक रखते थे ।[98] अधिकतर विद्वानों ने अपनी शिक्षा अरब, फारस, स्थायी रूप से बस गये थे ।[99]

छात्रों के क्रमिक विकास की जानकारी शैक्षिक पदाधिकारियों द्वारा मूल्यांकित की जाती थी । वर्तमान दीक्षान्त समारोह के सदृश उस समय भी प्रतिवर्ष आयोजन किया जाता था । शिक्षा को उन्नत बनाने के ध्येय से शिक्षकों को पुरस्कृत भी किया जाता था । भारत वर्ष में शिक्षा के क्षेत्र में जौनपुर को " इन-डो- राड़ो " के नाम से सम्बोधित किया जाता है ।[100]

98• अली मेहदी, जान, जामी उल उलूम मुल्ला महमूदस डिटर्मनेशन एण्ड फ्रीवील, पृ0- 7, ज़हीरूद्दीन फारूकी कृत औरंगजेब , पृ0 - 312• एन0एन0 ला, पृ0- 103

99• अली मेहदी, जान, पृ0- 7

100• जाफर , पृ0- 63

मि० डंकन, जो 1787 ई० में बनारस के रेजीडेन्ट, नियुक्त किये गये थे, ने अपने लेख में कहा है कि, " शिक्षा के क्षेत्र में यह शहर प्रतिष्ठा के चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया था । इसलिए इस शहर को " शीराज" तथा " भारत वर्ष का मध्ययुगीन पेरिस " कहा जाने लगा । [101]

धार्मिक उत्सव एवं त्योहार :

प्राचीन काल से धार्मिक उत्सवों एवं त्योहारों को मनाये जाने की परम्परा भारतीय समाज का प्रमुख अंग रही है । पूर्वी उत्तर प्रदेश में भी अठारहवीं शताब्दी में विभिन्न हिन्दू और मुस्लिम त्योहार परम्परागत रूप से मनाए जाते रहे । दोनों सम्प्रदायों के त्योहार अलग - अलग थे और इन्हें मनाने का ढंग भिन्न - भिन्न था । हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदाय के धार्मिक उत्सवों एवं त्योहारों की रूपरेखा इस प्रकार है :-

हिन्दू तीज - त्योहार एवं तीर्थयात्राएं :

हिन्दुओं के त्योहार प्राय: वर्ष की सभी महत्वपूर्ण ऋतुओं

---

101. जाफर, शर्की आर्की० आफ जौनपुर, पृ०- 2।

में होते थे । हिन्दू त्योहार अधिकांशत: महिलाओं एवं बच्चों द्वारा उत्साह पूर्वक मनाएं जाते थे ।

चैत्रमास की ग्यारहवीं तारीख को [एकादशी] हिन्दुओं द्वारा एक त्योहार मनाया जाता था । जिसे " हिंडोली " चैत्र कहते थे । इस दिन लोग घरों में या वासुदेव के मन्दिर में एकत्र होकर पूरे दिन उत्सव मनाते थे ।[102]

चैत्र पूर्णिमा को " बहन्त " [बसन्त] नामक त्योहार होता था, जिसमें महिलाएं वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर अपने पति से उपहारों की माँग करती थीं ।

भाद्रपद के महीने में जब चन्द्रमा दसवें कक्ष माघा में रहता था, तो वे एक त्योहार मनाते थे, जिसे पितृ पक्ष कहा जाता था ।[103] अर्थात अपने पूर्वजों का पखवारा । क्योंकि चन्द्रमा इस कक्ष में उस समय प्रवेश करता है । जब नवचन्द्र का समय समीप रहता है वे अपने पूर्वजों के नाम पर इस

- -

102· अलबरूनीज इण्डिया [सचाऊ], पृ0 - 178

103· वही, पृ0- 180

पखवारे में भिक्षुओं को भिक्षा प्रदान करते है । यह त्योहार आज भी परम्परागत तरीके से मनाया जाता है ।

हिन्दुओं के सबसे महत्वपूर्ण त्योहार बसन्त पंचमी, जन्माष्टमी, होली, दीपावली, दशहरा, शिवरात्रि और एकादशी आदि थे । रामनवमी और रक्षाबन्धन भी धूमधाम से मनाए जाते थे ।[104]

बसन्त पंचमी का त्योहार आगमन का पूर्व सूचक था जो माघ मास में मनाया जाता था ।[105] बसन्त पंचमी के अवसर पर सरस्वती पूजन भी होता था ।[106] इस अवसर पर गीत गाये जाते थे, जिसे "चंचरी" कहा जाता था तथा लोक नृत्य का भी आयोजन होता था ।[107]

- -

104. मो0 यासीन, पृ0- 71, 102 और नीरा दरबारी, पृ0- 121, 122

105. आइने अकबरी, खण्ड-3, पृ0- 317, 321

106. मो0यासीन, पृ0-71, और नीरा दरबारी, पृ0- 121, 122

107. मलिक मोहम्मद जायसी, पदमावत, द्वितीय संस्करण, विक्रसं0-2011, दोहा- 145, पृ0- 82

होली जैसा कि आज भी है, हिन्दुओं का सबसे महत्त्वपूर्ण व लोकप्रिय त्योहार था। यह फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष के अन्तिम दिन मनाया जाता था। थिवेनाट ने इसे काबुल में "हउली" के नाम से पुकारा है।[108]

हिन्दी कवि सेनापति ने भी होली के सम्बन्ध में वर्णन किया है।[109] इस त्योहार पर तीन दिनों तक हिन्दू वर्ग के सभी वर्गों के लोग हर किसी को केसरिया व अन्य रंगीन जल से भिगों डालते थे। तीसरे दिन संध्या को प्रायः सम्पूर्ण जन समुदाय एक वृहदाकार उत्सवाग्नि के चारों ओर एकत्रित होकर आली फसल अच्छी होने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता था।[110]

श्रावण मास की पूर्णमासी ब्राह्मणों का प्रिय त्योहार था। रक्षाबन्धन पर रेशमी धागों से बनी राखियाँ भाइयों की कलाई में बहने

108· भीमसेन, नुस्खा-ए-दिलकुशा, पृ0-64, थिवेनाट, पृ0-81, हेमिल्टन खण्ड-1, पृ0- 128, 129

109· लालन गुपाल, धोरिकों रंग माल। भरि पिचकारी मुँह ओर को चलाई है। - सेनापति, पृ0- 72

110· नीरा दरबारी, पृ0 - 122

अथवा कुमारियाँ पहनाती थीं, जिसे प्रेम व स्नेह का प्रतीक माना जाता था ।[111] उस दिन भाई बहनों की रक्षा का वचन लेते थे ।

क्षत्रियों[112] व कृषक वर्गों के मध्य दशहरा बहुत ही लोकप्रिय त्योहार था । जो " क्वार " माह के दसवें दिन पड़ता था । दशहरा मुख्यत: हिन्दुओं में शक्ति पूजा के रूप में मनाया जाता था । मध्यकाल के कवियों मने भी इसे शक्ति पूजा के रूप में वर्णित किया है ।[113] देवी दुर्गा की पूजा बंगाल में बड़े उत्साह से की जाती थी । इस अवसर पर हिन्दुओं के विभिन्न वर्गों द्वारा अपनाए गये व्यापार, धन्धे या पेशे के औजारों की पूजा होती थी ।[114]

हिन्दुओं का महत्वपूर्ण त्योहार दीपावली कार्तिक मास के प्रथम, दिन, जो नये चन्द्रमा का दिन होता है और जब सूर्य तुला राशि में होता

---

111. तुजुके जहाँगीरी (आर०बी०) पृ०-244, पी०थामस, फेस्टीवल एण्ड हालीडेज इन इण्डिया, पृ०-1, के०एम०अशरफ, लाइफ एण्ड कण्डीशन आफदी पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान (1959) पृ०- 203, 204
112. आइन, खण्ड3, पृ०-319, आलमगीरनामा, पृ०-915, इलियट व डाउसन, भाग-4, पृ०-117, 118
113. (1) विभीषण हनुमान....।- सेनापति, कवि रत्नाकर, पृ०-25, 26
(2) चण्डी है घमण्डी अरि...।- भूषण ग्रन्थावली, पृ०-9, शिवराज भूषण, पृ०- 61.
के०एम०अशरफ, पृ०-203, 204

है ।, ये त्योहार पड़ता था ।[115] इस त्योहार में बड़ी संख्या में दीप जलाएं जाते थे और घरों की सफाई की जाती थी । यह धन की द्योतक लक्ष्मी का भी त्योहार माना जाता था । हिन्दुओं का विश्वास है कि कृत युग में यह भाग्य का त्योहार था ।[116] अठारहवीं शताब्दी में भी यह त्योहार हिन्दू सम्प्रदाय के लोग अपने पूर्वजों की भाँति धूमधाम और उत्साहपूर्वक परम्परागत तरीके से मनाते रहे ।

हिन्दू सम्प्रदाय का एक अन्य महत्वपूर्ण त्योहार शिवरात्रि था । यह माघ के अन्त अथवा फाल्गुन मास के प्रारम्भ में पड़ता था । मुगल काल में सम्राट अकबर की हिस्सेदारी[117] का उल्लेख मिलता है । जहाँगीर

- -

115· करारी, पृ0-264, पीटर मुण्डी, खण्ड-2, पृ0- 164, डुबोयस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेयरमनीज, पृ0- 317

116· विलियम क्रुक, रीलिजन एण्ड फोकलोर आफ इण्डिया (1926), पृ0- 354·

117· आईन, प्रथम भाग, पृ0- 210

ने भी अपनी आत्मकथा में इसका उल्लेख किया है ।[118]

तीर्थयात्राएं हिन्दुओं के लिए अपरिहार्य ही नहीं वरन् सुखदायी भी थी । उस समय गंगा - यमुना पवित्र नदियाँ थी, जिनका संगम इलाहाबाद में होता है । तीर्थाटन के लिए पूर्वी उत्तर प्रदेश में लोग इलाहाबाद और काशी (वाराणसी) आते थे । हिन्दुओं के लिए यह पवित्र स्थान प्राचीन काल से आज तक हैं ।[119]

इस समय अठारहवीं शताब्दी के काल में भी हिन्दुओं में त्योहारों के प्रति उल्लास एवं प्रतिबद्धता थी, जो समाज की एक प्रमुख विशेषता थी ।

मुस्लिम त्योहार एवं तीर्थयात्राएं :

सत्रहवीं शताब्दी के अन्त और अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ में विदेशी मुसलमानों ने भारतीय मुसलमानों के रीति रिवाजों और

---

118. तुजुक (आर०बी०) खण्ड-1, पृ०-361, तथा सलीतोर, खण्ड-2, पृ० - 404, 405

119. अलबरूनीज इण्डिया, भाग -2, (सचाऊ), पृ०- 146- 147

और परम्पराओं पर प्रभाव डाला । विदेशी मुसलमानों ने भारतीय मुसलमानों के रीति रिवाजों और परम्पराओं पर प्रभाव डाला । विदेशी मुसलमानों में अधिकतर तुर्क थे । इसके अलावा ईरानी अफगान और मुगल थे । अतः इस काल में मुस्लिम समाज में अनेक उत्सव त्योहार और तीर्थयात्राएं प्रचलित हुईं । अधिकांश मुसलमान मक्का की तीर्थयात्रा करते थे । और ईद के मौके पर " इबादत " में भाग लेते थे । इस काल में स्वाभाविक रूप से भारतीय परम्पराओं का भी प्रभाव मुस्लिम समाज पर पड़ा । इसलिए बदलते हुए वक्त के साथ मुसलमानों ने भी हिन्दुओं की भाँति अपने त्योहारों को सामाजिक एवं मनोरंजनात्मक रूप दिया । इस काल में मुसलमानों द्वारा मनाये जाने वाले प्रमुख धार्मिक उत्सव तथा त्योहार निम्नलिखित है -

नौरोज :

मुस्लिम समुदाय सरकारी त्योहार के रूप में " नौरोज " मनाता था । जो सामान्यतया ईरानी नव वर्ष के दिन मनाया जाता था ।[120] यह बसंत का त्योहार था तथा इसका मुख्य आकर्षण संगीत तथा रंग-बिरंगे फूल हुआ करते थे ।[121] इस त्योहार में सात प्रकार की धातुएं, सात प्रकार

---

120. नीरा दरबारी, पृ0- 139

121. अमीर खुसरो (एजाज-ए- खुसरवी), भाग-4, पृ0-229-39 तथा नीरा दरबारी, पृ0- 146

के अनाज तथा सात प्रकार के कपड़े गरीबों में बाँटे जाते थे।[122] इस अवसर पर सुलतान अथवा शासक शासन व्यवस्था में भी परिवर्तन करता था। और अपने राज्यपालों को आभूषण, हाथी, घोड़े और छत्र प्रदान करता था।[123] यह त्योहार उच्च वर्गों तक ही सीमित था, विशेषकर सुलतान या शासक से जिनके घनिष्ठ सम्बन्ध थे।[124]

ईद- उल- फित्तर :

मुस्लिम समुदाय का सर्वाधिक महत्वपूर्ण त्योहार ईद-उल-फित्तर की तारीख का निर्धारण चाँद देखने से होता था।[125] मस्जिद में नमाज पढ़ने के बाद खुशियाँ मनाई जाती थीं।[126] एक दूसरे को उपहार देना,

---

122. मनूची, भाग-2, पृ0-348, 349, थेवेनाट, भाग-3, अध्याय -28, पृ0- 70.

123. वही

124. के0एम0अशरफ, पृ0- 205, ई0डी0रास0, हिन्दू मुसलमान फीस्ट्स, पृ0- 100

125. के0पी0साहू, पृ0= 207

126. अफीफ, पृ0-361, इब्नबतूता, पृ0-60 से 62, रिजवी, पृ0-143, डेलाविली, पृ0-429, पेलसर्ट इण्डिया, पृ0- 73

सन्तों के दर्शन करना और मजलिसे आयोजित करना इस त्योहार के प्रमुख अंग थे।[127] इस त्योहार का महत्व वर्तमान में भी होली के समान है, जिसमें एक दूसरे को गले लगाकर भेदभाव मिटाने का प्रण लेते हैं।[128] पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में भी यह त्योहार धूमधाम से मनाया जाता था।

ईद-उल-जुहा :

वर्ष के अन्तिम माह जिल हज्जा के दसवें दिन मुसलमान ईद-उल-जुहा का त्योहार मनाते थे।[129] इस त्योहार पर ऊँट भेड़, बकरी की बलि देते थे, उसके बाद यह त्योहार जश्न के साथ मनाया जाता था।[130]

---

128. मच्चूची, भाग-4, पृ0-235, सोमनाथ ग्रन्थावली, 831/1, नीरा दरबारी, पृ0- 149

129. रिजवी, पृ0- 145, पी0टामस, पृ0 - 43

130. तुजुके जहाँगीरी, ﴾आर0बी0﴿, पृ0- 189, सोमनाथ ग्रन्थावली, 831/2, पीटर मुण्डी, खण्ड-2, पृ0- 51

शबे - बारात :

शा- बान महीने की चौदहवीं तारीख को मनाया जाने वाला यह एक महत्वपूर्ण त्योहार था ।[131] भारत में कभी - कभी प्रार्थनाएं (इबादत) केवल समूहों या अनेक लोगों द्वारा समवेत रूप में की जाती थीं । धार्मिक रूप से उत्साही लोग पूरी रात खास इबादतें करने और पवित्र कुरान पढ़ने में बिता देते थे । इस अवसर पर मस्जिदों में मोमबत्तियाँ भेजने और खुशियों का इजहार करने के लिए पटाखे छोड़ते थे ।[132] सम्भवत: पटाखे तथा फुलझड़ियाँ छोड़ने के रिवाज को मुसलमानों ने हिन्दुओं व ईसाइयों से ग्रहण किया ।[133]

मोहर्रम :

अठारहवीं शताब्दी में मुसलमानों के शियामत द्वारा मनाया

---

131. अन्सारी, पृ0- 123, के0एम0अशरफ, पृ0-205, ई0डी0रास, हिन्दू मुसलमान फीस्ट्स, पृ0-111-112, थेवेनाट, खं0-3, पृ0- 31

132. एजाज-ए-खुसरवी, पृ0- 234

133. एडम मेज, दि रेनेसा आफ इस्लाम, पृ0- 421, के0एम0अशरफ पृ0 - 206,207

जाने वाला यह एक शोक का त्योहार था । आज भी इसे मोहर्रम के नाम से जाना जाता है ।[134] इस त्योहार को मनाने में मुस्लिम सम्प्रदाय मुहर्रम के प्रथम दस दिन कर्बला के वीरों की शहादत के विवरण पढ़ते थे तथा उनकी रूहों की चिरशान्ति के लिए इबादत करते थे । इस अवसर पर जुलूसों में ताजिये निकलते थे जिन्हें मकबरों का लघु अनुकरणात्मक रूप माना जाता था ।[135]

उर्स :-

उपरोक्त त्योहारों के अतिरिक्त मुसलमान सूफी सन्तों की दरगाहों, मजारों तथा मकबरों पर जाकर इनकी बरसी या उर्स मनाया करते थे ।[136] ये परम्परा मध्यकाल से लेकर अठारहवीं शताब्दी तक तथा आज

134· पेलसर्ट इण्डिया, पृ0-75, मेन्डेलस्लो, पृ0- 42, नीरा दरबारी, पृ0-149 के एम0अशरफ, पृ0- 206,207

135· नोरिस, पृ0- 165, के0एम0अशरफ, पृ0= 206,207 तथा मेन्डेलस्लो, पृ0 - 42

136· मीराते सिकन्दरी, प्रथम संस्करण, पृ0 - 103

हिन्दू मुस्लिम सम्पर्क ने खान पान में एक दूसरे पर अत्यधिक प्रभाव डाला । पूर्वी उत्तर प्रदेश का समाज अठारहवीं शताब्दी में इस प्रभाव से अछूता नहीं था ।

खान - पान :

हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों ही जातियों के कुलीनों तथा अमीरों में विभिन्न प्रकार के पौष्टिक एवं सुस्वादु भोजन का प्रचलन था । शासक साधारणतया अपने कुलीनों तथा अमीरों के साथ एक ही "दस्तरखान" पर खाना खाते थे ।[139] यह परम्परा मध्यकाल से अठारहवीं शताब्दी तक यथावत बनी रही । इस सामुदायिक सहभोज का एक कारण तो इस्लाम धर्म में निहित भातृभाव था तथा एक अन्य कारण शासकों की कूटनीतिक व्यूह कौशल भी था ।

राजनीतिक व राजकीय भोजों में " ब्रन्ज " (चावल), सूर्ख बिरयानी (आधुनिक पुलाव), नान (एक प्रकार की रोटी), नान-ए-

---

139. तसकीरात, उल, वाक्यात (स्टीवर्ट संपादित), पृ0-82,83, मेंडलस्लो, पृ0 - 28

तन्दूरी , समोसा, क्वाब-ए-मुर्ग, बच्च-ए-मुर्ग, हलवा और मछली का समावेश होता था ।[140]

इस काल में गेहूँ या मैदा की बनी हुई रोटियों का उल्लेख मिलता है । सामान्यत: लोग चना, मटर, ज्वार तथा बाजरे की रोटियों का प्रयोग करते थे ।[141] चावल की फसल बंगाल में वर्ष में दो बार होती थी । गेहूँ, सोयाबीन, विभिन्न प्रकार की दालें, बाजरा, अदरक, सरसों, प्याज, बैंगन, तथा अनेक प्रकार की सब्जियाँ भी पैदा होती थीं ।[142] गेहूँ की रोटी तथा पूड़ी लोग दाल, माँस, तथा सब्जियों के साथ खाते थे । चपातियाँ तन्दूर व चूल्हे में पकाई जाती थी ।[143]

- -

140· बदायूँनी, खण्ड-3, पृ0- 215, तुज़ुक {आर0बी0}, खण्ड-1, पृ0-387

अशरफ, पृ0- 185, सिन्हा, पृ0-342, नीरा दरबारी, पृ0-46

141· इलियट व डासन, पृ0 -583

142· के0एस0लाल, पृ0- 273

143· नीरा दरबारी, पृ0 - 45

मुसलमान समुदाय में एक विशेष प्रकार की रोटी बनायी जाती थी, जिसे " रोधनी, कहते थे।[144] मट्ठा, खजूर, माँस का सूप, पराठा, हलवा और हरीसा भी प्रमुख व्यंजन थे। कहीं - कहीं लोग खिचड़ी व सत्तू का प्रयोग करते थे।[145]

भोजन दो प्रकार का होता था - शाकाहारी तथा माँसाहारी § हिन्दू, मुस्लिम, संत, पुरोहित, पंडित, ब्राह्मण, जैन, शैव, और वैष्णव मत के मानने वाले अधिकांश लोग शाकाहारी थे। शाकाहारी भोजनों में विभिन्न प्र कार की मौसमी सब्जियाँ, अनाज तथा दूध से निर्मित वस्तुएं एवं मिठाइयाँ आदि सम्मिलित थे।[146] लोग चावल और रोटियों का प्रयोग मक्खन और घी के साथ करते थे।[147]

- -

144. मेनरिक, खण्ड-2, पृ0- 188, पी0एन0चोपड़ा, पृ0- 37

145. इब्नबतूता, पृ0-38, बर्नियर, पृ0- 29, मनूची, खण्ड-3 पृ0- 453

146. राधेश्याम, पृ0- 246, 247

147. नीरा दरबारी, पृ0 - 51

मांसाहारी भोजन में मछली का भी पर्याप्त प्रयोग होता था । पूर्वी उत्तर प्रदेश में अनेक नदियाँ तथा तालाब थे, जहाँ से मछलियाँ प्राप्त की जाती थी । बर्नियर ने सर्वोत्तम प्रकार की मछली " रेहू " ﴾ रोहू ﴿ का वर्णन किया है ।[148] मांसाहारी भोजन में गाय, बछड़े, बकरे और मुर्गों के गोश्त का प्रचलन था ।[149] उसके अतिरिक्त भेड़, बकरी, भैंस, हिरन, तथा पक्षियों में कबूतर, सारस, हरियल, आदि का माँस प्रचलित था।[150] विभिन्न प्रकार के शाकाहारी और माँसाहारी व्यंजनों को पकाने के लिए नमक, तेल, चीनी, प्याज, लहसुन, अदरक, विभिन्न मसाले, सिरके आदि का प्रयोग किया जाता था ।[151]

हिन्दुओं के समान मुसलमान भी भोजन के साथ सादा पानी पीते थे । परन्तु मुसलमान भोजन समाप्त होने के बाद ही सादा जल ग्रहण

---

148. बर्नियर, पृ0 - 250, 252, 257

149. बर्नियर, पृ0 - 252, नीरा दरबारी, पृ0 - 48

150. बर्नियर, पृ0 - 252, पी0एन0 चोपड़ा, पृ0 - 35

151. ओविंगटन, पृ0 - 335

करते थे।[152] उच्च वर्गीय मुसलमान दूध, चीनी, घी, मक्खन और सूखे मेवे से तैयार मिष्ठान्न का प्रयोग करते थे। इसमें " फालूदा " और "हलवा" प्रमुख थे।[153]

पान :

भारत में सभी धर्मों तथा जातियों के लोग पान का प्रयोग करते थे और विशेष अवसरों पर पान का अत्यधिक महत्व था।[154] पान के पत्ते में चूना लगाकर व सुपाडी डालकर पान खाने के पर्याप्त उदाहरण मिलते हैं। उच्चवर्गीय समुदाय के लोग इसमें केसर और गुलाब जल का प्रयोग करके उसे सुगन्धित बनाते थे।[155] बहुत से ऐसे उदाहरण प्राप्त होते हैं कि अंग्रेज सेनापतियों और राज्यपालों ने पान को सम्मान के तौर पर ग्रहण किया।[156]

- -

152· करारी, किताब-2, अध्याय -8, पृ0- 247

153· अकबर नामा, खण्ड-1, पृ0- 430, तुजुक ﴾आर0बी0﴿खण्ड-1, पृ0 - 387, मो0 यासीन, पृ0 - 35

154· थेवेनाटऔर करारी, पृ0 - 15, मनूची, पृ0 - 62,63

155· आइने अकबरी, खण्ड-1, पृ0- 72,73, लिन्सचोटन, खण्ड-2, पृ0-64, नीरा दरबारी, पृ0- 57

156· नोटिस, पृ0- 153, 207

पेय पदार्थ :

अठारहवीं सदी में पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में शुद्ध जल के अलावा शर्बत का भी प्रयोग होता था । शर्बत में अन्तर के शर्बत, व मिश्री, गुलाबजल, कस्तूरी तथा शहद मिले हुए शर्बत का उल्लेख मिलता है ।[157]

मदिरापान हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदायों में समान रूप से प्रचलित था । वैदिक काल में मदिरा को " सोमरस " कहा जाता था । उच्च वर्ग, अमीर और कुलीन वर्ग के लोग " शीराज " नामक मदिरा का प्रयोग करते थे । उच्च वर्गीय समुदाय विदेश से भी मदिरा आयात करता था ।[158] पूर्वी उत्तर प्रदेश में चूँकि अच्छे फलों का उत्पादन नहीं होता था अत: लोग जौ और चावल से बनी शराब का सेवन करते थे । निम्नवर्गीय समुदाय "ताडी " नामक पेय पदार्थ का प्रयोग करता था जिसे ताड़ के पेड़े से उतारा जाता था ।[159] इस काल में अंग्रेज और डच व्यापारियों की बहुलता हो

---

157. रिजवी, पृ० - 406, 407

158. रिजवी, पृ० - 252, 233

159. निकोलस डाउन्टन (विलियम फास्टर द्वारा सम्पादित) पृ०-146 थेवेनाट, खण्ड-3, पृ० 17, ओविगंटन, पृ०-239, नीरा दरबारी, पृ०-66

हो गयी । ये अपने दैनिक जीवन में नियमित ...छी मदिरा का सेवन करते थे, फलत: विदेशी शराब का आयात होने लगा ।[160]

वेशभूषा :

सम्राट तथा कुलीन वर्ग की पोशाक में सामान्यतया कुलाह एवं पयराहन[161] का समावेश होता था । सम्राट एक प्रकार का कसा हुआ "घाघरा "[162] पहनते थे । जो कि ऋतु के अनुसार महीन मलमल अथवा ऊन का बना होता था । कभी कभी वे "बागा "[163] (एक प्रकार का लम्बा लबादा) धारणकरते थे । मलमल अथवा अन्य किसी प्रकार की जाघियाँ भी प्रयोग करने का उल्लेख प्राप्त होता था[164] कुलीनों का एक पृथक

---

160. बाबरनामा, पृ0-83,85, पेड्रोटेक्सेरिया, पृ0-197

161. टी0एफ0 एस (ए) बिब0 इण्डिया, कलकत्ता, 1891, पृ0-146

162. मनूची, भाग-2, पृ0-13, ओविंगटन, पृ0-314, डब्लू एच0मोरलैण्ड, कलकत्ता, द्वारा सम्पादित, 1862, पृ0- 78, मोहम्मद यासीन, पृ0 - 39,40

163. मंझन कृत, मधुमालती, पृ0- 452,397

164. आई0सी0, भाग-31, पृ0- 256

"कमेष " होता था जिसे "जामा-ए-खाना " कहा जाता था ।[165] सम्राट रात्रि में पहनने वाले वस्त्र " जामा-ए-ख्वाब ","मौजा", विशेष प्रकार के जूते अथवा "कफष " हपहनते थे ।[166] इसी प्रकार मुस्लिम कुलीन वर्ग भी अपनी पोषाकों में रेशमी वस्त्र धारण करते थे ।[167] इस समय हिन्दू और मुस्लिम पहनावे का एक दूसरे पर काफी प्रभाव पड़ा ।

हिन्दू कुलीन वर्ग भी " काबा"[168], "बागा " अथवा उत्कृष्ट प्रकार की "धोती " की प्रयोग करते थे । साथ ही " ओहारन " यानि ओढ़ने वाली चादर का भी प्रयोग करते थे । इस काल में हिन्दुओं द्वारा प्रयोग किया जाने वाला वस्त्र " पजामा " भी था जो आज भी प्रचलित है । हिन्दू वर्ग में " पाग " या "पगडी" का प्रयोग भी अत्यन्त लोकप्रिय था ।[169] चप्पल और जूतों का भी प्रचलन था ।

- -

165. टी0एफ0एस0,{ए} बिब0 इण्डिया, कलकत्ता, 1891, पृ0-101

166. वही, पृ0 - 104

167. ई0डेनिसन रास द्वारा सम्पादित जे0डब्लू0, भाग-1, पृ0-354

168. मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 341

169. सोमनाथ ग्रन्थावली, प्रेम पचीसी, पृ0-89, छन्द-17, औरंगजेब नामा, भाग-2, पृ0 - 188

स्त्रियों की वेशभूषा :

अठारहवीं शताब्दी के काल में स्त्रियाँ लगभग समान प्रकार के वस्त्र धारण करती थीं। मुगल स्त्रियाँ "बुर्के"[170] का प्रयोग करती थीं जबकि सम्भ्रान्त परिवारों की हिन्दू महिलाएं "दुपट्टे" का प्रयोग करती थीं। स्त्रियाँ इसके प्रयोग से चेहरे पर पर्दा करती थीं। साड़ी तथा अंगिया हिन्दू स्त्रियों का सामान्य परिधान था।[171] इसी के समान "पीशवाज" नामक एक अन्य वस्त्र भी समान रूप से लोकप्रिय था जो अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक प्रयोग में लाया जाता रहा।[172] निचले अंग को ढकने के लिए "लहंगा" का भी प्रयोग होता था, जिसे ऊपर कमर में डोरी द्वारा बाँधा जाता था जिसे "नेफा" कहते थे।[173] लम्बे कपड़े को "डांडिया" कहा जाता था, जो आज दुपट्टे के रूप में जाना जाता है, इसे हिन्दू और मुस्लिम वर्ग की महिलाओं ने समान रूप से अपनाया।[174]

170· आइने-अकबरी, पृ0-31, ब्लाख मेनन, पृ0-96

171· बर्नियर, पृ0-272, टेवर्नियर, भाग-2, पृ0-125, मनूची, भाग-2, पृ0-341, एस0पी0सहगल, लाइफ आफ द मुगल प्रिन्सेज, पृ0-16

172· नीरा दरबारी, पृ0-174

173· मनूची, भाग-3, पृ0-40, अल्टेकर, पृ0-365, 235, अन्सारी, दि हरम आफ ग्रेट मुगल, पृ0- 112, 113

174· अन्सारी, आई0सी0 (दि हरम आफ ग्रेट मुगल्स), 1960, पृ0-111, 112, 113·

अँगिया को "कंचुकी "[175] या चोली भी कहा जाता था । उच्च वर्गीय समुदाय की स्त्रियाँ अपने वस्त्रों पर सोने या चाँदी के तारों से कढ़ाई करती थीं ।[176] नर्तकियाँ व गणिकाएं स्वयं को आकर्षक बनाने के लिए रेशम से बने तथा अत्यन्त कसे हुए जालीदार वस्त्र धारण करती थी ।[177] पायजामा का प्रयोग स्त्री और पुरुषों द्वारा समान रूप से किया जाता था।[178]

पुरुषों की श्रृंगार विधि तथा उनके आभूषण :

मध्यकाल से आधुनिक काल तक पुरुष भी श्रृंगार के प्रति सचेत रहे हैं। अठारहवीं शताब्दी में भी उच्च वर्गीय पुरुष अपने शारीरिक आकर्षण की वृद्धि हेतु अनेक युक्तियाँ अपनाते थे।

- -

175. ए0एस0अल्तेकर, दि पोजीशन आफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, पृ0- 353

176. बर्नियर, पृ0-272, मनूची, खण्ड-2, पृ0-341, देवग्रन्थावली सुखसागर तरंग, पृ0- 105, नीरा दरबारी, पृ0- 75

177. अमीर खुसरो, नूह सिफर, पृ0 - 397, नीरा दरबारी, पृ0-75

178. डेबावेली, पृ0- 41।

पुरूष श्वेत केश को काला करने के लिए केश कल्प अथवा खिजाब का प्रयोग करते थे ।[179] पुरूष एवं महिलाएं दोनों ही बालों को संवारने के लिए कंघी अथवा " ककही " का प्रयोग करते थे । नित्यप्रति स्नान का प्रचलन था । अलबरूनी हिन्दुओं में प्रचलित "धावन " क्रिया का उल्लेख इस प्रकार करता है कि - " धावन क्रिया में सर्वप्रथम अपना पद धाते हैं, फिर मुख । वे पत्नियों से सम्भोग के पूर्व भी स्वयं को स्वच्छ कर लेते हैं ।[180] पुरूष नाना प्रकार की सुगन्धियाँ जैसे - मृगमद, कस्तूरी, अगरजाह, अगर कपूर, कुमकुम आदि का प्रयोग करते थे ।[181] दर्पण का प्रयोग सामान्य रूप से होता था । काजल का भी प्रयोग नेत्र ज्योति बढ़ाने के लिए किया जाता था ।

---

179. अमीर खुसरो, मतला उल अन्वार, पृ0- 173

180. अलबरूनीज इण्डिया ﴾सचाऊ﴿ पृ0- 181

181. आइने अकबरी, भाग-2, पृ0- 126, मनूची, भाग-3, पृ0-157 के0एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कण्डीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0- 181

उच्च वर्गीय हिन्दुओं में बहुमूल्य आभूषणों के प्रति अगाध रूचि थी । पुरूषों द्वारा मेखला,[182] नूपुर, मुद्रिका, अंगूठी, हार एवं कुण्डल का प्रयोग किया जाता था । पुरूष, पीताम्बर, काछनी या धोती,[183] उत्तरी या पिछौरी,[184] पटुका अथवा कमरबन्द[185], जामा[186] झगा या औरखा[187] पाग अथवा पगडी[188], जूता टोपी आदि का प्रयोग नियमित

- -

182. कबीर बचनावली, पद - 393, पृ0-40

183. मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग-3, पृ0-38, आस्पेक्ट्स आफ बंगाल सोसायटी, पृ0- 44

184. देव ग्रन्थावली, पृ0-60, छन्द -16, मनूची, भाग-3, पृ0-38,39 डा0 मोती चन्द्र प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ0- 38

185. आइने अकबरी, ब्लाकमैनन, भाग-32, पृ0-99, पी0एन0ओझा, गिलम्सेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इण्डिया, पृ0-12

186. आइन, भाग-1, पृ0-88, 92, श्रीजमी जमीला बृजभूषण, पृ0-38,38

187. ट्रेवर्नियर, पृ0- 132, श्रीमती जमीला, बृजभूषण, कस्टम्स एण्ड टेक्सटाइल आफ इण्डिया, पृ0- 31

188, सोमनाथ ग्रन्थावली, श्रृंगार विलास, पृ0- 290, छन्द-17, मेन्डेलस्लो, पृ0- 53, डीलेट, पृ0-80-81

करते थे ।

स्त्रियों की श्रृंगार विधि एवं आभूषण:

स्त्रियों में आभूषणों एवं श्रृंगार के प्रति स्वाभाविक रुचि एवं आकर्षण होता है । स्त्रियाँ मध्यकाल से ही सोलह (षोडस) श्रृंगार जैसे - मज्जन, स्नान, वस्त्र, पत्रावली रचना, सिन्दूर, तिलक, कुण्डल, अज्जन, ओष्ठ श्रृंगार ,कुसुम गंध, कपोल पर तिल लगाना, हार पहनना, कंचुकी, का प्रयोग, कमर में छडघंटिका पहनना तथा पैरों में पायल के प्रति सचेष्ठ थीं ।

मुगल स्त्रियों ने न केवल भारतीय आभूषणों को अपनाया बल्कि आकर्षित करने वाले कई प्रकार के आभूषणोंकी रचना भी की ।[189] मनूची ने स्वयं वर्णन किया है कि सुनार दिन रात मुगल राजकुमारियों, कुलीन वर्गों के लिए आभूषण बनाने में संलग्न रहते थे ।[190] हिन्दू और मुस्लिम वर्गों

- -

189. नीरा दरबारी, पृ0- 75

190. मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 341

द्वारा समान रूप से प्रयोग किये जाने वाले आभूषण गले का हार, माथे पर धारण किया जाने वाला " शीश फूल "[191] कर्णफूल, बाली, चम्पाकली और मोर भाँवर कानों के लिए, कुण्डल,[192] बेसर[193], फूली, लौंग और नथ[194]

- -

191. आइन, अनुवादक जैरेट, पृ0- 312 , सोमनाथ ग्रन्थावली, पृ0-503 छन्द-50, मनूची, भाग -2, पृ0- 71

192. आइन, भाग -3, पृ0-43, देव ग्रन्थावली, रस विलास, पृ0-237 छन्द -28, थेवेनाट, भाग-3, पृ0 - 37

193. आइन, अनुवादक, एस0एस0 जैरेट, जिल्द -3, पृ0- 313, सोमनाथ ग्रन्थावली; रस पीयूष निधि, पृ0- 126, छन्द - 12, थेवेनाट, भाग-1, पृ0-37, तथा अंसारी, भाग-34, पृ0- 114

194. सोमनाथ ग्रन्थावली, माधव विनोद, पृ0- 328, छन्द-72, जमीला बृजभूषण, इण्डियन ज्वेलरी आर्नामेण्ट्स एण्ड डेकोरेटिव डिजाइन्स, पृ0-11, थेवेनाट, पृ0-37, डोलेट, पृ0-81, अंसारी, भाग - 34, पृ0- 114.

नाक के लिए, कलाइयों के लिए कांन चूड़ी और जिहार,[195] अंगूठे के लिए आरसी,[196] तथा उंगलियों में पहनने के लिए अंगूठी आदि थे।

उच्च वर्गीय महिलाएं कमर में " कटि मेखला " और "चन्द्रकन्टिकी"[197] और पैरों के लिए घूंघरी, पायल, बिछुवा और अनवत[198] का प्रयोग करती

- -

195. मआसिर-ए-आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ0-93, मनूची, भाग-2 पृ0-399, 40, मोहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इण्डिया, पृ0-41, मेन्डेलस्लो, पृ0-50, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0- 342

196. सोमनाथ ग्रन्थावली, पृ0-505, छन्द-33, अंसारी, भाग-34, पृ0- 114, थेवेनाट, अध्याय -20, मनूची, भाग-2, पृ0-340

197. आइन, भाग -3, पृ0- 343 से 345

198. आइन, भाग-3, (जैरेट), पृ0-313, सोमनाथ ग्रन्थावली, (शशिनाथ विनोद), प्रथमोल्लास, पृ0-503, छन्द-22, औरंगजेब नामा, अनुवादक मुंसिफ, भाग-2, पृ0- 39

थीं।[199] बहुत से आभूषणों के सम्बन्ध में कविताओं में भी वर्णन किया गया है । मध्यम वर्ग की स्त्रियों ने भी उच्च वर्ग की स्त्रियों के समान आभूषणों को अपनाया । परन्तु निम्न वर्ग की स्त्रियाँ विकल्प के रूप में सस्ते और अन्य प्रकार के गहने अपनायी थीं ।[200] निम्न वर्ग की स्त्रियाँ,शीशे, काँच,ताँबे और यहाँ तक कि लौंग या लवंग का भी प्रयोग आभूषणों के रूप में करती थी ।[201] स्त्रियाँ बिंदिया का प्रयोग करती थीं, जो उनके विवाहित होने का प्रतीक था ।[202] शीशे की चूड़ियाँ भी स्त्री के विवाहित होने का प्रतीक थीं ।[203] अत: ये प्रतीत होता है कि आभूषणों

- -

199 कबीर ग्रन्थावली, पृ0-132, पदमावत ,पृ0-93, अन्सारी,आई0 सी0एस0 खण्ड-34, पृ0- 114

200. नीरा दरबारी, पृ0 -77

201. देव ग्रन्थावली,राग रत्नाकर,चौसरू चमेली, पृ0-6, छन्द 21, पेलसर्ट इण्डिया,पृ0-25, इरफान,पृ0-99

202. सिन्हा, पृ0- 347

203. इरफान , पृ0- 99

तक निर्धन एवं निम्न वर्गीय स्त्रियों की भी पहुँच थी और वे इससे वंचित नहीं थीं ।

इस प्रक्रिया में स्त्रियाँ श्रृंगार की अन्य विधियाँ भी प्रयोग करती थीं । " मेक - अप " की परम्परा उच्च वर्गीय महिलाओं तक ही सीमित थी । स्त्रियाँ शरीर पर उबटन तथा सुगन्धी के लिए केसर, कपूर तथा चन्दन का प्रयोग करती थीं ।[204]

श्रृंगार विधियों में पुष्प का विशेष महत्व था ।[205] स्त्रियाँ अपने केश को विभिन्न प्रकार से बाँधती थी । बालों को विशेष प्रकार से घुमाकर बाँधने को " जूडा " कहा जाता था ।[206] पैरों में "महावर " लगाने की

204· आइन,खण्ड- 3, पृ0- 312, बिहारी सतसई,पृ0-180,जायसी ने

लिखा है - प्रथमहिं मज्जन···पायल,पायन्ह मल चरा,।

बारह अभरन एक बखानें,तें पहिरे बारहों असधाने ।।

- पद्मावत,पृ0-287,288

तथा रेखा मिश्रा,पृ0- 123

205· देव ग्रन्थावली, पृ0-4, छन्द -13, पेलसर्ट,इण्डिया,पृ0-25।

206· पी0एन0चोपड़ा, पृ0- 30, रेखा मिश्रा, पृ0 - 124

भी प्रथा थी तथा होंठो को भी स्त्रियाँ सौन्दर्य वृद्धि एवं आकर्षण के लिए रंगती थीं ।[207] आँखों में " अंजन " तथा हाथों में मेंहदी, जिसे हिना भी कहा जाता था, लगाने की परम्परा थी ।[208] शरीर पर विशेष प्रकार के चिन्ह स्त्रियाँ बनवाती थीं, जिसे " गोदना " कहते थे । इसके अलावा दातों को रंगने से सम्बन्धित सामान "मिसिया " का भी स्त्रियों में बहुतायत से प्रचलित था ।[209]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि मध्यकाल से लेकर अठारहवीं शताब्दी के काल तक सामाजिक स्थिति में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ । लोगों के पहनावे तथा रहन - सहन भी लगभग समान ही रहे । निम्न वर्ग की और मध्यम वर्ग की स्त्रियों ने उच्च वर्ग की महिलाओं के रहन सहन को अपनाया परन्तु, अन्ततोगत्वा इनके रहन - सहन की अपनी सीमाएं निश्चित थीं ।

- -

207. नीरा दरबारी, पृ0 - 77

208. मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 340

209. पी0एन0 चोपड़ा, पृ0 - 13

xxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय - चार

xxxxxxxxxxxxxxxxxx

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

xx आर्थिक - इतिहास xx

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

आर्थिक - इतिहास

पृष्ठभूमि :

किसी भी शासन का मुख्य आधार राजनीतिक स्थायित्व और उसकी आर्थिक प्रगति होती है । आर्थिक और शासनात्मक संकट मुगल काल में उत्तरोत्तर बढ़ता गया । यह संकट मूलत: मध्यकालीन सामाजिक परिस्थितियों में निहित था ।[1] आर्थिक समस्याओं के समाधान का प्रयास अकबर से लेकर शाहजहाँ तक ने किया । परन्तु निरन्तर जटिल होती इन समस्याओं ने औरंगजेब के शासन काल में विकराल रूप धारण कर लिया । अठारहवीं शताब्दी में इन समस्याओं ने राजनीति को प्रभावित करते हुए मुगल साम्राज्य के पतन का मार्ग प्रशस्त किया ।[2]

---

1. सतीश चन्द्र , उत्तर मुगल कालीन भारत का इतिहास, पृ0 - 23
2. मोरलैण्ड, मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, पृ0 - 202 से 207,
   सतीश चन्द्र , उत्तर मुगल कालीन भारत का इतिहास, पृ0 - 23

औरंगजेब के शासन काल के उत्तरार्ध में इस संकट का प्रमुख कारण था - जागीरों की अत्यधिक कमी ।[3] औरंगजेब के काल में जागीरे प्राप्त करने के इच्छुकों की संख्या अत्यधिक थी । मंसब प्राप्त होने के बाद भी जागीर प्राप्त होने में वर्षों लग जाते थे। अभियान के समय अन्य अमीरों की जागीरें छीनकर ऊँचे मनसबदारों को प्रदान की जाती थीं ।[4] जागीरों में कमी का प्रमुख कारण उस काल में अमीरों की संख्या और मंसबों में अत्यधिक वृद्धि थी। जहाँग जहाँगीर के शासन काल के प्रारम्भ में 1605 ई0 में मंसबदारों की संख्या 2069 थी, 1637 ई0 में शाहजहाँ के शासन काल में यह बढ़कर 8000 हो गयी, वहीं 1690 ई0 में औरंगजेब के शासन काल में मंसबदारों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई और यह बढ़कर 11,456 हो गयी ।[5]

---

3. मोरलैण्ड, पृ0 - 198
4. अबुल फजल मामूरी, तारीखे औरंगजेब, पृ0 -157, अ तथा ब, बर्नियर, पृ0 - 227, अतरह अली, दि मुगल नोबिलिटी अण्डर औरंगजेब ,पृ0-87 हरिशंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली, पृ0- 162
5. अतहर अली, दि मुगल नोबिलिटी अण्डर,औरंगजेब, पृ0- 31, सतीशचन्द्र

   पृ0- 23

अमीरों की जो संख्या 1628 ई0 से 1658 ई0 के मध्य 437 थीं यह 1679 ई0 से 1700 ई0 के मध्य बढ़कर 575 हो गयी ।[6] इसका प्रमुख कारण 1678 ई0 के बाद मराठों और दक्षिण के अमीरों को प्रसन्न करने हेतु बडी बडी मंसबे प्रदान करना था ।[7] औरंगजेब के शासन के पूर्व कागज पर आमदनी बढ़ाने से अमीरों को जागीरों से प्राप्त होने वाली वास्तविक आय में ह्रास आया । उदाहरणस्वरूप, शाहजहाँ के शासन काल में जागीरें 8 माहा या 6 माहा अर्थात् निर्धारित आय से 2/3 या 1/2 मूल्य से अधिक मूल्य की नहीं होती थीं । साथ ही मंसबदारों के वास्तविक सवारों की संख्या भी उनकी सवार श्रेणी से 1/3 या 1/4 कर दी गयी अर्थात 6000 जात, 6000 सवार का मंसबदार वास्तविक रूप से केवल 2000 या 1500 घुडसवार रखता था ।[8] फलस्वरूप जागीरदार को अपनी जागीर

---

6. तुजुके जहाँगीरी, वारिस बादशाहनामा, पृ0-70, जवाबिते आलमगीरी पृ0-15अ, एस0आर0शर्मा, रीलिजियस पालिसी आँफ दि मुगल एम्परर्स, पृ0 133, पार्टीज एण्ड पालिटिक्स, , अतहर अली, पृ0-31, सतीश चन्द्र पृ0-23,24

7. श्री राम शर्मा, दि रिलीजियस पालिसी आफ दि मुगल एम्परर्स, पृ0-1
8. लाहौरी, बादशाहनामा, II, पृ0-505 से 507, अतहर अली, दि मुगल नोबिलिटी अण्डर औरंगजेब, पृ0-11 से 14

स्वयं उसके पास रहने की निश्चितता प्राय: समाप्त हो गयी । उक्त काल में फलस्वरूप जागीरदारों ने भूमि को धनधान्यपूर्ण करने का प्रयास नहीं किया और इस कारण कृषि को प्रोत्साहन प्राप्त नहीं हुआ । अत्यधिक कर वसूली ने कृषकों में असन्तोष पैदा किया और कृषि उत्पादन में निरन्तर ह्रास हुआ।

इस प्रकार अमीर और किसान दोनों ही असन्तुष्ट हो गये । अमीर विकास कार्यों में बाधा डालने, गुटबन्दी और कुछ तो स्वतन्त्र रियासतें स्थापित करने जैसे कार्यों में लिप्त हो गये ।[10]

मध्यकालीन सामाजिक विषमताओं के कारण औरंगजेब आर्थिक व शासनात्मक संकट पर नियंत्रण न रख सका । मध्यकालीन समाज में देश के उत्पादक साधनों का अपव्यय सामाजिक व राजनीतिक तत्वों द्वारा भोग

- -

9· भीमसेन, नुस्खा-ए-दिलकुशा, पृ0-138 बतथा 139 ब, हरफान हबीब, पृ0- 180, 181 तथा 185 से 187, अतहर अली, पृ0-64, सतीश चन्द्र पार्टीज एण्ड पालिटिक्स एट दि मुगल कोर्ट, पृ0-29 से 34, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0 - 163·

10· अतहर अली, अध्याय -1, हरिशंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली,

विलास और ऐश्वर्य में किया गया, जो उत्पादक साधनों की वृद्धि के प्रति प्राय: उदासीन रहते थे।[11] मुगलों की शासन व्यवस्था का मुख्य आधार जमींदार थे और इनकी शक्ति मूल रूप से कम नहीं हुई क्योंकि जमींदारों के बिना शासन सम्भव नहीं था।[12]

पूर्वी उत्तर प्रदेश में क्षेत्र में जमींदार :

अठारहवीं शताब्दी में पूर्वी उत्तर प्रदेश में जमींदारों का वर्चस्व था और ये" भू-स्वामी के नाम से जाने जाते थे।[13] जमींदार फारसी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है- भू धारक। जमींदार मध्यस्थों के माध्यम से लगान अथवा भू-राजस्व एकत्रित करके सरकार को भेजा करते थे।[14] 1877 ई0 में आजमगढ़ जनपद के बन्दोबस्त अधिकारी जे0आर0रीड के अनुसार,"मुसलमानों में जमींदार शब्द का अर्थ उतना सीमित नहीं था, जितना इस ....

---

11. सतीशचन्द्र, पृ0- 25
12. वही,
13. मोरलैण्ड, (अनुवादक, कमलाकर तिवारी) पृ0-209, 210, 211, डा0परमात्मा शरण, दि प्रोवीन्शियल...पृ0-इरफान हबीब, एगरियन सिस्टम आफ मुगल इण्डिया, पृ0-136-138, हरिशंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली, पृ0-158
14. बर्नार्ड एस0कोहन, पालिटिकल सिस्टम इन 18 सेन्चुरी इण्डिया, जर्नल आफ दि अमेरिकन ओरियन्टल सोसायटी, वाल्यूम नं0-82, अंक-3, जुलाई-सितम्बर, 1962, पृ0- 315

शब्द का साधारण अनुवाद आज हम भू-स्वामी मानते हैं ।"[15] इस्लाम के आने पर इन्हें जमींदार कहा गया । भूमि को खण्डों में बाँट दिया जाता था और प्रत्येक जमींदार को एक "सनद " और "नानकार " प्रदान किया जाता था। जमींदार अपनी जमींदारी को बेच सकता था । यदि जमींदार किसी अपराध में लिप्त पाया जाता था तो उसे दण्डित भी किया जाता था । राजा को यह अधिकार था कि वह जमींदार से उसकी जमींदारी छीनकर किसी अन्य को प्रदान कर दें । सामन्त और सूबेदार इस अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकते थे ।[16] जमींदारों को भू - स्वामित्व प्राप्त था और वे " आसामी" और " रैयत " कहे जाने वाले कृषकों से भिन्न और श्रेष्ठ थे ।[17]

15· जे0आर0रीड,रिपोर्ट आफ दि डिस्ट्रिक्ट आफ दी आजमगढ कम्पाइल्ड इन कलेक्शन विद दि कम्पलीशन आफ दि सिक्स्थ सेटिलमेन्ट,1877, एपेन्डिक्स, नं0-1, पृ0-6ए, की पाद टिप्पणी,इरफान हबीब,एग्रोरियन सिस्टम आफ मुगल इण्डिया,पृ0- 136 से 138

16· नोमान,अहमद सिद्दीकी,मुगल कालीन भू राजस्व व्यवस्था,पृ0-45, अतहर अली, पृ0- 12,13

17· एस0 नुरूलहसन, पृ0-40,नोमान अहमद सिद्दीकी,मुगल कालीन भू राजस्व व्यवस्था,पृ0-35, अतहर अली, पृ0-12,13

जमीदार,मूलत: उस व्यक्ति का परिचायक था जिसके पास भूमि होती थी। परन्तु अब उसका आश्रय उस व्यक्ति से है जो किसी गाँव या नगर में भूमि का स्वामी हो और कृषि कार्य में संलग्न हो ।[18] इस प्रकार भू- सुधारक और गाँव अथवा नगर की भूमि पर अधिकार रखने वाले उस व्यक्ति के मध्य भेद किया है और जमींदार शब्द का प्रयोग दूसरे प्रकार के अधिकार युक्त व्यक्ति के लिये किया गया है ।[19]

वास्तव में जमींदार शब्द का चलन मुगल काल में आरम्भ हुआ था । इसका प्रयोग स्वायत्त सरदारों, ग्रामीण स्तर के मध्यस्थों और वंशानुगत हितों के अधिकारियों को निर्दिष्ट करने के लिए होता था ।[20]

- -

18. आनन्द राम मुख्लिस,मीरात-उल-इस्तिलाह,पृ0 122 बी तथा एस0 नूरूल हसन, पृ0 - 40

19. इरफान हबीब, दि एग्रेरियन सिस्टम आफ मुगल इण्डिया,पृ0-140

20. एस0नूरूल हसन, मुगलों के अधीन जमींदार, मध्यकालीन भारत,अंक -1 1981, पृ0-40, वी0आर0ग्रोवर, प्रोसिडिंग्स आफ इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, प्रेसीडेन्सियल एड्रेस,मेडिवल सेक्शन0 37 सेसन, कालीकट,1976 पृ0- 149, 150 एस0नूरूल हसन, थाट्स आन एग्रेरियन रिलेशन्स इन

अठारहवीं शताब्दी में पूर्वी उत्तर प्रदेश में भी जमींदार शब्द का यही तात्पर्य था ।[21]

इस काल में स्वायत्त सरदारों से लेकर ग्रामीण स्तर तक के अधिकारी विद्यमान थे । अत: जमींदारों को श्रेणियों में विभाजित करने का प्रयास किया गया । मुगल साम्राज्य की अवनति के समय गोशवारा या परगना जमींदार तथा ग्राम स्तर के जमींदार विद्यमान थे ।[22] जमींदारों को उनकी जमींदारी के आधार पर तीन मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया गया है - प्रथम, स्वायत्त जमींदार, द्वितीय मध्यस्थ जमींदार तथा तृतीय प्राथमिक जमींदार ।[23]

स्वायत्त जमींदार :

स्वायत्त सरदारों की श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले जमींदारों का स्थान सर्वोच्च था । मुगल शासन के अधीन होते हुए भी ये

21. बी0एन0 नारायन, जोनाथन डंकन एण्ड वाराणसी, पृ0-53, के0पी0मिश्रा, बनारस इन ट्रान्जिशन, पृ0-37,58,59

22. विल्टन, ओल्टम, हिस्टारिकल एण्ड स्टैटिस्टिकल मेमायर आफ दि गाजीपुर डिस्ट्रिक्ट, वाल्यूम,-II, पृ0-43,93

सैनिक एवं वित्तीय दायित्वों से मुक्त थे ।[24] इनके प्रदेशों में मुगल मुद्रा ही प्रचलित थी । जो मुगल शासन व्यवस्था की परिचायक थी । दूसरे वे जमींदार थे, जो मुगल सम्राट का आधिपत्य स्वीकार करते थे और वार्षिक उपहार प्रदान करने और प्रान्त के नाजिम की सैनिक सेवा करने की शर्तों पर अपने इलाकों पर अधिकार रखने की राजाज्ञा प्राप्त कर लेते थे ।[25] पूर्वी उत्तर प्रदेश में सैनिक और वित्तीय दायित्वों से मुक्त एवं नाम.मात्र के लिए मुगल सम्राट के आधिपत्य को स्वीकार करने वाला कोई जमींदार नहीं था । इस क्षेत्र में निश्चित वार्षिक पेशकश तथा सैनिक सहायता देने वाले जमींदार थे ।[26]

- -

24• सैयद नजमुल रजा रिजवी, ए स्टडी आफ जमींदार्स आफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश इन एट्टीन्थ सेन्चुरी (शोध प्रबन्ध इलाहाबाद विश्वविद्यालय, 1983) पृ0- 53

25• नोमान अहमद सिद्दीकी, मुगल कालीन भू-राजस्व व्यवस्था, पृ0-36

26• सैयद नजमुल रजा रिजवी, पृ0- 53

मध्यस्थ जमींदार :

प्राथमिक जमींदारों से राजस्व एकत्रित करके उसे स्वायत्त सरदारों या जमींदारों को प्रदान करने का कार्य मध्यस्थ जमींदार करते थे। मध्यस्थ जमींदार अपने क्षेत्र में कानून और व्यवस्था पर भी नियंत्रण रखते थे। पैतृक उत्तराधिकार प्राप्त ये जमींदार कभी कभी अनुबन्ध पर भी अपनी सेवाएं प्रदान करते थे। व्यवहारिक रूप से सम्पूर्ण देश किसी न किसी प्रकार के मध्यस्थ जमीदारों के अधिकार क्षेत्र में आता था।[27] अठारहवीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य के विघटन का लाभ उठाकर मध्यस्थ जमीदारों ने स्वायत्त सरदार बनने का भी प्रयत्न किया।[28] पूर्वी उत्तर प्रदेश में बहुत से जमीदारों को अर्द्ध स्वतन्त्र सरदारों के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है।[29]

---

27. एस0नूरूल हसन, "जमीदार्स अण्डर दि मुगल्स", सम्पादित राबर्ट एरिक फ्राइकेन बर्ग, लैण्ड कन्ट्रोल एण्ड सोशल स्ट्रक्चर इन इण्डियन हिस्ट्री, 1979, पृ0- 24,25

28. सी0ओ0जी0 (गोरखपुर) वाल्यूम नं0 15, फाइल नं0-17, सीरियल नं0-11 10 मार्च 1821 ई0, पृ0-93,94

29. डंकन रिकार्ड्स, बस्ता नं02, रिकार्ड नं0-10, पृ0-181, विल्टन ओल्टम, हिस्टारिकल एण्ड स्टैस्टिकल मेमायर.....पार्ट -11, पृ0-180, 181 ई0टी0एटकिंसन, स्टेस्टिकल डिस्क्रिप्टिव...वाल्यूम-6, पार्ट-11 (गोरखपुर) पृ0- 443, 446

प्राथमिक जमींदार :

तृतीय श्रेणी के, प्राथमिक जमींदार भूमि पर स्वयं काश्त करते थे अथवा कृषकों के माध्यम से कृषि कार्य करते थे । इन्हें कृषि योग्य और निवास योग्य भूमि पर स्वामित्व प्राप्त था । इस वर्ग में अपने हाथ से या किराये के मजदूरों की सहायता से खेती करने वाले कृषक स्वामी ही नहीं बल्कि एक या अधिक गाँवों के स्वामी भी आते थे ।[30] प्राथमिक जमींदारों की श्रेणी के अन्तर्गत ग्राम स्तर के जमींदार[31], मैय्यावारा जमींदार[32], पट्टी-

---

30. एस0नुरूल हसन, थाट्स आन ......पृ0-30 तथा मुगलों के अधीन जमींदार , पृ0- 46

31. मुफ्ती गुलाम हजरत,क्वायफ-ए-जिला-ए-गोरखपुर, पृ0- 27

32. के0पी0 मिश्रा, बनारस इन ...... पृ0 - 69 , बी0ए0 नारायन, जोनाथन डंकन एण्ड ......पृ0- 55, 56 , के0पी0 श्रीवास्तव, हिस्ट्री एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन ..... पृ0- 219, 220.

दार, अथवा थोकदार[33] तथा विर्तिया जमींदार[34] शामिल थे।

जमींदार और कृषक दोनों ही अपने जीवन को समृद्ध बनाने के लिए कृषि पर आधारित थे। कृषि में विस्तार और कृषि कार्य में लगे लोगों की संख्या में वृद्धि से जमींदार प्रायः स्वामिभक्ति पूर्ण सेवाएं भी प्राप्त करता था। जमींदार स्वयं भी कृषकों की महत्ता को समझते हुए उनसे सद्भाव पूर्ण व्यवहार करता था। यद्यपि कृषकों की कमी को ध्यान में रखकर

- -

33. बर्नार्ड एस0कोहन, स्ट्रक्चर चेन्ज इन इण्डियन रूरल सोसायटी, 1596 1885 ई0, सम्पादित राबर्ट एरिक फ्राइकेन बर्ग, लैण्ड कन्ट्रोल एण्ड सोशल स्ट्रक्चर इन इण्डियन हिस्ट्री, पृ0- 64,65, एकदलित जाति का परिवर्ती स्तर, बर्नार्ड एस0 कोहन की रिपोर्ट पर आधारित, सम्पादित मेकिम मेरियट, ग्रामीण भारत (अनुवादक हरिश्चन्द्र उप्रेती) पृ0- 55,56

34. एस0नुरूल हसन, पृ0-36, सैय्यद नजमुल रजा रिजवी, दि विर्तिया जमीदार्स आफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, यू0पी0हिस्टारिकल रिव्यू नं0-1, अगस्त 1982, पृ0- 57

जमीदार काश्तकारों को भूमि छोड़ने से रोकने और प्राप्त की हुई समस्त कृषि योग्य भूमि, छोड़ने से रोकने और प्राप्त की हुई समस्त कृषियोग्य भूमि में खेती करने के लिए बाध्य करने के अधिकार का भी प्रयोग करता था।[35] वह कृषकों को निवास हेतु ग्राम में भूमि, खेती के लिए ऋण, भू-राजस्व का सरल किश्तों में भुगतान और प्राकृतिक आपदा में ऋण व तकावी आदि भी प्रदान करता था।[36] स्पष्टत: जमींदार सुविधाएं प्रदान करते थे, परन्तु फिर भी कृषक और जमींदार के मध्य अविश्वास की भावना बनी रही ।

- -

35. एस0 नूरूल हसन, मुगलों के अधीन जमींदार, मध्यकालीन भारत, अंक -1, 1981, पृ0- 47 तथा हरि शंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली, पृ0 - 160

36. सी0ओ0जी0 (गोरखपुर), वाल्यूम नं0- 14, फाइल नं0 16, सीरियल नं0 -34, पृ0- 118,119 कैलेन्डर आफ पर्शियन करसपान्डेन्स वाल्यूम नं0 4, लेटर नं0 - 905, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 160

इसका एक मात्र कारण जमींदारों द्वारा कृषकों के शोषण की प्रवृत्ति रही ।[37]

अठारहवीं शताब्दी के पाँचवें दशक से ऐसे जमींदार वर्ग का उदय हुआ । जो

अपने जमींदारी की माल गुजारी के अतिरिक्त निकटवर्ती जमींदारों या

निश्चित क्षेत्र की मालगुजारी वसूल करने का ठेका लेकर सरकार को भू राजस्व

देते थे, ताल्लुकेदार कहे जाने लगे । ताल्लुकेदारीका क्षेत्र विस्तृत होने के

बावजूद जमींदार के अधिकार ताल्लुकेदार से अधिक थे । मुगल काल में

ताल्लुकेदार को एक छोटे जमींदार से अधिक नहीं समझा जाता था ।[38]

इस प्रकार निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि अठारहवीं

शताब्दी में पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में जमींदार प्रतिष्ठित वर्ग के रूप में

मान्यता प्राप्त कर चुके थे । यद्यपि वे कृषकों के हित के प्रति जागरूक थे

- -

37. के0पी0मिश्र,बनारस इन.....पृ0-72, एफ0एच0फिशर, स्टैटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव......वाल्यूम नं0-13, पार्ट -1, पृ0- 104

38. दफ्तर -ए- खालसा,फुटनोट- 9 बी, 10 ए, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 160, नोमान अहमद सिद्दीकी , पृ0- 25, 26, 27

परन्तु उनके व्यक्तिगत हित कहीं ज्यादा सर्वोपरि थे । मान प्रतिष्ठा, धनधान्यपूर्ण जीवन के प्रति वे अत्यधिक सचेत रहते हुए कृषकों के बहुत से हितों की अनदेखी भी करते रहे । जिसके कारण कृषक सदैव शोषित वर्ग के रूप में ही रहा ।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद यह स्पष्ट हो गया था कि पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में प्राय: सरदारों ने स्वतन्त्र रियासतों की स्थापना कर ली थी । विघटन से उत्पन्न परिस्थितियों के कारण स्थानीय सरदार आपस में संघर्षरत थे । अत: आम जनता के आर्थिक जीवन में भी स्थायित्व की सम्भावना नहीं के बराबर थी । ऐसे समय में आर्थिक विकास का दायित्व स्थानीय अधिकारियों और जमींदारों के ऊपर आ गया । अतिरिक्त उत्पादन के लाभांश को प्राप्त करने की अदम्य इच्छा ने इन वर्गों को कृषि, उद्योग एवं व्यापार की उन्नति के प्रति आकर्षित किया ।

कृषि :-

सरकार की आय का प्रमुख स्रोत कृषि थी । कृषि से प्राप्त राजस्व से जहाँ सरकार को लाभ था, वहीं स्थानीय जमींदार भी लाभान्वित

होते थे । उनकी आय का प्रमुख स्रोत "सीर " अथवा निज जोत की भूमि होती थी ।[39] इस भूमि पर किराये के मजदूरों की सहायता से खेती होती थी। प्रत्येक जमींदार अपनी सामर्थ्य के अनुसार अधिक से अधिक भूमि पर स्वयं खेती करता था और शेष भूमि खुद काश्त या पाही काश्त रैयतों को देकर उनसे कृषि करवाता था ।[40] भूमि पर कृषि करने वाले मजदूरों की कमी के कारण कृषकों को बसाने के लिए विशेष प्रयत्न करने पड़ते थे । प्राकृतिक विपत्तियों में जमींदार अपनी ओर से विशेषसुविधाएं प्रदान करते थे ।[41] उदाहरण स्वरूप, आजमगढ़ जनपद में कुछ बनिया लोगों को वीरान भूमि प्रदान की गयी, जिस पर उन्होने आबादी का विकास किया और कृषि कार्य हेतु कृत्रिम पोखरों का भी निर्माण किया । इस ग्राम का नाम

- -

39. के0पी0 मिश्रा, बनारस इन······· पृ0 - 69

40. इरफान हबीब, सं0 मध्यकालीन भारत, अंक -2, 1983 में प्रो0 इरफान हबीब का ही लेख, पृ0-141,142 से 144

41. सी0ओ0जी0{गोरखपुर} वाल्यूम नं0 -14, फाइल नं0 - 16, सीरियल नं0 - 34, 10 नवम्बर 1828, पृ0- 118, 119

बोधइता था ।[42] कृषि के विकास में राजाओं एवं जमीदारों ने अपना धन भी लगाया । उदाहरणार्थ, राजा बलवन्त सिंह ने परगना सैदपुर को भावन्त राय को " ताहुद " (अनुबन्ध) पर प्रदान किया । भावन्त राय ने परगने को आबाद करने एवं कृषि को प्रोत्साहित करने के लिए सैकड़ों रूपये व्यय किये ।[43] आजमगढ़ के राजाओं के परिवार के सदस्यों ने अपनी व्यक्तिगत जीवन अभिलाषा के कारण बहुत से बीरान इलाके 17वीं एवं 18 वीं शताब्दी में आबाद किये और कृषि कार्य आरम्भ करवाया ।[44]

- -

42. जे0 थामसन, रिपोर्ट आफ दि क्लेक्टर आफ अजीमगढ.....
16 दिसम्बर, 1837, ई0 पृ0-10, पैरा नं0- 34, (उद्धृत सैयद नजमुल रजा रिजवी; शोध प्रबन्ध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय)

43. कैलेन्डर आफ पर्शियन करसपान्डेन्स, वाल्यूम नं0 - 7, लेटर नं0-3 29,372.

44. सैयद नजमुल रजा रिजवी, "ए जमींदार फैमिली आफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, प्रोसिडिंग्स आफ इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, बम्बई, 1980, पृ0-239 से244

परगना माहुल के सैयद जमींदारों ने बंजर भूमि पर बहुत से गाँव बसाये और उसमें कृषि का विस्तार किया ।[45] गोरखपुर के सत्तासी राजा के परिवार के सदस्यों द्वारा जीवनयापन के लिए विभिन्न भू भागों को आबाद किया । धुरियापार के कौशिक राजपूत राजा, उन्वल एवं बाँसी के श्री नेत राजा के परिवार के सदस्यों द्वारा नए भू - भाग आबाद किये गये और कृषि का विस्तार किया गया ।[46] वीरान तथा जंगली भू - भाग में खेती करने वाले कृषकों को विशेष सुविधाएं दी जाती थीं और उनसे राजस्व के रूप में उपज का केवल पाँचवा भाग ही लिया जाता था ।[47] जहाँ के कृषक आर्थिक रूप से कमजोर था वहाँ राजा की सरकार

- -

45• जे0आर0रीड, रिपोर्ट आन दि डिस्ट्रिक्ट आफ आजमगढ, 1877 ई, पृ0-67

46• नागेश्वर प्रसाद सिंह वर्मा, नाग कौशलोत्तर, प्रथम खण्ड ।

47• डंकन रिकार्ड्स, बस्ता नं0-6, रिकार्ड नं0 -31, पृ0- 335 से 335
बस्ता नं0 - 18, रिकार्ड नं0 -96, 25 मार्च 1790 ई0 पृ0-
106 से 108

को बसाया और कृषि का विकास किया ।[49]

इस प्रकार पूर्वी उत्तर प्रदेश के राजाओं, जमींदारों व उच्च वर्गीय किसानों ने आर्थिक जीवन की प्रगति के लिए कृषि को प्रोत्साहित किया और किसानों को विभिन्न सुविधाएं प्रदान की । यद्यपि नेपथ्य में उनका मूल उद्देश्य स्वयं को आर्थिक रूप से सम्पन्न बनाना था ।

मुख्य फसलें :

पूर्वी उत्तर प्रदेश का क्षेत्र मुख्यतया कृषि प्रधान क्षेत्र था । यहाँ के कृषक विभिन्न प्रकार की फसलों को नियमित क्रम में बोते थे । दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाली प्राय: सभी फसलों का उत्पादन इस क्षेत्र के कृषक करते थे ।

---

49. एच०सी०ए० कोनीबियर, रिपोर्ट आन परगना युद्धी· पृ० - 22

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में रबी की प्रमुख फसलों में गेहूँ, काबुली चना, देशी चना, जौ, हरा जौ (खोयद) जो बाली में नहीं होता था, मसूर मुअसफर का बीज, पोस्ता, तरकारी, अलसी, सरसों, अर्जन, मटर, गाजर, प्याज, मेथी, विलायती खरबूजा, देशी खरबूजा, जीरा, काला जीरा, कूर धान और अजवाइन इत्यादि थी ।[50]

खरीफ की प्रमुख फसलों में पौंडा, साधारण गन्ना, काला धान, साधारण धान, आलू, कपास, मोंठ, अर्जन, नील, मेंहदी, सन, तरकारी, पान, सिंघाडा, जुआर, कोरी, विलायती, खरबूजा, तिल, मूँग, हल्दी, मूँजी, धान, माश, गाल, तुरिया, तरबूज, लोबिया, गाजर, अरहर, लहद कोदरम, मडवा, सांवा और कुल्त आदि थीं ।[51]

---

50. आइने अकबरी, सम्पादित हरि वंश राय शर्मा, महामना प्रकाशन मन्दिर, 1966, खण्ड-3, पृ0- 74

51. वही, पृ0 - 76

भू- राजस्व :

पूर्वी उत्तर प्रदेश के राजाओं एवं जमींदारों ने कृषि को प्रोत्साहित करते हुए राजस्व को भी प्रमुख स्थान दिया । कृषि से प्राप्त होने वाला राजस्व जहाँ राजाओं एवं जमीदारों के लिए लाभप्रद था वहीं कृषकों को भी सुविधाएं प्राप्त होती थीं और कृषि को भी विशेष प्रोत्साहन दिया जाता था । राजस्व की प्राप्ति एवं वसूली के लिए विभिन्न अधिकारी भी नियुक्ति किये गये थे ।

अगोरी के राजा सुद्विस्ट नारायण को निष्कासित करके उसकी जमींदारी पर बनारस के राजा बलवन्त सिंह ने अधिकार करके जमींदारी की व्यवस्था हेतु एक " नायब " की नियुक्ति की ।[52] यह नियम भी प्रतिपादित किया गया कि जो लोग जंगलों को काटकर उसमें खेती करने के इच्छुक होंगे, उन्हें नायब की तरफ से आसान शर्तों पर दीर्घकालिक पट्टे

---

52. सैय्यद नजमुल रजा, रिजवी ।

प्रदान किये जायेंगे । कृषकों की फसलों की रक्षा हेतु "बर्कन्दाज " नियुक्त किये जाते थे। व्यवस्था के अभाव में फसलों को नुकसान पहुँचने पर उसका समस्त दायित्व " अमीन " नामक अधिकारी पर होता था ।[53] राजा का अमीन को यह भी आदेश था कि राजस्व की वसूली के लिए कृषकों को अनाज बेचने और खलिहान से राजस्व के रूप में अनाज वसूल करने के लिए मजबूर न किया जाय । कृषकों सेसउचित व समान किश्तों पर ही राजस्व वसूल करने के निर्देश दिये गये । इस कारण अगोरी महाल (परगना) का राजस्व पाँच -छः हजार से बढ़कर अस्सी हजार रूपये हो गया।[54]

- -

53. अकबर-नामा, भाग-3, पृ0-226,403,601, निगार-नामा-ए-मुन्शी पृ0-136 ,मीराते अहमदी,खण्ड-1,पृ0-374,खुलासत-उल-सियाक, उद्धृत,नोमान अहमद सिद्दीकी ।

53. डंकन रिकार्ड्स,बस्ता नं0 -6, रिकार्ड नं0 31, पृ0-323 से 335 , बस्ता नं0 - 18, रिकार्ड नं0 - 96 ,25 मार्च 1790 ई0 पृ0- 106 से 108

गोरखपुर सरकार स्थित बुटवल के राजा बहुत ही कम राजस्व लेते थे। बुटवल के राजा ने कृषि की उन्नति हेतु नहरों आदि का भी निर्माण किया।[55]

बनारस के राजा बलवन्त सिंह ने कृषि को विस्तार हेतु आमिलों और राजस्व अधिकारियों के लिए कठोर नियम बनाए थे। प्रत्येक आमिल को कृषकों से समस्त वार्षिक राजस्व वर्षा ऋतु प्रारम्भ होने के पूर्व ही एकत्रित करना अनिवार्य था ताकि वर्षा के प्रथम तीन माह में कृषक निश्चिन्त होकर खेती कर सके। इस प्रकार आमिल कृषकों से वर्ष के नौ महीनों - अक्टूबर से जून तक - में ही राजस्व वसूल कर सकते थे।[56] कृषकों के राजस्व सम्बन्धी भार को हल्का करने के उद्देश्य से उसे दो भागों में विभाजित

---

55. गोरखपुर कलेक्टेट, रेवेन्यू लेटर्स रिसीव्ड, सीरिज नं0 -1. बस्ता नं0 1804 ई0, पृ0- 92,93

56. विल्टन ओल्टम, हिस्टारिकल एण्ड स्टेटिस्टिकल मेमायर...... पार्ट - 2, पृ0- 94

करके देने की सुविधा प्रदान की गयी ।[57] ये नियम थोडी कम कठोरता के साथ राजा चेत सिंह के समय में भी लागू रहे । आमिलों को जब राजस्व दर बढानी होती थी तो वे उपकरों को लगाने की नीति अपनाते थे । परन्तु राजा बलवन्त सिंह और राजा चेत सिंह के समय - समय पर कठोरता से आमिलों की इस कार्यवाही पर अंकुश लगाया । समस्त जमींदारों में "अबवाब " के रूप में एक रूपया नौ आना प्रति सैकडा की दर से परगनों के प्राचीन राजस्व दर के साथ एकत्रित करने का नियम बना दिया। इस कार्य से खेती के विस्तार के साथ साथ राजस्व सरलता पूर्वक एकत्रित होता रहा और आम जनता भी सन्तुष्ट रही ।[58]

मुगलों के समाप्त प्राय साम्राज्य में इस काल के राजाओं और जमींदारों के विभिन्न संगठनों के मध्य भूमि हडपने के लिए संघर्ष भी हुए,

- -

57. के0पी0 मिश्र , बनारस इन ······पृ0 - 83

58. विल्टन ओल्टम, टेनेन्ट राइट एण्ड आक्शन सेल्स इन गाजीपुर एण्ड दि प्राविन्स आफ बनारस, सेक्शन -2, टेनेन्ट राइट इन बनारस पृ0 - 10

जिसका प्रत्यक्ष एवं सीधा प्रभाव कृषि पर पड़ा ।[59] शक्तिशाली राजाओं ने कृषि की भूमि को वीरान भी बनाया । आपसी संघर्ष ने बहुत से जमींदारों को जमींदारी से वंचित भी कर दिया । जमींदारी से वंचित होने वाले जमींदार अथवा उनके परिवार के सदस्यों ने लूटपाट को अन्तत: अपना अस्त्र बना लिया ।[60]

अठारहवीं शताब्दी में व्याप्त इस अराजकता के कारण कृषि को पहुँचने वाली क्षति को रोकने के प्रयास भी जमींदारों ने किये । उदाहरण स्वरूप, आजमगढ़ के परगना बेल्हाबाँस, अतरौलिया, कौड़िया एवं तेलहनी में जमींदार वर्ग आमिल के शोषण को रोकने में सफल हुए ।

- -

59. गोरखपुर कलेक्टेट जुडिशियल लेटर्स इश्यूड, सीरीज नं0-1, बस्ता नं0-166 सीरियल नं0-10210 नवम्बर 1806 ई0, लेटर नं0-5, जे0थामसन, रिपोर्ट आफदि कलेक्टर आफ आजमगढ, 16 दिसम्बर 1837 ई0प्र0-1। पैरा नं0 38, मोहम्मद अ0ग0 फारूकी ; शजरे, शादाब, पृ0-9।

60. तीरीख-ए-आजमगढ, पृ0-32 ए, सैयद अमीर अली रिजवी, सर-गुजश्त-ए-आजमगढ, पृ0-28वी, 29ए, गिरधारी, इन्तजाम-ए-राज-ए-आजमगढ, पृ0-104 ए, 105ए, नागेश्वर प्रसाद सिंह वर्मा, नाग कौशलोत्तर खण्ड - प्रथम ।

गोरखपुर सरकार में बुटवल का राजा अवध के नवाब के आमिलों के शोषण से सुरक्षित रहा । इसी प्रकार बनारस के राजा भी अवधके अनवाब को निश्चित राजस्व देते रहे । परन्तु चेत सिंह के विद्रोह के पश्चात बनारस के कृषि राजस्व में कमी हो गयी ।

भू - राजस्व का निर्धारण :

भू राजस्व का निर्धारण मुगल काल में केन्द्र सरकार, जागीरदार और मदद-ए-माश भूमि धारकों द्वारा किया जाता था ।[61] बहुत से महाल भी खालसा भूमि के रूप में थे । इन महाल का भू राजस्व दीवान-ए-आला द्वारा नियुक्त " आमिल " और करोड़ी द्वारा एकत्रित करके सरकारी खजाने में जमा किया जाता था । बहुत से महालों का भू राजस्व वेतन भोगी मनसबदारों द्वारा अपने आमिलों

61· नोमान अहमद सिद्दीकी, लैण्ड रेवेन्यू ·····पृ० = 102

के माध्यम से एकत्रित कराया जाता था । सभी सूबों में इस भू राजस्व का कुछ भाग जरूरतमन्द लोगों, सन्तों, शेखों और सैयदों को भी प्रदान किया जाता था । बहुत से परगनों की भूमि मदद-ए-माश के तौर पर दी गयी थी और इस भूमि को धारणकरने वाला व्यक्ति ग्राम का भू - राजस्व प्राप्त करने का अधिकारी होता था ।[62] जागिरदारी प्रथा और मदद-ए-माश भूमि ने भारत की ग्रामीणव्यवस्था को अत्यधिक प्रभावित किया ।

खालसा भूमि पर सबसे अधिक प्रभाव जागीरदारी परम्परा ने परम्परा ने डाला । शाहजहाँ ने अपने शासन काल के प्रारम्भ में खालसा भूमि का भू - राजस्व एक करोड पचास लाख रूपये निर्धारित किया ।[63]

- -

62. इलाहाबाद डाक्यूमेन्ट्स, नं0 -3, 156, 157, 162.

63. शाह न्वाज खाँ, मआसिर- उल- उमरा, भाग - 2, पृ0 - 148

धीरे - धीरे यह बढ़कर तीन करोड रूपये पहुँच गयी ।[64] शाहजहाँ के शासन काल के अन्त में खालसा भूमि के भू - राजस्व लगभग चार करोड रूपये हो गया ।[65] औरंगजेब के शासन के तेरहवें वर्ष में यह भू - राजस्व चार करोड़ रूपये निर्धारित कर दिया गया ।[66] खालसा भूमि औरंगजेब के शासन काल में भी बढ़ती रही ।[67] औरंगजेब की मृत्यु के बाद खालसा भूमि कम होने लगी और मुहम्मद शाह के समय में ये भूमि सरदारों को प्रदान की गयी । मुहम्मद शाह के काल में अयोग्य सरदारों को भी ऊँचा मनसब प्रदान किया गया, जिसके कारण भू राजस्व में काफी कमी आ गयी ।[68]

- -

64· बादशाहनामा, खण्ड-2, पृ0-711, मआसिर-उल-उमरा, खण्ड-2, पृ0- 815

65· शाहनवाज खाँ, मआसिर-उल-उमरा, खण्ड-2, पृ0-814, 815

66· शाहनवाज खाँ, मआसिर-उल-उमरा, खण्ड-2, पृ0- 813

67· जवाबित-ए-आलमगीरी, फुटनोट -81 ए बी

68· अव्वाल-उल-खवानीन, पृ0-182, शाबनामा-ए-मुनव्वर-उल-कलाम, फुटनोट - 86ए ।

हालाँकि इसके पूर्व दक्षिण के अमीरों को अत्यधिक मनसब प्रदान किये गये थे, जिसका प्रतिकूल प्रभाव परवर्ती शासन काल में पड़ा । इस काल में जागीरों की काफी कमी हो गयी ।[69] बहादुरशाह के समय तक खालसा भूमि काफी कम हो गयी । औरंगजेब शासकों की नियुक्ति करने लगे और राजनैतिक वातावरण अस्थिर हो गया । फलस्वरूप समस्त खालसा भूमि इन्हीं मनसबदारों और जागीरदारों के हाथ में चली गयी ।

प्रत्येक ग्राम, विशेषतया महाल का मूल्यांकन किया जाता था। इसके अन्दर मूल्यांकित सभी प्रकार की आय सम्मिलित थी, जिसे "जमा" अथवा " जमीदामी " कहा जाता था । जमा का मूल्यांकन माल - ओ- जिहात, सैर - जिहात तथा सैर - उल - वजूह नामक अधिकारी करते थे। जमा का मूल्यांकन महाल के अन्तर्गत आने वाली कृषि योग्य भूमि पर पर होता था । जिसके द्वारा आय का अनुमान लगाया जाता था । इस

- -

69· खाफी खाँ, मुन्तखब्कुल लुबाब, खण्ड-2, पृ0- 413, 414

बात का भी विशेष ध्यान रखा जाता था कि कृषि योग्य भूमि पर खेती हो रही है अथवा नहीं । इस बात को देखते हुए ही जमा को मूल्यांकित किया जाता था ।[70] जहाँ विभिन्न प्रकार की खेती होती थी वहाँ जमा, जो कि मूल्यांकित किया जाता था, और हाल-ए-हासिल, जो कि वास्तविक मत्यांकन होता था, के मध्य वर्ष के भू - राजस्व के निर्धारिण में काफी अन्तर पैदा कर देता था । अतः भू राजस्व प्रशासन ने पहले ही जमा के स्थित रिकार्ड दस्तूर -उल - अमल और हाल -ए- हासिल के आँकड़ों को अलग - अलग कर दिया । अकबर के समय में जमा की राशि पाँच सौ करोड दाम तक पहुँच गयी थी ।[71] जबकि जहांगीर के समय में यह सात सौ करोड दाम से भी अधिक हो गयी ।[72] शाहजहाँ

- -

70. बर्नियर ,भाग -2, पृ0-5, मोरलैण्ड, पृ0- 12

71. आइने अकबरी, भाग-2, पृ0- 48

72. बादशाहनामा, भाग -2, पृ0- 711

के शासन काल में जमा और हाल-ए- हासिल के मध्य के अन्तर को दूर करने का प्रयास नहीं किया गया । परन्तु ये निश्चित है कि जमा प्रत्येक सूबे, सरकार और परगने की निश्चित आय को प्रदर्शित करते थे । जिससे भू राजस्व के निर्धारण में सहायता मिली । उत्तर प्रदेश में अकबर कालीन भू - राजस्व बन्दोबस्त ब्रिटिश कालीन बन्दोबस्त के समान ही था और कुछ बातों में भी तो वे पूर्णतया आधुनिक थे ।[73] मुगल कालीन राजस्व नियम कड़ाई के साथ केवल खालसा भूमि पर लागू थे । अधिकतर भूमि जागीरदारी, जमींदारी, मदद-ए-माश तथा वतन जागीर के रूप में थी, जिन पर वे नियम पूर्णतया लागू नहीं थे । भूमि के विभाजन तथा उपज की तालिका में से औसत निकालकर मालगुजारी वसूल की जाती थी । इससे ऐसे किसानों को, जिनके पास द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी की भूमि थी, लगान अधिक देना पड़ता था और ये लगान उपज के 1/2 से

- -

73. मोरलैण्ड, द रेवेन्यू एडमिनिस्ट्रेशन आफ दि यूनाइटेड प्रोविन्सेज, पृ0- 16, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 166

से अधिक ही था ।[74]

राजस्व प्रशासन का संगठन :

मुगल काल में भू राजस्व का निर्धारण और उसका एकत्रीकरण " दीवान -ए- विजारत " नामक विभाग करता था।[75] जो कि केन्द्र, सूबे, सरकारों और परगने के स्तर पर कार्यरत था । इस विभाग के मुख्य अधिकारी को दीवान-ए- कुल या वजीर अथवा दीवान-ए- आला के नाम से जाना जाता था ।[76]

औरंगजेब के काल में इस पद को " वजीर - ए- आजम " अथवा " वजीर -ए- मुअज्जम " भी कहा गया ।[77]

74· हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 166

75· कुरैशी, दि एडमिनिस्ट्रेशन आफ दि सल्तनत आफ देहली, पृ0-84,85

76· इब्ने हसन, सेन्ट्रल स्ट्रक्चर आफ दि मुगल एम्पायर, पृ0-148, नोमान अहमद सिद्दीकी, पृ0- 61

77· खाफी खाँ, मुन्तखब्वुल लुबाब, भाग-2, पृ0-235, शाहनवाज खाँ, मआसिर, उल-उमारा, खण्ड-1, भाग-1, पृ0-310,313, भाग-2, पृ0-531,532,533 आलमगीरनामा, पृ0- 832,837

वजीर को अपरिमित अधिकार प्राप्त थे। वजीर को भू राजस्व एकत्रित करने वाले अधिकारियों, जैसे - सूबेदार, दीवान, फौजदार अमीन और करोडी को नियुक्त करने का अधिकार था। मदद-ए-पाश भूमि का प्रबन्ध एवं नियंत्रण वजीर के हाथों में केन्द्रित था। वजीर को बहुत से राजकीय पत्रों में मदद - उल - महमई और " जुमुदात-उल-मुल्की" भी कहा गया है।[78] अन्य कई अधिकारी जैसे - मीर-ए- सम्मन, बख्शी, मुशर्रिफ, तहवीलदार और जमींदार उसके अधीन रहते थे।[79] वजीर को राजकीय कार्यों से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण अभिलेखों, पत्रों आदि पर अपने हस्ताक्षर करने पड़ते थे।[80] भू - राजस्व मन्त्रालय के अन्तर्गत

- -

78. दस्तूर -उल- अमल - ए - आलमगीरी, फुटनोट - 173ए

79. दस्तूर-उल-अमल-ए-आलमगीरी, फुटनोट- 112 ए

80. दस्तूर- उल - अमल- ए- आलमगीरी, फुटनोट - 144 बी, 145 ए, जवाबित-ए-आलमगीरी, पृ0- 31, 30बी, 37 बी, 147

" दीवान -ए- खालसा ", " दीवान- ए- तन ", "मुस्तफी" और दारूल -इंशा - " नामक विभाग थे जो आपसी सामंजस्य से भू -राजस्व व अन्य प्रकार के राजस्व को नियंत्रित व एकत्रित करने के कार्य में संलग्न थे।[81]

औरंगजेब के काल में फजल खान, जफर खाँ और असद खाँ जैसे योग्य वजीर थे। जिन्हें सैन्य एवं प्रशासनिक अनुभव प्राप्त था और इन्होंने प्रशासन में अपनी विश्वसनीयता और कार्य क्षमता को प्रदर्शित किया था। लेकिन औरंगजेब ने वजीर द्वारा सम्पादित कार्यों में अपनी व्यक्तिगत रूचि प्रदर्शित की और समस्त राजकीय कार्यों पर नियंत्रण रखा।[82]

बहादुर शाह के राज्याभिषेक के साथ ही वजीर की स्थिति में परिवर्तन आया। वजीर ने प्रशासन पर अपना सुदृढ नियंत्रण बनाया।

- -

81· दस्तूर -उल-अमल -ए-आलमगीरी, फुट नोट -141ए0 146 ए,

· जवाबित-ए- आलमगीरी, फुटनोट, -86 बी, 93 ए।

82· मआसिर -उल-उमरा, खण्ड-1, अंक-1, पृ0-355

यह बात मुनीम खान, जुल्फिकार खान, अब्दुला खाँ और मुहम्मद अमीन खाँ की नियुक्ति से सिद्ध हो जाती है।[83] उत्तर मुगल काल में शासक और शासन की स्थिरता वजीर पर निर्भर हो गयी।

जहाँदार शाह के वजीर जुल्फिकार खान ने अपना समस्त कार्यभार दीवान- ए- तन सभाचन्द को सौंप दिया था।

फर्रुख सियर के काल में दीवान और सदर की नियुक्ति को लेकर शासक एवं वजीर में मतभेद हो गये।[84] फर्रुख सियर अपने शासन काल में वजीर के हाथों कठपुतली बना रहा।

निजामुलमुल्क ने 1721 ई0 में वजीर का पद ग्रहण किया और

- -

83. इर्विन, लैटर मुगल्स

84. तजकिरात - उल - मुल्क, फुटनोट - 122 ए

सशक्त रूप में इस पद को गौरवान्वित किया । उसने प्रशासन में भू- राजस्व सहित बहुत से सुधार भी किये ।[85]

1723 ई0 में वजीर पद से निजामुलमुल्क के हटने के उपरान्त वजीर की स्थिति कमजोर हो गयी । वह अपने विभाग से सम्बन्धित कार्यों के प्रति उदासीन और अक्षम हो गए । जुलाई 1723 ई0 में कमरूद्दीन खाँ ने वजीर का पद सम्भाला और वह लगभग बीस वर्षों तक वजीर पद पर रहा ।[86]

अत: यें स्पष्ट है कि शासक और वजीर के मध्य विवादों ने उत्तर मुगल कालीन भारत की राजस्व व्यवस्था को अत्यधिक हानि पहुँचायी । शासक क्रमश: एवं क्रमिक रूप से उत्तर मुगल काल में अक्षम एवं अयोग्य सिद्ध हुए जो वजीर पर नियंत्रण स्थापित न कर सके । वजीर सदैव

- -

85· खाफी खाँ, मुन्तखव्वुल-लुबाब, भाग-2, पृ0-948, गुलाम हुसैन ताबातबाई, सियार-उल-मुन्तखाबिरीन, पृ0-455,546, शिवदास लखनवी, शाहनामा -ए-मुनव्वुर -ए-कलाम, {उद्धृत, नोमान, अहमद सिद्दीकी {पृ0-869

86· मुन्तखाव्वुल लुवाब, भाग-2, पृ0-957,973, मआसिर-उल-उमरा, 1, भाग-1, पृ0- 358, 361

अपनी भूमिका के प्रति सशंकित रहे फलत: उन्होंने अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूर्ण करने के लिए कोई प्रयास अधूरा नहीं छोडा । परवर्ती युग में ऐसी स्थिति आ गयी कि अधिकारियों की नियुक्ति, उनकी बर्खास्तगी मनसब का नियंत्रण,सैनिकों का वेतन आदि बांटने की व्यवस्था अब पेशकारों और लिपिकों के हाथ में आ गयी ।[87]

अकबर के काल में प्रान्तीय भू राजस्व व्यवस्था को सुदृढ बनाने के उद्देश्य से दीवान-ए- सूबा की नियुक्ति की गयी थी जो कि केन्द्रीय भू - राजस्व विभाग के सीधे प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता था।[88] बाद में इन्हें सूबेदार दीवान-ए-आला के माध्यम से सम्राट के प्रति उत्तरदायी था । और भू राजस्व से सम्बन्धित समस्त कागज वह वजीर के

- -

87· तजकिरात - उल- मुल्क, फुटनोट - 132 ए

88· हरिशंकर श्रीवास्तव; पृ0- 100

सम्मुख प्रस्तुत करता था ।[89] दीवान -ए- सूबा की नियुक्ति वजीर की संस्तुती पर होती थी ।

दीवान - ए- सूबा का कार्य अपने क्षेत्र के परगनों की कृषि योग्य भूमि का प्रबन्ध करना था । वह इस कार्य में आमिल और फोतदार की सहायता से लेता था । परगनों में काजी, मुफ्ती, कानूनगो, और चौधरी की नियुक्ति सीधे केन्द्र सरकार द्वारा की जाती थी । और ये आमिल के कार्यों पर नियंत्रण रखते थे ।[90] समस्त ग्रामीण प्रपत्रों की देखभाल पटवारी करता था ।

राजकीय करों की वसूली के लिए सूबे को सरकार, परगना और महाल में बाँटा गया था । बहुत से गाँवों का भू राजस्व एक साथ निर्धारित किया जाता था, ये कम या अधिक भी हो सकता था ।

- -

89. अकबर नामा, भाग-2, पृ0-670, इब्ने-हसन दि सेण्ट्रल आफ दि मुगल मुगल एम्पायर, पृ0-165, शरण, प्राविन्शियल गवर्नमेण्ट पृ0-189, हरिशंकर श्रीवास्तव पृ0- 100

90. दस्तरूल -उल- आमिल -ए- बेकास, फुटनोट -376,389,316,429 42ए,43 एबी, निगार नामा -ए- मुन्शी, पृ0-83,90,91,140

राजकीय कर की इस अनुमानित भू राजस्व इकाई को महाल कहा जाता था । बहुत से परगनों को मिलाकर सरकार बनती थी और सरकार के उस भू राजस्व का प्रशासन दीवान-ए-सरकार के अधीन था ।सूबे को अन्य छोटी इकाइयों में विभाजित किया गया था जिसे फौजदारी कहते थे और फौजदारी का अधिकारी फौजदार होता था ।[91] बहुत से स्थानों पर फौजदारी को चकला भी कहा गया । फौजदार के अधीन सैन्य, न्यायिक और भू - राजस्व का प्रशासन था ।[92] परगने के अन्तर्गत भू राजस्व का प्रशासन आमिल[93] और अमल गुजार नामक अधिकारी के अन्तर्गत था ।

- -

91· आइने अकबरी, जैरेट एवं सरकार, भाग-2, पृ0-414, कुरैशी, दि एडमिनिस्ट्रेशन आफ द मुगल सम्पायर, पृ0-231, सरकार, मुगल एडमिनिस्ट्रेशन, पृ0- 64, 65

92· फौजदारी एण्ड फौजदार्स अण्डर दि मुगल्स, मेडिवल इण्डिया क्वाटरली खण्ड-4, 1961, पृ0-22 से 35

93· कुरैशी, इस्लामिक कल्चर, खण्ड-16, 1942, पृ0-87, से 99, कुरैशी, द एडमिनिस्ट्रेशन ····पृ0-231 से 233 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव पृ0- 231 से 233

आमिल के अधीन मुख्य अधिकारी " वितिकची था ।[94] परगने में दो अन्य अधिकारी थे - " कारकुन " और " खासनवीस " ।[95] परगने में " खिजानादार " नामक अधिकारी एकत्रित राजस्व को सुरक्षित रखने का कार्य करता था ।[96] प्रत्येक परगने का अपना कोषागार था और उसका मुख्य अधिकारी खिजानादार था । कोषागार की सुरक्षा के लिए विशेष प्रबन्ध किये जाते थे । इस कार्य हेतु " दरोगा -ए- खजाना " नामक अधिकारी नियुक्त किया गया था । इसी प्रकार पगरना कानूनगो[97]

- -

94. पी०शरण, प्रोविन्शियल गवर्नमेण्ट आफ दि मुगल्स , पृ० - 284

95. आइने अकबरी, भाग -3, पृ० - 381

96. आइने अकबरी ,जेरेट एवं सरकार, भाग -2, पृ०- 52,53
    हरिशंकर श्रीवास्तव , पृ०- 119

97. सिद्दीकी ,लैण्ड रेवेन्यू एडमिनिस्ट्रेशन, पृ०- 87, हरिशंकर
    श्रीवास्तव, पृ० - 120

चौधरी[98] नामक अन्य भू राजस्व अधिकारी थे, जो राजस्व प्रशासन में कार्यरत थे।

अमीन[99], पटवारी[100] और मुक्द्दम[101] मुगल प्रशासन के अर्न्तगत भू - राजस्व एकत्रित करने वाले अन्य अधिकारी थे।

- -

98. सिद्दीकी, पृ0- 90,91, इरफान हबीब, एग्रेरियन सिस्टम, पृ0-291 से 294 तथा हरि शंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली, पृ0 - 121.

99. कुरैशी, इस्लामिक कल्चर, खण्ड- 16, 1942, पृ0- 87 से 99 कुरैशी, द एडमिनिस्ट्रेशन ...... पृ0- 231 से 233

100. हरिशंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली, पृ0 123

101. इरफान हबीब, एग्रेरियन सिस्टम, पृ0 - 133

खालसा भूमि :

मुगल साम्राज्य के अन्तर्गत आने वाले महाल और परगनों की व्यवस्था मनसबदारों को सौंपी गयी थी । इस कार्य हेतु मनसबदारों को प्रशासन की ओर से नगद वेतन प्रदान किया जाता था । साम्राज्य के सभी सूबों में शेष बचे परगने और महाल के अन्तर्गत आने वाली भूमि खालसा भूमि कहलाती थी । इसे खालसा - शरीफा भी कहा जाता था। इस भूमि से प्राप्त समस्त आय सरकारी कोष में जमा की जाती थी । खालसा भूमि से प्राप्त आय स्थानीय प्रशासन के मद में खर्च की जाती थी[102]

खालसाभूमि से प्राप्त आय मुगल काल में काफी सन्तोष जनक थी ।[103] मुगलों के अधीन खालसा भूमि विभिन्न शासकों के काल में कम या अधिक होने लगी । जहाँगीर के समय में राजस्व प्रशासन भ्रष्ट हो गया था । अत: उस काल में खालसा भूमि से प्राप्त आय में लगभग पचास लाख रूपये की

---

102. निगार -नामा - ए- मुन्शवी, पृ0- 140

103. वक्का-ए- अजमेर , पृ0 - 65

गिरावट आई । लेकिन शाहजहाँ के काल में खालसा भूमि पर ध्यान दिया गया । इस कारण इससे प्राप्त आय में काफी वृद्धि हुई ।[104] शाहजहाँ के काल में खालसा भूमि से प्राप्त कुल जमा तीन करोड रूपये हो गया ।[105] शाहजहाँ के शासन काल के अन्त तक यह " जमा " चार करोड रूपये तक पहुँच गयी।[106]

औरंगजेब की मृत्यु के बाद खालसा भूमि काफी कम हो गयी । मुहम्मदशाह के शासन काल में खालसा महाल प्रमुख दरबारियों को प्रदान कर दी गयी । मुहम्मदशाह के समय में अत्यधिक मनसब प्रदान किये जाने के कारण जागीरों की कमी पड गयी। स्पष्टत: जिसका प्रभाव खालसा भूमि पर पडा और यह अत्यधिक कम हो गयी ।

104• मआसिर-उल-उमरा, खण्ड-2, पृ0- 148

105• बादशाहनामा, ख0-2, पृ0-711,712, मआसिर-उल-उमरा, ख0-3 पृ0- 815

106• मआसिर - उल- उमरा, खण्ड-2, पृ0- 814, 815•

मदद - ए - माश :

ऐसी भूमि जो बीमार व्यक्तियों, असहाय, सन्तों, धार्मिक व्यक्तियों, धार्मिक व शैक्षिक संस्थानों, निराश्रित विद्यार्थियों को प्रशासन द्वारा प्रदान किया जाता था और ये भूमि कर रहित होती थी । इसे मदद-ए - माश या मिल्ककहा जाता था ।[107]

मदद - ए- काश को एक प्रकार का ऋण कहा जा सकता है, न कि भूमि पर पूर्ण स्वामित्व । यह सुविधा सम्राट द्वारा व्यक्ति विशेष को प्रदान न कर बल्कि उसकी आने वाली पीढ़ियों के लिए भी प्रदान किया जाता था । इस प्रकार के आदेश औरंगजेब ने 1690 ई0 में जारी किये थे म व्यक्ति की मृत्यु के बाद यह भूमि उसके पुत्र अथवा पौत्र को पौत्र को प्रदान की जाती थी ।[108] यदि पत्नी जीवित हैतो उसे मदद-ए-माश

---

107. आइने अकबरी, भाग-1, पृ0-141, इण्डियन इकनामिक एण्ड सोशल हिस्ट्री रिव्यू, वाल्यूम -1, अंक-1, यू0एन0डे, मुगल गवर्नमेण्ट, पृ0-143 144 , हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 164

108. इलाहाबाद डाक्यूमेन्ट्स, पृ0- 167, 169, 173, 175, 154

भूमि का स्वामित्व प्रदान किया जाता था । विवाहित पुत्रियों का इस भू - सम्पत्ति में कोई हिस्सा नहीं होता था ।[109] यह भूमि ऐसे भी लोगों को प्रदान की जाती थी जो उच्च कुल से सम्बन्धित थे परन्तु कालान्तर में जिनकी आर्थिक स्थिति एवं सामाजिक स्तर काफी कम हो गया और वे अन्य कोई कार्य अथवा व्यापार आदि नहीं करते थे ।[110] मदद-ए- माश भूमि का समय - समय या निश्चित समयावधि पर प्रमाणित किया जाता था । ये कार्य सदर का कार्यालय करता था । जो व्यक्ति भूमि धारण करता था उसे प्रमाण गवाहों सहित देना पड़ता था कि भूमि उसके अधिकार में है और वह उसका सही प्रयोग कर रहा है । सदर के सन्तुष्ट होने पर मदद-ए-माश धारक को नई सनद प्रदान की जाती थी जो कि उसके स्वामित्व की पुष्टि करता था ।[111] मदद - ए - माश भूमि से सम्बन्धित एक अलग

- -

109. इरफान, पृ0- 306, ﴾इलाहाबाद डाक्यूमेन्ट,-11,पृ0-53 से65

110. आइने -अकबरी, भाग -1, पृ0- 140, 141

111. इलाहाबाद डाक्यूमेण्ट ,नं0-2, पृ0- 165, 168,174,176, 178, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 79

कार्यालय था जो कि सदर या सद्र - ए - सुदूर के अधीन था ।[112] सद्र-ए- सुदूर पद के चयन में व्यक्ति की व्यापारिक बुद्धि और उसके अच्छे प्रबन्धक होने के गुणों महत्ता दी जाती थी ।[113] मुगल फरमानों के अनुसार यह भूमि गैर मुसलमानों या अवकाश प्राप्त अधिकारियों को भी दी जाती थी।[114] मदद- ए - माश के अनुरूप ही " अलतमगा " नाम से जागीरे दी जाती थीं जो कि वंशानुगत होती थीं । कभी कभी ये धार्मिक व्यक्तियों को भी प्रदान की जाती थी ।[115]

- -

112. नोमान अहमद सिद्दीकी , लैण्ड रेवेन्यू एडमिनिस्ट्रेशन...पृ0-128

113. आइने अकबरी, भाग 1, पृ0- 140

114. सैयद नूरुल हसन, थाट्स, आन एग्रेरियन सिस्टम, पृ0 -21, तथा हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0 - 164

115. तुजुके जहाँगीरी, रोजर्स, भाग -1, पृ0 - 23, इरफान हवीब, एग्रेरियन सिस्टम...... पृ0- 250,261, कुरेशी, दि एडमिनिस्ट्रेशन आफ दि मुगल एम्पायर, पृ0 - 158

इजारा :

इजारा को भू राजस्व कृषि भी कहा गया है । अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ के पचास वर्षों में इजारा प्रथा का तीव्र गति से विकास हुआ । भू राजस्व की प्राप्ति हेतु ये कृषि खालसा भूमि में ही की जाती थी । इजारा ने जागीरदारों को जन्म दिया, जो अपनी आवश्यकताओं और हितों के प्रति सचेत थे । मुगल काल में खालसा भूमि में भू- राजस्व कृषि को अमान्य कर दिया गया था और ये कुछ ही भागों में प्रचलित थी । लेकिन बहादुर शाह की मृत्यु के इजारा प्रथा का तेजी से विकास हुआ और समस्त भू - राजस्व की प्राप्ति का साधन इसे मान लिया गया। इस प्रथा का विकास सत्रहवीं शताब्दी के अन्त से आरम्भ हो गया और इसने मध्यस्थों के एक नए वर्ग को जन्म दिया जिसने कि भू राजस्व एकत्रित करने वालो एक नई संस्था को जन्म दिया । इस नये प्रकार के वर्ग को जमींदार कहा गया । इजारा एक प्रकार का समझौता था जिसके अन्तर्गत जमींदार अथवा इजारादार को एक निश्चित धनराशि प्रशासन को देना पड़ता था । प्रशासन को दिया गया यह भू राजस्व इजारादार अपने महाल या परगने में कृषि कार्यों में संलग्न कृषकों से वसूल करता था । इस प्रकार

की वसूली के द्वारा जमींदार अधिक से अधिक भू - राजस्व कृषकों से वसूल करने का प्रयास करता था । अपने विलासपूर्ण जीवन और व्यक्तिगत हितों ने जमीदारों को क्रूर बना दिया । जिसका विपरीत प्रभाव कृषि और कृषकों पर पड़ा । इजारादारों की आय का प्रमुख साधन इजारा से प्राप्त भू - राजस्व ही रहा और इस भू राजस्व को प्राप्त भू राजस्व को प्राप्त करने के लिए विभिन्न अधिकारियों की नियुक्ति की गयी ।[116]

राजस्व के अन्य स्रोत :

मुगल काल में भू राजस्व के अतिरिक्त अन्य प्रकार के भी कर लगाकर राजस्व की प्राप्ति की जाती थी । इन करों में प्रमुख मार्ग कर, चुंगी कर, जजिया, तीर्थयात्रा कर और विदेश से आयातित वस्तुओं पर कर इत्यादि थे ।

---

116. बाला - दस्ती (रिसालाब-ए- जिरात) पृ0 - 136

मार्ग कर :

मुगलों के राजस्व का प्रमुख स्रोत मार्ग कर था । ये कर आन्तरिक व्यापार और वाह्य व्यापार में संलग्न व्यक्तियों पर आवागमन के सन्दर्भ में लगाया गया था । मुगल भारत में ये कर सामान्य रूप से जारी रहा । हालाँकि समय - समय पर विभिन्न शासकों ने इन करों में छूट भी प्रदान की। लेकिन में छूट स्थायी रूप से नहीं प्रदान की गयी ।[117] मार्ग कर के सम्बन्ध में सामान्य एवं व्यवहारिक बात यह थी कि व्यापारी एक सूबे से दूसरे सूबे माल पहुँचायेंगे । जब वे सूबे में प्रवेश करेंगे और राज्य द्वारा प्रदत्त सुविधाओं का लाभ उठायेंगे, जैसे सडके, सराय, पुल इत्यादि । इस कारण राज्य अपना व्यय इन करों के माध्यम से प्राप्त करते थे ।

मार्ग कर (राह दरी) 10 अप्रैल 1665 ई0 में औरंगजेब के आदेश के अनुसार मुसलमानों पर 2·30 प्रतिशत और हिन्दुओं पर 5प्रतिशत

117· जगदीश एन0सरकार, जे0बी0 आर0एस0, पटना 1951, खण्ड-38, कस्टम हाउस, इन बंगाल एण्ड बिहार इन 1670-71 (मार्शल की डायरी पर आधारित, पृ0- 65)

लगाया गया । 9 मई 1667 ई0 के बाद मुस्लिम आयातकों को मार्ग कर में पूर्णतया छूट दे दी गयी ।[118] मार्ग कर वस्तुओं की महत्ता के अनुसार लगाये जाते थे ।[119] मुस्लिम आयातकों ने मार्ग कर में पूर्ण छूट का लाभ उठाते हुए हिन्दुओं से कम धन लेकर उन्हें मार्गकर से बचा लेते थे और हिन्दुओं के व्यापार को प्रोत्साहन देते थे । इस कारण प्रशासन को राजस्व में काफी हानि भी होती थी ।

जजिया :

तुर्की शासन के आरम्भ से ही ये कर हिन्दुओं और जो मुसलमान नहीं थे, के ऊपर लगाया गया था । यह कर अकबर के शासन काल तक जारी रहा । जजिया हिन्दुओं को मुस्लिम राज्य में प्राप्त सुरक्षा के बदले

- -

118. चटर्जी, पृ0 - 102

119. इरफान, पृ0- 67

में लिया जाता था । औरंगजेब ने अपने शासन काल में बहुत से ऐसे करों को वापस ले लिया जो शरीयत के विरूद्ध थे, परन्तु जजिया को उसने लागू किया । दक्षिण अभियान, जागीरों की कमी और शासन के बढ़ते घाटे ने औरंगजेब को 1678 ई0 मेंजजिया लगाने पर पुन: मजबूर किया । 2 अप्रैल 1679ई0को यह कर ईसाइयों, यूरोप के लोगों , आर्मेनियन व हिन्दुओं पर यह कर लागू किया गया । विरोध के बावजूद भी इन्हें कुरान के नियमों के अनुसार छूट नहीं दी गयी ।[120]

जकात :

भारत में यह कह धार्मिक कर के रूप में नहीं बल्कि आयात कर के रूप में लिया जाता था और यह मुसलमानों से लिया जाने वाला कर था । यह कर मुसलमानों से उनकी आय का 1/40 वें हिस्से के रूप में

---

120. भीमसेन, नुस्खा-ए-दिलकुशा, पृ0 - 74, बी, मनूची , खण्ड-2, ईश्वरदास ,औरंगजेब, खण्ड-5, पृ0- 257, तथा यू0एन0डे, मुगल गवर्नमेण्ट ,पृ0-133 से 135

लिया जाता था ।[121] जिस प्रकार गैर मुसलमानों से जजिया की वसूली की जाती थी, उसी प्रकार उसी के समानान्तर मुसलमानों से भी एक धार्मिक कर वसूल किया जाता था, जिसे जकात कहते थे । जकात के रूप में वसूल की गयी राशि मस्जिदों, मदरसों के रखरखाव जैसे - धार्मिक कृत्यों पर ही व्यय की जा सकती थी । इनमें फकीर, जकात एकत्र करने वाले कर्मचारी, कर्जदार, धर्मयुद्ध (जिहाद) में भाग लेने वाले तथा यात्री शामिल थे ।[122] अपने शासन के अन्त में इस कर को वसूल करने का आदेश औरंगजेब ने पुनः दिया था।[123]

---

121. टी0 पी0 ह्यूम्स, डिक्शनरी आफ इस्लाम, पृ0-699, 700, एन0पी0अथनाइड्स मुहम्मडन थ्योरीज आफ फाइनेन्स, पृ0-207, 297, 318, आर0पी0त्रिपाठी, सम आस्पेक्ट्स आफ मुगल एडमिनिस्ट्रेशन, पृ0-345, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 129, 130 .

122. टी0पी0ह्यूग्स, डिक्शनरी आफ इस्लाम, पृ0-699, 700 हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 129-30,

123. कुरेशी, द एडमिनिस्ट्रेशन आफ दि मुगल एम्पायर पृ0-147, जहीरूद्दीन फारूकी, औरंगजेब एण्ड हिज टाइम्स, पृ0- 164, 170, 479

अन्य कर :

प्रशासन की आय के अन्य भी प्रमुख स्रोत थे । इनमें तम्बाकू पर लगाया जाने वाला कर प्रमुख था । औरंगजेब के समय के पूर्वज में यह एक महत्वपूर्ण नकदी फसल के रूप में कर प्राप्ति का महत्वपूर्ण साधन था । केवल दिल्ली में ही प्रतिदिन पाँच हजार रुपये का राजस्व इससे प्राप्त होता था ।[124] औरंगजेब के काल में तम्बाकू बिक्री पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया और इसकी बिक्री से सम्बन्धित लाइसेन्सों को भी निरस्त कर दिया गया । औरंगजेब ने भाँग, शराब और अन्य नशीले पदार्थों की बिक्री पर रोक लगा दी ।[125]

सिल्क और सूती कपड़े के निर्माण में संलग्न कारीगरों से भी कर वसूल किया जाता था ।[126] कपड़े के व्यापारियों को माल देने के

---

124. मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 175

125. डी0पन्त0, दि कामार्शियल पालिसी आफ मुगल (बम्बई, 1930), पृ0 - 231, से 232

126. वही ।

पूर्व कारीगरों अथवा वस्त्र उत्पादकों को कपड़े पर सम्राट की मुहर लगवाना आवश्यक था अन्यथा वे अर्थदण्ड के भागी होते थे ।[127] ग्रामीण क्षेत्रों में भी कुछ अन्य कर जैसे वुजुहात, सा-इर- जिहात आदि लगाये गये थे ।[128] फलों के बाग, भवन निर्माण, पेड़ों आदि पर भी कर लगाये जाते थे और राजस्व प्राप्ति के इन स्रोतों पर $2\frac{3}{4}$ प्रतिशत कर था ।[129] जिनकी सम्पत्ति का कोई वैधानिक उत्तराधिकारी नहीं होता था, उनकी सम्पत्ति पर भी लगाकर राजस्व की प्राप्ति की जाती थी ।[130]

भूमि और घरों पर लगाया जाने वाला कर " पंडारी ", बकरियों पर कर " बुज - शुमारी " , बनजारों पर " बार -गुड़ी " और हिन्दुओं के मेलों और जुलूसों पर भी कर लगाकर राजस्व में वृद्धि

---

127. ट्रेवर्नियर ,खण्ड-1, पृ0- 118

128. इरफान ,पृ0 - 243, (आईन में भी वर्णित - पृ0- 294 से 301)

129. सरकार, (फारमान आफ औरंगजेब, कमेन्ट्री 122ए, पृ0-184)

130. इरफान , पृ0- 246

की जाती थी ।[131] कुछ ऐसे भी कर थे जो हिन्दुओं और मुसलमानों पर समान रूप से लगाये गये थे और ये कर स्थायी थे । केवल समय समय पर इनके स्वरूप में परिवर्तन हुआ । इन करों में जुलूसों पर लगने वाला " कुलध " करों में छूट प्राप्त करने और सम्पत्ति का नवीनीकरण कराने के लिए उपहार स्वरूप दिया जाने वाला धन " पेशकश " , भूमि की पैमाइश कराने के लिए " जरीबन्ध ", दरोगा से मिलने पर " दरोगाह ", कर संग्राहक को दिया जाने वाला " मुहासिलानाह ", किराया वसूली पर " मुकद्दमी " और भूमि पैमाइश करने वाले को "जबीताना " आदि कर प्रमुख थे ।[132] प्रशासन की आय का एक प्रमुख साधन उपहार था जो औरंगजेब और परवर्ती शासकों ने सम्मान के रूप में ग्रहण किया।[133]

- -

131. आलमगीर नामा, फुटनोट - 166ए, 167ए; खाफी खान (टी0 आर0ई0डी0) पृ0- 37, 38.

132. सिन्हा, पृ0- 326, 327

133. पन्त, पृ0 - 255,256

उत्तरी भारत के बहुत से भागों में चुंगी घर स्थापित किये गये थे, जिन्हें " चौकी " कहा जाता था । चौकी से बिना चुंगी या कर प्रदान किये कोई व्यापारी नहीं जा सकता था । चौकियाँ जल और थल दोनों ही मार्गों पर स्थापित की गयी थीं ।[137] न केवल बंगाल एवं बिहार बल्कि उत्तरी भारत तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश में कस्टम ड्यूटी वसूलने के लिए चौकियाँ स्थापित की गयी थीं । हालाँकि ये चौकियाँ रिश्वतखोरी एवं तस्करी से परे नहीं थी । अधिकारियों द्वारा अवैध माल को सीमा पार कराने और करों में छूट देने के लिए रिश्वत लेना एक सामान्य बात हो गयी थी और इस रिश्वत के धन को बख्शीश कहा जाता था ।

137· जगदीश एन० सरकार, जे० बी० आर० एस०· पटना, 1951, खण्ड - 37, " कस्टम हाउसेज (चौकीज) इन बंगाल एण्ड बिहार इन 1670 - 71 , (मार्शल की डायरी पर आधारित) पृ० - 65

चुंगी घर के चौकीदार भी अंग्रेज व्यापारियों के सामान को अवैध रूप से प्रवेश कराने के बदले बख्शीश प्राप्त किया करते थे। यह प्रथा समस्त उत्तर भारत तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश में व्याप्त थी।

उद्योग :

भारत में उद्योगों के सन्दर्भ में गुणात्मक वृद्धि अठारहवीं शताब्दी के छठे दशक से आरम्भ होकर उन्नीसवीं, शताब्दी में उत्तरोत्तर प्रगति के पथ पर बढ़ती रही। स्पष्टत: औद्योगीकरण में क्रान्ति का दौर यूरोप से आरम्भ होकर भारत में आया। भारत मुख्यत: ग्रामीण उद्योगों एवं कृषि पर आधारित उद्योगों पर ही आश्रित था परन्तु शहरीकरण की बढ़ती प्रवृत्ति ने इसमें गुणात्मक वृद्धि की। 17वीं शताब्दी के अन्त में यूरोपीय व्यापारियों ने भारतीय समुद्र में प्रवेश किया और अपने क्रियाशील एवं उद्यमी होने का लाभ उठाते हुए उन्होंने भारतीय व्यापार में प्रवेश किया। उन्होंने विदेशी वस्तुओं से भारत वासियों को परिचित कराया और भारतीय वस्तुओं को अपने देशों में निर्यात किया। भारतीय

जनता मुख्यतया कृषि कार्य में संलग्न थी और कृषि के कार्यों के बाद वे अन्य घरेलू उद्योग धन्धों में व्यस्त रहते थे ।

ग्रामीण उद्योग :

आम तौर पर भारतीय किसान कृषि कार्यों में व्यस्त रहते हुए बीज बोने और फसल काटने में ही अपना अधिक समय देते थे । परन्तु समय पर वे हस्तशिल्प और उद्योगों की ओर भी अपना ध्यान देते थे । कृषक का सम्बन्ध कृषि से हटकर किसी अन्य उद्योग से नहीं था । वे अपने दैनिक प्रयोग के काम में आने वाली वस्तुओं का ही उत्पादन करते थे । ऐसी वस्तुओं में सूत की कताई और बुनाई, नमक का उत्पादन, वनस्पति,तेल, घी, गुड़, चीनी , तिलहनी फसलों से तेल निकालना, चावल की सफाई, चटाई की बिनाई और ताड के पेड़ की पत्तियों से टोकरी आदि जैसे कार्यों में कृषक संलग्न थे ।[138]

- -

138. इरफान, पृ0 - 58,59,81, शिवरोव, पृ0 - 19, 20

सम्पूर्ण भारत में कताई और बिनाई सबसे ज्यादा लोकप्रिय कार्य कृषकों के मध्य था । किसानों से सूत प्राप्त करके " धुनिया" नामक विशेष समुदाय द्वारा इसकी सफाई की जाती थी ।[139] इनके अलावा शिल्पकार बढई तथा लुहार भी थे । ये अपने उद्योग में पूरा समय देते थे। ये अपने सामान का विक्रय नक्द धन के बदले में करते थे ।[140] गोरखपुर जनपद में बढई तथा लुहार अत्यधिक थे जो अपने कार्य में पूर्ण तया संलग्न थे ।[141] ग्रामीण उद्योग धन्धे केवल ग्रामों तक सीमित नहीं थे । ग्रामों में उत्पादित वस्तुओं का लाभ शहर में निवास करने वाले भी उठा रहे थे । सूत की कताई और बुनाई का धन्धा इनमें से एक है । चरखा प्रत्येक ग्रामीण घर की आवश्यकता था और महिलाएं ही अधिकतर ही सूत कातने का कार्य करती थीं । सूती धागों का उत्पादन पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार,

- -

139. इरफान , पृ० - 58

140. इरफान, पृ० - 81, शिरोव, पृ० - 22

141. शिरोव , पृ० - 27

गुजरात उड़ीसा, में प्रचुर मात्रा में होता था । भारतीय ग्रामीण समाज कृषि पर आधारित बहुत से उद्योग धन्धों में व्यस्त था जिसका विवरण निम्नवत है ।

रेशम :

पूर्वी उत्तर प्रदेश में रेशम का उत्पादन होता था । हालांकि बंगाल और उड़ीसा रेशम उत्पादन के प्रमुख केन्द्र थे । रेशम के धागों का उत्पादन और उनकी बुनाई में विशेष समुदाय संलग्न था । बंगाल में इन्हें " चम्बूलिया " कहा जाता था ।[142]

तेल :

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में अठारहवीं शताब्दी में तिलहनी

142\. मुखर्जी, एन०जी०,पृ०- 60, स्टेन्शाम मास्टर खण्ड- 2, पृ०- 86, फिच, अर्ली ट्रेवल्स इन इण्डिया, पृ०- 28, ट्रेवर्नियर, भाग -2, पृ० - 2

फसलों का उत्पादन बहुतायत से होता था । यह वृद्धि पर आधारित ग्रामीण उद्योग था जो घरों में प्रचलित था । इस कार्य में तिलहनी फसलों के माध्यम से घर में ही तेल निकालने का कार्य होता था। इस कार्य में संलग्न विशेष समुदाय को " तेली " कहा जाता था । वह अपने बैलों की सहायता से कोल्हू में तिलहनी फसलों से प्राप्त बीजों को डालकर तेल निकालता था ।[143] यह तेल बाजार में विक्रय के लिये भी जाता था ।

शोरा :

शोरा का उत्पादन पूर्वी उत्तर प्रदेश के दोआब क्षेत्र में होता था । युद्धों के कारण इसकी माँग काफी बढ़ गयी । शोरा से बन्दूक में भरे जाने वाले बारूद का उत्पादन होता था । इस धन्धे में लगे लोगों को बंगाल में नूनरियाली अथवा लूनिया कहा जाता था ।[144]

- -

143. इरफान, पृ0 - 59

144. टेवर्नियर ,खण्ड-2, पृ0-100, पेलसर्ट ,पृ0-14,मुण्डी,खण्ड-2,

नमक :

नमक का उत्पादन मुख्यतया राजस्थान तथा गुजरात में होता था । राजस्थान में सांभर झील के खारे पानी को क्यारियों में रखा जाता था । सूर्य की गर्मी से वाष्पीकरण होता था तब नमक प्राप्त होता था। गुजरात में समुद्र के पानी से नमक उत्पादन किया जाता था । असम के ग्रामीण क्षेत्रों में कोले की पत्तियों से नमक उत्पादित होता था । [145]

नील :-

कृषि पर आधारित नील उद्योग किसानों की जीविका का प्रमुख साधन था । उत्तरी भारत के बहुत से क्षेत्रों में इसका उत्पादन होता

- -

135• मीरात-उल- आमल, फुटनोट, 3689. आलमगीर नामा. फ0-222. सं0 गेट , पृ0 - 145

था । इससे प्राकृत्तिक रंग प्राप्त किया जाता था जो कि कपड़ों की रंगाई ,छपाई आदि के कार्य में प्रयुक्त होता था।[146]

चीनी :

गुड़ और चीनी का उत्पादन ग्रामीण क्षेत्रों का एक अन्य उद्योग था । गन्ने को बैलों की सहायता से चलने वाली " कल " में पराई की जाती थी, जिसके रस से गुड़ तथा चीनी तैयार की जाती थी ।[147]

शीशा :

एक अन्य ग्रामीण उद्योग शीशे का उत्पादन था । हालाँकि ये अच्छी प्रकार का शीशा नहीं होता था। इससे चूड़िया, हार आदि

---

146. नीरा दरबारी, नार्दर्न इण्डिया अण्डर औरंगजेब,सोशल एण्ड इकनामिक कण्डीशन,पृ0 - 180

147. शिशरोव, पृ0 - 50

आभूषण तैयार किये जाते थे । बिहार के कृषक अपनी जानकारी के अनुसार इन वस्तुओं का उत्पादन करते थे ।[148]

चटाई :

ग्रामीण क्षेत्रों में किसान कृषि के कार्य के उपरान्त चटाई बनाने के कार्य में संलग्न थे । बाँस की पतली खपचियों के माध्यम से टोकरी तथा चटाई बनाई जाती थी । ताड़ के पेड़ की मोटी पत्तियाँ भी चटाई बनाने के लिए प्रयोग में आती थीं ।

चावल की सफाई :

धान सूख जाने के बाद कृषक बैलों के माध्यम से उन्हें पैरो से कुचल पाता था । बाद में उन्हें एकत्रित करके भूसा अलग

148. वही, पृ० - 50

किया जाता था तथा चावल के दाने अलग एकत्रित किये जाते थे । भूसी अलग - अलग कर लिया जाता था । इस प्रकार चावल प्राप्त होता था।

शहरी उद्योग :

शहरी और ग्रामीण उद्योगों में कोई विशेषफर्क नहीं था क्योंकि शहर और ग्रामीण जीवन लगभग समान था और लोगों की आवश्यकताएं भी समान थीं । शहरों में केवल व्यापार की सुविधा प्राप्त थी और उत्पादन अधिक तथा अच्छी प्रकार का सामान प्राप्त होता था । ग्रामीण उद्योग केवल कच्चे माल को उत्पादित करके शहरों में भेजते थे, ।जिनमें गुड़, घी, तेल, नमक आदि प्रमुख थे । शहरों के निवासी इन वस्तुओं के लिए ग्रामों पर निर्भर थे । शहरी उद्योगों में प्रमुख कपड़े का उत्पादन था । पूर्वी उत्तर प्रदेश और आगरा में सूती कपडे , रेशमी कपड़े, सोने और चाँदी के तारों से निर्मित्त कपड़े और स्त्रियों के लिए उत्तम कोटि के

कपड़ों का निर्माण होता था ।[149] पूर्वी उत्तर प्रदेश में मऊ तथा वाराणसी उत्तम प्रकार के वस्त्र कढाई के वस्त्र, कालीन और उच्च कोटि के सफेद वस्त्र का निर्माण होता था ।[150] अपने सूती एवं ऊनी वस्त्र निर्माण के कारण भारत न केवलएशिया बल्कि यूरोप के बाजार में 18वीं शताब्दी तक प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था ।[151] वस्त्रों के बाद दूसरा प्रमुख उत्पादन नील का था । वाराणसी और मऊ के वस्त्र उद्योग में नील का बहुतायत से प्रयोग होता था । आगरा और बाम्बे उत्पादित नील का प्रयोग वस्त्रों की रंगाई और छपाई में प्रयोग होता था ।[152] हाथी के दाँत से भी

---

149. इरफान, इन्टरनेशनल इकनामिक हिस्ट्री कांग्रेस,"पोटेन्शीयल्टिीज, आफ कौपीलिस्टिक डेवलपमेण्ट इन इकनामी आफ मुगल इण्डिया, पृ0-2

150. मनूची, खण्ड-2, पृ0-424, 224, 225, 427, 430 थेवेनाट, भाग-3, अध्याय -6, पृ0 - 18

151. नीरा दरबारी, पृ0 - 182

152. मनूची, खण्ड-2, पृ0-424, ट्रेवर्नियर, खण्ड-1, पृ0 - 56

बहुत सी वस्तुओं का उत्पादन किया जाता था । इसके द्वारा गहने, तलवार, की मूँठ और कटार इत्यादि का निर्माण होता था । हाथी दाँत से निर्मित वस्तुओं की भूटान, नेपाल, और स्याम (थाइलैण्ड) में काफी माँग थी।[153] स्त्रियों के गहने तथा चूड़ियाँ भी हाथीदात से निर्मित्त की जाती थी और इनकी काफी खपत तथा माँग थी ।[154]

इनके अतिरिक्त अन्य भी शहरी उद्योग थे जिनका विवरण निम्नवत है :-

लाख उद्योग :-

मुगलों के काल में समस्त भारत में लाख उद्योग बहुतायत से था।

- -

153. चटर्जी, पृ० - 28

काफी बड़े पैमाने पर लाख से निर्मित्त वस्तुओं का उत्पादन होता था ।[155] बंगाल में अच्छी और सस्ती किस्म का लाख उत्पादित किया जाता था।[156] जबकि पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार में निम्न कोटि का लाख उत्पादित होता था ।[157]

काष्ठ उद्योग :

काष्ठ उद्योग अठारहवीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण कला थी। काष्ठ उद्योग में उस काल में वाराणसी का काफी नाम था और यहाँ से काष्ठ निर्मित्त बड़े बैक्से ,बिस्तर,स्याही रखने की दवात आदि अन्य स्थानों पर निर्यात की जाती थी । कश्मीर में काष्ठ निर्मित्त वस्तुएं

---

155. इरफान, पृ0 - 52

156. टेनिर्वयर खण्ड-2, पृ0 18, बर्नियर ,पृ0- 440 फैक्टरी रिकार्ड्स 2630, 33, पृ0- 323

157. बांदी, पृ 0- 121, 122

काफी चमकदार और पालिस की हुई होती थीं।[158]

चीनी मिट्टी से निर्मित वस्तुओं का उद्योग :

चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने की कला इस काल में चरमोत्कर्ष पर थी। पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार में इसका निर्माण कार्य होता था। पटना इसके निर्माण का प्रमुख केन्द्र था। इलाहाबाद में भी चीनी मिट्टी के बर्तनों व अन्य अलंकारिक वस्तुओं का निर्माण होता था। परन्तु यहाँ निर्मित चीनी मिट्टी की वस्तुएं बहुत अच्छी कोटि की नहीं होती थी।[159] इस काल में चीनी मिट्टी से निर्मित वस्तुओं का प्रयोग लोग दैनिक जीवन में नित्यप्रति कर रहे थे।

चर्म उद्योग :

चमड़े से निर्मित जूतों का प्रयोग केवल कुलीन और उच्च वर्गीय समाज ही कर रहा था। जूतों पर सोने और चाँदी से कसीदा-

---

158. मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 428

159. मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 426, 428

कारी भी की जाती थी और इन जूतों का प्रयोग मुगल रानियाँ और उच्च वर्गीय समाज के लोग कर रहे थे । यह उद्योग प्रोत्साहन के अभाव में ज्यादा पनप नहीं सका ।

टेण्ट निर्माण :

इस काल में टेन्ट निर्माण का कार्य बहुतायत से हो रहा था । टेन्ट की सजावट हेतु उसमें सोने, चाँदी और रेशम के धागों से कढ़ाई की जाती थी । टेन्ट को घेरने के लिए -"कनात " का प्रयोग किया जाता था जो कि तीन या चार मोटे कपड़े का बना होता था।[160] फर्श को सुन्दर एवं स्वच्छ रखने के लिए " कनात " के इस कपड़े को फर्श पर भी बिछाया जाता था।[161] टेन्ट का प्रयोग अधिकतर युद्ध के मैदानों

160· बर्नियर , पृ0 - 361, 362

161· मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 424, निज्जर, पृ0- 153

में किया जाता था । मुगल काल में युद्ध के समय महिलाएं भी जाती थीं और उनकी सुविधा के लिए टेन्ट लगाया जाता था । टेन्ट निर्माण उस काल में चरमोत्कर्ष पर था और इस समय आरामदायक, टिकाऊ और सुन्दर टेन्टों का निर्माण होता था।

कालीन उद्योग :

उच्च वर्गीय समुदाय फर्श पर बिछाने के लिए कालीन का प्रयोग करते थे। कालीन निर्माण के प्रमुख केन्द्र वाराणसी और आगरा थे । फारस से भी कालीन का आयात किया जाता था । फारसी कालीनों के आयात ने इस उद्योग को एक नई दिशा प्रदान की और यह उद्योग लगातार उन्नति के पथ पर अग्रसर रहा ।

आभूषण निर्माण :

प्राचीन काल से ही लोगों का आभूषणों के प्रति रूझान रहा है । आभूषण निर्माण एक प्राचीन उद्योग रहा है । अठारहवीं

शताब्दी के आरम्भ से ही आभूषण निर्माण में नवीन तकनीक को शुभारम्भ हुआ और उच्च कोटि के गहने बनाये जाने लगे। सोने की खदाने दक्षिण भारत में थी। सोने और चाँदी के गहनों की माँग, आपूर्ति से अधिक थी। विदेश के साथ व्यापार में भी विनिमय के रूप में प्रयोग किया जाता था। असम में एक विशेष प्रकार की तकनीक द्वारा सोना प्राप्त किया जाता था।[162] पूर्वी उत्तर प्रदेश में आभूषण बनाने में सिद्ध हस्त थे। कुलीन वर्ग की स्त्रियाँ नए प्रकार के आभूषणों को बनवाने में रूचि लेती थीं। अंगूठी में लगाये जाने वाले विशेष रत्न बीदर, अहमदाबाद और गुजरात से प्राप्त किये जाते थे।[163]

- -

162. मीरात-उल-आलम, फुटनोट- 368ए, आलमगीर नामा, फुटनोट -207बी, गेट, पृ0- 145

163. थेवेनाट, खण्ड-3, अध्याय -21, पृ0-55, 56, मनूची, खण्ड-2, पृ0- 425, डी0पन्त, पृ0 - 237

सुगन्धियाँ :

विभिन्न प्रकार की सुगन्धियाँ निर्मित करने का उद्योग इस काल में काफी विकसित था । उच्च वर्गीय समाज में ये फैशन के रूप में प्रचलित था और इसकी अत्यधिक माँग थी । पूर्वी उत्तर प्रदेश में दिल्ली और आगरा में निर्मित सुगन्धियों की अत्यधिक माँग थी । हिन्दू और मुस्लिम समाज के उच्च वर्गीय समुदाय के लोग अपनी आय का एक बड़ा भाग सुगन्धियों पर व्यय करते थे ।

धातु उद्योग :

उत्तर भारत के क्षेत्रों में धातु की अत्यधिक उपलब्धता थी । सोना दक्षिण भारत में पाया जाता था । असम में चाँदी, ताँबा, और टिन काफी मात्रा में प्राप्त किया जाता था ।[164] इससे सम्बन्धित उद्योग पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में भी उपलब्ध थे । पटना

और वाराणसी के धातु उद्योग से सम्बन्धित व्यापारी जलमार्ग से कच्चा माल प्राप्त करते थे । वाराणसी काँसे के उद्योग का एक प्रमुख केन्द्र था और यहाँ काँसे के बर्तन आदि का उत्पादन होता था ।

जहाज निर्माण उद्योग :

जहाज निर्माण उद्योग का समुद्र से सम्बन्ध है । हालाँकि का पूर्वी उत्तर प्रदेश का क्षेत्र इस उद्योग से अछूता था । परन्तु मुगल काल में अंग्रेज व्यापारियों के आगमन ने जहाज निर्माण के उद्योग को प्रगति दी । मुगल शासक इस सन्दर्भ में ज्ञान की कमी के कारण इस उद्योग की ओर ध्यान न दे सके । समुद्री रास्तों और जहाज निर्माण के अज्ञान ने भी इस उद्योग की तरफ से मुगलों को उदासीन रखा । अंग्रेजों के भारत में पाँव रखने के साथ ही जहाज निर्माण को नई गति दी । इसी के कारण नए - नए बंदरगाहों का विकास भी हुआ । बम्बई, हुगली

और सूरत जहाज निर्माण के प्रमुख केन्द्र थे ।[165]

ईंट उद्योग :

विभिन्न प्रकार के भवन निर्माण की कला ने ईंट उद्योग को जन्म दिया । उच्च वर्गीय समुदाय पकी हुई ईंटों का घर बनवाता था जिसके कारण ईंट पकाने की भट्ठियों का प्रयोग आरम्भ हुआ । कुलीन वर्ग भवनों को सुन्दर बनाने के लिए प्रत्थर, संगमरमर और टाइल का प्रयोग करते थे । टाइल को काटना, पालिश करना, चमकाना और उन्हें विभिन्न प्रकार के रंगों से सुसज्जित करने के उद्योग भी आरम्भ हो गये थे। पूर्वी उत्तर प्रदेश में ईंट बनाने और उन्हें पकाने की बहुत सी भट्ठियाँ कार्य कर रहीं थी ।

---

165. जे0एन0 सरकार, स्टडीज इन मुगल इण्डिया, पृ0 - 218

उद्योगों का स्वामित्व :

विभिन्न उद्योगों को आरम्भ करने की उद्देश्य लाभ की प्राप्ति थी । यह कहना कठिन होगा कि वास्तव में उद्योगों पर किसका स्वामित्व रहता था। आमतौर पर वंशगत रूप से उद्योगों पर स्वामित्व रहता था ।राजसी परिवार की महिलाएं और कुलीन वर्ग के लोग उद्योगों में पर्याप्त रूचि रखते थे ।[166] 17वीं शताब्दी के अन्त से उद्योगों पर नियंत्रण राजसी परिवार के लोग रखने लगे । इन लोगों ने अपनी व्यक्तिगत पूँजी उद्योगों में लगायी ताकि लाभ प्राप्त किया जा सके । समकालीन साहित्य में इस बात के पर्याप्त प्रमाण मिले हैं कि औरंगजेब ने भी उद्योगों में अपना धन निवेश किया था।[167] औरंगजेब अपने कारखानों में कार्य करने वाले शिल्पकारों के कार्य से

---

166. हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0 - 43

167. आदाब-ए-आलमगीरी, फुटनोट - 25ए

सन्तुष्ट नहीं था । राजसी परिवार की महिलाओं ने भी कारखानों की स्थापना की थी । जहाँ आरा ने इस क्षेत्र में काफी कार्य करते हुए कई कारखानों की स्थापना की ।[168] राज दरबार के बहुत से कुलीन सरदारों ने भी अपने व्यक्तिगत कारखानों की स्थापना की थी । इनका उद्देश्य कारखानों में उत्पादित वस्तुओं से लाभ प्राप्त करना था । इन कारखानों में रेशमी वस्त्र, काष्ठ के समान, कालीन , शीशे का सामान, सोने- चाँदी के आभूषण और अन्य भी वस्तुओं का उत्पादन होता था। युद्ध से सम्बन्धित सामग्री भी इन कारखानों में निर्मित होती थी । शिल्प से सम्बन्धित कारखाने लाभप्रद नहीं थे और ये कारखाने के स्वामी की दया पर चल रहे थे। इनके स्वामियों का उद्देश्य कम समय में अधिक लाभ कमाना था । शिल्पकारों की श्रेणियों को पर्याप्त प्रोत्साहन प्राप्त नहीं था और वे सबसे कम मजदूरी प्राप्त करते थे।[169] यूरोपीय

- -

168· आदाब-ए-आलमगीरी, फु0 नो0 - 96ए ।

169· बर्नियर, पृ0- 254, 255, 256, औरंगजेब, खण्ड-5, पृ0-341, निज्जर, पृ0 - 153

व्यापारियों ने भारत में आने के बाद विभिन्न स्थानों पर फैक्टरी की स्थापना की । परन्तु वे केवल निर्यात में रूचि रखते थे, इस कारण कारखानों की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ । परन्तु अठारहवीं शताब्दी में कारखानों की स्थिति में तीव्रगति से सुधार हुआ ।[170] औद्योगीकरण का प्रमुख कारण देश के अन्दर बाजारों का विकास था । लेकिन दुर्भाग्यवश कारखानों से सम्बन्धित शक्ति केवल कुछ ही हाथों में सीमित रही । अभी भी लोगों क्रय शक्ति में बढ़ोत्तरी नहीं हुई थी । भारतीय बाजार अभी पूर्ण रूप से विकसित नही हुई थी । अतः कारखानों को अठारहवीं शताब्दी में भी कोई विशेष प्रोत्साहन नहीं मिल सका ।[171] उपरोक्त तथ्यों के अतिरिक्त बाजारों का क्रमिक विकास जारी रहा और कारखानों का स्वामित्व

- -

170. नीरा दरबारी, पृ0 - 190

171. पन्त, पृ0 - 237

उनके मालिकों के हाथ में रहा । इस काल से नये रूप में मालिक और मजदूर की सीमा रेखा और उनके दायरे की परम्परा का आरम्भ हुआ ।

व्यापार :-

अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ से भारतीय व्यापार को दो भागों में बाँटा जा सकता है - आंतरिक और वाह्य व्यापार । आन्तरिक व्यापार साम्राज्य के अन्दर वस्तुओं के आवागमन में सीमित था जबकि वाह्य व्यापार विदेशों से वस्तुओं के आयात और निर्यात से सम्बन्धित था ।

आन्तरिक व्यापार :-

भारत जैसे बड़े देश के विभिन्न स्थानों पर, विभिन्न वातावरण में विभिन्न वस्तुएं उत्पादित होती थीं । अत: उत्पादन को एक पर उपलब्ध कराने के लिए आवागमन के साधनों का होना अनिवार्य

था । 18वीं शताब्दी में ग्रामीण समाज अपनी को पूर्ण करने में सक्षम था। इन ग्रामीण क्षेत्रों में साप्ताहिक बाजार " हाट " लगती थी जहाँ आस पास के गाँवों के लोग अपनी आवश्यकता की वस्तुएं जैसे - घी, तेल, सब्जी, कपड़े, नमक और कृषि में प्रयुक्त होने वाले औजार आदि क्रय करते थे। हाट से नगरों के बनिया समुदाय के लोग वस्तुएं क्रय करके उन्हें बेचते थे । ग्राम से कस्बे, कस्बे से नगर और नगर से सूबे तक वस्तुओं का प्रवाह आवागमन के साधनों के कारण निरन्तर जारी था ।

यातायात :

ग्रामों से वस्तुओं का निरन्तर प्रवाह यातायात के साधनों के कारण सम्भव था । यातायात के साधनों पर एक विशेष जाति "बंजारों" का लगभग एकाधिकार था । बंजारे एक समूह में पड़ाव डालकर रहते थे । बंजारे एक समूह में लगभग पन्द्रह हजार बैल होते जो भारी सामानों को

ढोते थे ।[172] ग्रामों में यातायात का प्रमुख साधन बैलगाडी, ऊँट आदि था।[173] व्यापारियों तथा यात्रियों के रात्रि विश्राम के लिए सरायें बनी थी । जिसके सम्बन्ध में बहुत से विदेशी यात्रियों ने विवरण दिया है ।[174]

थल मार्ग :-

हालाँकि आन्तरिक व्यापार का प्रमुख मार्ग जलमार्ग था । परन्तु पुलों के अभाव से यात्रा दुष्कर हो जाती थी । थल मार्ग पर लोग ऊँट, बैलगाडी ,घोड़े, हाथी आदि का प्रयोग करते थे । विशेषकर महिलाओं और बच्चों के लिए यात्रा के इन साधनों का प्रयोग किया जाता था ।

---

172. मुण्डी, पृ0-96, टेविनिर्यर, खण्ड-1, पृ0- 32,33, इरफान, पृ0 - 62

173. इरफान, पृ0 - 6

174. बर्नियर, पृ0-233, टेवनिर्यर, खण्ड-1, पृ0-45, मनूची खण्ड-1, पृ0 - 88,89 , आलमगीरी नामा, फु0 नो0 -336बी

अनाज और भोजन के लिए थल मार्ग से यात्रा करने वाले बाजारों पर निर्भर रहते थे और यात्रियों की स्थिति जिप्सियों अथवा खानाबदोश जैसी हो जाती थी ।[175] थल मार्ग से लम्बे रास्तों की दूरी तय करना बहुत ही कष्ट कर होता था । पूर्वी उत्तर प्रदेश में प्रमुख थल मार्ग गाजीपुर से कटक, उड़ीसा, तक था । बंगाल से उत्तर की तरफ आने पर कोसी उडीसा तक था । बंगाल से उत्तर की तरफ आने पर कोसी और गण्डक नदी पार करनी पड़ती थी, तत्पश्चात छपरा, तिरहुत होते हुए पूर्वी उत्तर प्रदेश में जौनपुर तक पहुँचा जा सकता था ।[176] शेरशाह सूरी के समय में निर्मित की गयी ग्रैण्ड ट्रंक रोड पूर्वी उत्तर प्रदेश के सभी प्रमुख नगरों गोरखपुर, इलाहाबाद, गाजीपुर, जौनपुर तथा वाराणसी को आपस में जोडती थी । परन्तु थल मार्ग अभी लोक प्रिय नहीं था क्योंकि

---

175. बर्नियर, पृ० - 117, 118

176. चटर्जी, पृ० - 96, 97

यात्रियों के " कारवाँ " को मार्ग में विभिन्न कठिनाइयाँ जैसे रहने की समस्या, असुरक्षा, अधिक व्यय तथा अधिक समय वृद्धि आदि का सामना करना पड़ता था । थल मार्ग से व्यापार विनिमय तथा यात्राएं असुविधा जनक थीं ।

नदी मार्ग या जलमार्ग :

थल मार्ग के बनिस्पत जल मार्ग से यात्रा करना तथा व्यापार करना अधिक सुविधा जनक था । विभिन्न जल मार्ग यात्रा को सुविधा जनक स्थिति प्रदान करते थे और यह अपव्यय से परे था ।[177] प्राचीन काल और मुगलों के समय से मध्य भारत में गंगा,यमुना तथा हुगली नदियाँ थीं । इन नदियों में नावों की सहायता से व्यापार होता था । गंगा नदी द्वारा लोग बंगाल की ओर जाते थे तथा वापस आपके स्थान पर नावों की सहायता से आ जाते थे ।[178] इलाहाबाद और वाराणसी

---

177. इरफान, पृ0 - 63

178. शिचरोव, पृ0 - 96

में निर्मित बहुत सी वस्तुएं नावों द्वारा गंगा नदी के माध्यम से बंगाल की तरफ जाती थीं और वापस अपने स्थानों पर आ जाती थीं । गंगा नदी में आवागमन अन्य नदियों की अपेक्षा काफी अधिक था ।[179]

गंगा एवं यमुना नदियों द्वारा सुदूर उत्तर भारत की ओर भी व्यापार होता था ।

व्यावसायिक कर :

व्यापार कार्य में संलग्न व्यापारियों को विभिन्न कर देने पड़ते थे । ग्रामीण एवं शहरी व्यापारियों पर ऊँचे कर लगाये जाने का उल्लेख विभिन्न समकालीन लेखकों ने किया है । कृषकों और व्यापारियों पर सरकार द्वारा कर लगाया जाता था । इनकी दर इतनी अधिक

---

179. डी0 पन्त, पृ0 - 56

होती थी कि कृषकों और व्यापारियों को काफी कठिनाई का भी सामना करना पड़ता था । कृषक व्यापारियों को अपना माल ले जाये तथा कर अदा करने के लिए ऋण भी लेना पड़ता था । कृषक व्यापारी जिनसे ऋण लेते थे उन्हें " पादेदार " कहा जाता था । ये लोग ऊँचे दर पर ब्याज लेते थे । कभी - कभी इस ब्याज की दर 50 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से भी अधिक होती थी । कभी - कभी कृषकों बाजार दर से भी कम मूल्य पर सामान बेचेने के लिए विवश किया जाता था । कभी कभी एक रूपये कीमत का सामान मात्र दस आने में बेचने के लिए बाध्य किया जाता था ।[180] भू राजस्व करके साथ व्यवसायिक कर कृषकों के लिए एक अतिरिक्त बोझ था ।

व्यापार विनिमय :

समस्त वस्तुएं मुद्रा के ही माध्यम से नहीं क्रय की जाती थीं । विशेषकर गाँवों वस्तु के बदले वस्तु प्राप्त की जाती

---

180. चण्डी मंगल (देखे चटर्जी, पृ० - 61)

ग्रामीण अर्थ व्यवस्था का यही आधार था । वस्तु क्रय करने में सिक्कों का प्रयोग मुश्किल से ही किया जाता था । [8]

अन्तर्क्षेत्रीय व्यापार :

अन्तर्क्षेत्रीय व्यापार का प्रमुख कारण एक दूसरे के क्षेत्रों में निर्मित्त वस्तुओं के प्रति लोगों का आकर्षण था । कुलीन वर्ग अधिकतर सुविधाजनक और आरामदायक वस्तुओं को दूसरे क्षेत्रों से मंगाता था । वे विशेष प्रकार की वस्तुओं के प्रति आकर्षित रहते थे । अन्तर्क्षेत्रीय व्यापार का एक अन्य प्रमुख कारण क्षेत्र विशेष में अत्यधिक उत्पादन और दूसरे वस्तु की कमी का होना था । उदाहरण के तौर पर पंजाब में अत्यधिक गेहूँ पैदा होता था जबकि राजस्थान और सिन्ध में इसकी पैदावार नहीं थी । कपड़ा पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा उत्तर भारत में बंगाल और गुजरात से आयात किया जाता था । दिल्ली एक प्रमुख व्यापार केन्द्र था, वहाँ रेशम, वस्त्र, टोकरियाँ, चटाई, कालीन, अनाज, मक्खन ,घी आदि

---

[8]. सिन्हा, पृ0 - 324.

आदि उपलब्ध था । फलों को दिल्ली में प्रथिया, बल्ख, बुखारा और समरकन्द से आयात किया जाता था ।[182] एक विशेष प्रकार की धातु चीन से पुर्तगालियों और गोवा के अंग्रेजों द्वारा लाई गयी । जिसे टट्नेक कहा जाता था । वे इसे अपने सिक्कों के रूप में प्रयोग करते थे ।[183] दिल्ली के बाद लाहौर और मुल्तान व्यापार और वाणिज्य के प्रमुख केन्द्र थे ।[184]

पाँच नदियों के मध्य बसे पंजाब में रेशमी, ऊनी, वस्त्र और लाख इत्यादि सामानों का उत्पादन होता था ।[185] आगरा से घी, गेहूँ, चावल आदि सामान पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार की ओर भेजा जाता था और अन्य बहुत सी वस्तुएं इन स्थानों से आयात की जाती थी ।[186]

---

182. बर्नियर, पृ0-248,249, 281, 282

183. थेवेनाट, खण्ड-3, अध्याय -25, पृ0- 65

184. मोरलैण्ड, इण्डिया एट दि डेथ आफ अकबर, पृ0- 21९

185. सिज्जर , पृ0- 150

186. इरफान, पृ0 - 72

गुजरात में उत्पादित अच्छे किस्म के कपड़े देश के विभिन्न भागों में भेजे जाते थे। अहमदाबाद और सूरत वस्त्र निर्माण के प्रमुख केन्द्र थे।[187] गुजरात से ही आभूषणों में प्रयोग किये जाने वाले हीरे और कीमती पत्थर निर्यात किये जाते थे। पेगू और पर्शिया से अच्छे किस्म का हिरा गुज़राती व्यापारी क्रय करते थे।[188] पूर्वी उत्तर प्रदेश में वाराणसी सोने और चाँदी के आभूषणों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध था। यहाँ के निर्मित आभूषण न केवल स्थानीय लोगों द्वारा प्रयोग किये जाते थे वरन् इनका निर्यात आगरा, दिल्ली, पटना और बंगाल में भी होता था। बंगाल और पटना के व्यापारियों का सीधा सम्बन्ध इलाहाबाद और वाराणसी के व्यापारियों से था। बंगाल समुद्री व्यापार का प्रमुख केन्द्र था। मसूली पट्टम, से यहाँ समुद्र मार्ग द्वारा जिंक, टन, ताँबा, तम्बाकू आदि वस्तुएं आती थीं।[189] ढाका में मसलिन नामक विशेष रेशमी वस्त्र उत्पादित

- -

187. ट्रेवर्नियर, खण्ड-2, पृ० - 2

188. मनूची, खण्ड -2, पृ० - 425

189. थिशारोव, पृ० - 106

होता था । चटगाँव, हुगली, मुर्शिदाबाद, हरिहरपुर, बालासोर, आदि अन्य प्रमुख व्यापारिक केन्द्र थे । उड़ीसा में कोरोमण्डल तट और मालाबार तट के माध्यम से व्यापार होता था ।[190]

इस प्रकार पूर्वी उत्तर प्रदेश के साथ अन्तर्क्षेत्रीय व्यापार देश के विभिन्न नगरों से सम्बन्धित था । अठारहवीं शताब्दी में इस क्षेत्र में तथा अन्य क्षेत्रों में सभी वस्तुओं का उत्पादन तथा आपूर्ति हो रही थी । विदेश व्यापार भी इस काल में प्रगति की ओर था । अतः इस काल में अन्तर्क्षेत्रीय व्यापार ने सभी वर्गों के लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति की तथा समृद्धि भी प्राप्त की ।

विदेश व्यापार :

भारत अपनी सम्पदा के लिए प्राचीन काल से ही विख्यात था । मुगलों के शासन के पूर्व ही बहुत से विदेशी व्यापारियों को भारत

---

190. शिवरोव, पृ० - 105, 106

ने आकर्षित किया । कोलम्बस और वास्कोडिगामा ने इस सन्दर्भ में सार्थक प्रयास किये । प्राचीन काल में ही भारतीय सामानों का निर्यात रोम ,पश्चिम एशिया,दक्षिण पूर्व एशिया और पूर्वी एशिया के देशों में होता था।[19] अठारहवीं शताब्दी में जहाजरानी के विकास ने विदेशी व्यापारियों लगातार भारत आने के लिए प्रेरित किया और विदेश व्यापार की गति बढ़ गयी । यूरोप ने भारतीय वस्तुओं की भारी मांग थी । जिसे कारण यूरोपीय व्यापारियों भारत में नए बन्दरगाहों की स्थापना की तथा नई कालोनी का विकास करते हुए भारत के सभी भागों में फैल गये ।

भारत से निर्यात :

भारत कृषि प्रधान देश रहा लेकिन इसका अर्थ यह नहीं

---

19. आर०सी० मजूमदार, सं० एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, पृ०-599 से 607 , डा० मोती चन्द , सार्थवाह, पटना, 1953 भी देखें ।

है कि यहाँ से केवल कच्चा माल ही निर्यात किया जाता था । यहाँ उत्पादित एवं तैयार वस्तुओं में वस्त्र, रेशम, चीनी नील, लाख, तम्बाकू, शीशे से निर्मित वस्तुएं, कपूर, शोरा, सुगन्धित द्रव्य, मसाले आदि प्रमुख थे । मनूची ने भारत से निर्यात किये जाने वाली वस्तुओं को चार प्रकार के पौधों में वर्गीकृत किया है ।[192] जिसमें छोटी झाडी जिससे कपास तैयार होती थी, नील का पौधा, तम्बाकू और अफीम का पौधा, शहतूत का पेड़ जिससे रेशम प्राप्त होता था, आदि समाहित थे ।[193] गेहूँ से तैयार किया गया बिस्कुट बंगाल से काफी मात्रा में विदेशों को निर्यात किया जाता था। इसी प्रकार भारत में तैयार तम्बाकू और अफीम यूरोप और अरब में निर्यात की जाती थी । नील का महत्व कपड़े की रंगाई और छपाई के लिए था ।

---

192. मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 418

193. वही ।

आयात :

उत्तर भारत और मध्य भारत के क्षेत्र अनाज और वस्त्र के सम्बन्ध में आत्मनिर्भर थे। परन्तु अब भी बहुत सी ऐसी वस्तुएं थी जो विदेशों से आयात की जाती थीं। अठारहवीं शताब्दी में भी इन क्षेत्रों में चाँदी, ताँबा, सोना और अन्य विलासपूर्ण वस्तुएं पूर्वी और पश्चिमी एशिया के देशों से आयात की जाती थीं। इन वस्तुओं में दाल चीनी ताँबा, लौंग, हाथी व अन्य वस्तुएं डच व्यापारियों द्वारा निर्यात की जाती थी। भारत में घोड़े, कन्धार, अरब, समरकन्द आदि स्थानों से आयात किये जाते थे। सूखे मेवे और फल बुखारा, प्रशिया, बाली और समरकन्द से आयात किये जाते थे। सींगों और हाथीदाँत का आयात इथापिया से किया जाता था। मोतियों का आयात बहरीन से होता था। इस प्रकार बहुत सी अन्य वस्तुएं जो भारत में प्राप्त नहीं होती थीं। या जिनकी माँग पूर्ति से अधिक थी, विदेशों से आयात की जाती थी।[194]

---

194. के०सी०मजूमदार, इम्पोरियल एज आफ द मुगल्स, आगरा, 1933 पृ० - 197.

जहाजरानी :-

विदेश व्यापार का मुख्य मार्ग समुद्र था । बड़े जहाजों के माध्यम से विदेश से विभिन्न वस्तुएं आयात की जाती थीं । इसका प्रमुख केन्द्र बंगाल था । उत्तरी भारत की प्रमुख नदियों द्वारा नाव से इन वस्तुओं को इलाहाबाद,वाराणसी, गाजीपुर, बलिया आदि स्थानों पर पहुँचाया जाता था । बहुत से ऐसे विदेशी व्यापारी भी थे । जिनके अपने पानी के जहाज थे । । सूरत के बहुत से व्यापारी ऐसे थे जिनके पास व्यापार करने के लिए व्यक्तिगत पचास जहाज तक थे ।[198] औरंगजेब के पास चार जहाज थे जो तीर्थयात्रा के लिए प्रयुक्त होते थे ।[199] उसके एक जहाज का नाम गंज-ए-सवाई था जो प्रतिवर्ष मक्का की यात्रा पर जाता था ।

---

198. कैसर, ए0जे0 मियाम, खण्ड-2, मर्चेण्ट शिपिंग इन इण्डिया ड्यूरिंग 17वीं सेन्चुरी ,पृ0- 215

199. के0सी0 मजूमदार, पृ0 - 200- 201

मीर जुमला के पास अपने जहाज थे और उसने विदेश व्यापार में व्यक्तिगत रूचि ली । अंग्रेजों के साथ मीर जुमला ने विदेश व्यापार में काफी लाभ प्राप्त किया ।[200] उभरती हुई ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने समुद्री व्यापार पर अपना एकाधिकार स्थापित कर रखा था । ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने विदेश व्यापार के समुद्री मार्गों पर नियंत्रण रखते हुए व्यक्तिगत पानी के जहाजों को भी क्रय किया ।

जिन व्यापारियों के पास अपने जहाज नहीं थे, वे व्यापार कार्य हेतु जहाज किराये पर लिया करते थे । बहुत से व्यापारी सम्पूर्ण जहाज को किराये पर न लेकर उसका कुछ हिस्सा ही अपनी वस्तुओं के हिसाब से किराये पर लेते थे । शेष हिस्सा जहाज के स्वामी

---

200. जगदीश एन0सरकार, पृ0-217,218,219, लेटर्स रिसीव्ड, खण्ड-3, 1615, पृ0-270, इंग्लिश फैक्टरीज इन इण्डिया, सं0 डब्लू फोस्टर 1618-21, पृ0-92, 106, 113, 117, 240, 325, 1062-23, पृ0- 273 इत्यादि

द्वारा अन्य व्यापारियों को किराये पर दिया जाता था ।

आज के युग की अपेक्षा 18वीं शताब्दी में समुद्री यात्राएं असुरक्षित रहती थी । समुद्री डाकुओं और तूफान अक्सर व्यापारियों को सामना करना पडता था । सत्रहवीं शताब्दी में औरंगजेब के व्यापारिक जहाज को अंग्रेज समुद्री डाकुओं द्वारा लूटा गया था । इसका कारण डाकुओं का समुद्र पर अच्छा अधिकार और वहाँ कानून का भय न होना था ।[201] इसी समय भारत सहित अन्य देशो में समुद्री बीमा भी प्रारम्भ हुआ । भारत के पश्चिमी तटपर बहुत से जहाजों का बीमा भी किया जाता था ।[202] इन सब समस्याओं का सामना करने के के बाद भी समुद्री यात्राएं और व्यापार विदेशों से जारी रहा और

- -

201\. के0सी0मजूमदार, आई0सी0एस0,खण्ड-30,1956,पृ0-201.
यूसुफ हुसैन,पृ0-19,औरंगजेब ,खण्ड-5,पृ0-276,डी0पन्त,
पृ0 - 224

202\. इरफान,बैंकिंग इन मुगल इण्डिया, कन्ट्रीब्यूशन टू इण्डियन इकनामिक हिस्ट्री, कलकत्ता, 1965, पृ0- 15

उत्तरोत्तर इसमें प्रगति हुई ।

विदेश व्यापार के केन्द्र :

विदेश व्यापार के प्रमुख केन्द्र के रूप में हुगली और सूरत प्रमुख थे । हुगली गंगा नदी से जुड़ा था अत: पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों से उसका सीधा सम्पर्क था । अवध, टांडा, वाराणसी ,जौनपुर और इलाहाबाद से नावों द्वारा वस्तुएं बंगाल जाती थीं । जहाँ से जहाजों द्वारा इन्हें विदेश भेजा जाता था । पूर्वी उत्तर प्रदेश में वाराणसी से सूती कपड़े,रेशमी वस्त्र, शोरा, चीनी;शाल इत्यादि बंगाल भेजे जाते थे ।[203] सूरत और अहमदाबाद विदेश व्यापार के अन्य प्रमुख केन्द्र थे । वाराणसी,पटना,आगरा,लाहौर,दिल्ली प्रमुख व्यापारिक केन्द्र थे । बनारस में सोने चाँदी के तारों से कढाई किये वस्त्रों की

---

203. मो0 उमर, मैड्यम , खण्ड-22,अलीगढ, 1972, फारेन ट्रेड आफ इण्डिया ड्यूरिंग दि 18वीं सेन्चुरी,पृ0-227,228,229

माँग सम्पूर्ण विश्व में थी ।[204] अठारहवीं शताब्दी में समस्त विदेश व्यापार पर यूरोपीय व्यापारियों का नियंत्रण स्थापित हो गया । इनमें डच, पुर्तगाली, फ्रांसीसी और अंग्रेज प्रमुख थे ।

पुर्तगाली :

पुर्तगाली सम्भवत: 1632 ई0 में आने वाले सर्वप्रथम यूरोपीय व्यापारी थे । इन्होंने हुगली को व्यापारिक केन्द्र बनाया और इस पर व्यापारिक नियंत्रणस्थापित किया ।[205] परन्तु औरंगजेब द्वारा पुर्तगालियों के विरुद्ध कार्यवाही के पश्चात 1676 ई0 में इनका हुगली पर से नियंत्रण समाप्त हो गया ।[206]

---

204. मनूची, खण्ड-2, पृ0 - 83

205. चटर्जी, पृ0 - 186

206. खाफी खान, मुन्तखब्वुल- लुवाब (सम्पादित इलियट व डाउसन) खण्ड-1, डी0पन्त, पृ0- 240

हुगली पर कालान्तर में नियन्त्रण डच और अंग्रेज व्यापारियों का हो गया । पुर्तगाली अब गोवा,दमन और दीव तक सीमित रहा गये ।

डच :

डच व्यापारियो ने 17वीं शताब्दी में भारत में प्रवेश किया और 18वीं शताब्दी तक समुद्री व्यापार पर एकाधिकार स्थापित किया । डच व्यापारियों ने शाहजहाँ से 1634 ई0 में बंगाल में व्यापार करने का "फरमान "[207] यानि राजाज्ञा प्राप्त कर ली ।[208] राजाज्ञा का पूर्ण लाभ उठाकर डच व्यापारियों ने हुगली में बाजार स्थापित

---

207. आइने अकबरी, ब्लाखमैन, भाग-1, पृ0- 259,260,261, 263, अंसारी, पृ0- 108, कुरैशी ,दि एडमिनिस्ट्रेशन आफ दि मुगल एम्पायर, पृ0- 80, आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, अकबर दि ग्रेट , भाग-2, पृ0-106, 107, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0-84,

किया तथा चिनसुरा नामक स्थान पर एम्पोरियम बनाया ।[209]

1660 ई0 के बाद डच व्यापारियों ने काफी तेजी से प्रगति की और इनका व्यापार बीस लाख रूपये तक पहुँच गया ।[210] यह आय इस समय अंग्रेज व्यापारियों की आय से काफी अधिक थी ।[211] डच व्यापारी वस्त्र, मसाले, रेशम आदि के व्यापार में संलग्न थे और ये भारतीय वस्तुएं पश्चिम एशिया तथा यूरोप में निर्यात करते थे । अपने कुल निर्यात का 43 प्रतिशत भाग डच व्यापारी वस्त्रों के रूप में जापान और हालैण्ड भेजते थे ।[212] कासिम बाजार वस्त्रों का प्रमुख केन्द्र था। अन्य वस्तुओं में रेशम, शोरा, अफीम, चावल, चीनी, हल्दी आदि

---

209. अलेक्जेण्डर हेमिल्टन, खण्ड-2, भाग-1, चटर्जी, पृ0-193,

210. मोरलैण्ड, अकबर, टू औरंगजेब, पृ0- 181, चटर्जी, पृ0-188

211. फैक्टरी रिकार्ड्स, 1661-1664 ई0, पृ0 - 71

212. टेवर्नियर , खण्ड-2, पृ0 - 140, तथा मान्सरेट, खण्ड-8, 1912, पृ0 - 156

निर्यात किये जाते थे।[213] इसी काल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का भी उदय आरम्भ हो गया और ये डच व्यापारियों के प्रमुख प्रतिद्वन्दी के रूप में उभर रहे थे।[214]

फ्रान्सीसी :

फ्रांसीसियों ने अपनी व्यापारिक कम्पनी औरंगजेब के फरमान द्वारा 1667 ई0 में सूरत में खोली। 1674 ई0 में बंगाल के नवाब शाइस्ता खान ने बंगाल में कुछ स्थानों पर व्यापारिक केन्द्र खोलने की इजाजत फ्रांसीसी व्यापारियों को दी।[215] चन्द्रनगर में फ्रांसीसी व्यापारियों ने अपनी फैक्ट्री स्थापित की।[216] फ्रांसीसी अठारहवीं शताब्दी में एक प्रमुख शक्तिशाली व्यापारिक संस्था के रूप में स्वयं को स्थापित कर चुके थे।[217]

---

213. चटर्जी, पृ0-100, 192, 195, तथा शिशारोव, पृ0- 115

214. शिशारोव, पृ0- 116

215. कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, खण्ड-5, पृ0-72

216. स्टानशेम मास्फेर, खण्ड-1, पृ0-325, नवाब मुहब्बत खाँ, अखबार-ए-मुहब्बत (संपादित इलियट व डाउसन) भाग-8, पृ0- 288

अंग्रेज :-

जहाँगीर के काल में ही विलियम हाकिंस और सर टामसरो ने व्यापारिक संस्था खोलने की इजाजत प्राप्त की थी । औरंगजेब अंग्रेजों की ईस्ट इण्डिया कम्पनी के साथ व्यापारिक सम्बन्ध में बनाने का इच्छुक नहीं था । लेकिन अंग्रेज व्यापारी अपने चातुर्य से भारत में पाँव जमाने में सफल रहे । अंग्रेजों के व्यापार का प्रमुख केन्द्र उत्तर भारत ही रहा । स्वर्ण के बदले में अंग्रेजों ने अपने व्यापार को बढ़ाया और सिल्क तथा सूती वस्त्रों का निर्यात किया । मुगलों द्वारा स्वर्ण का प्रयोग सिक्के तथा आभूषण बनाने में प्रयुक्त होता था । अंग्रेज व्यापारी दूसरी मुख्य वस्तु शोरा का भारत से निर्यात करते थे । पूर्वी उत्तर प्रदेश के गंगा यमुना दोआब से भी शोरा निर्यात किया जाता था । चीनी की माँग यूरोप में काफी अधिक थी । बंगाल इस समय उत्तरी भारत का प्रमुख व्यापारिक बंदरगाह था जहाँ पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार व असम से वस्तुएं भेजी जाती थी और अंग्रेज व्यापारी इन्हें

विदेशों में निर्यात करते थे । अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक अंग्रेज व्यापारी फ्रान्सीसी व्यापारियों के लिए प्रमुख शक्ति के रूप में उभर गए और अब फ्रांसीसीयों के व्यापार पर कुठाराघात करने के प्रयास आरम्भ हो गये ।[218]

सिक्के एवं मुद्रा :

प्राचीन काल से ही वस्तु विनिमय हेतु राज्य सिक्के एवं मुद्राओं का प्रचलन आरम्भ कर चुके थे । मुगल काल में भी विभिन्न प्रकार के सिक्के जारी किये गये थे जिनकी कीमतें अलग अलग होती थीं। अकबर के काल में ताँबे का सिक्का दाम प्रचलित था। 40 दाम एक रूपये

---

218. नवाब मुहब्बत खाँ, अखबार -ए- मुहब्बत (सं0 इलियट व डाउसन) भाग - 8, पृ0 - 294, 295.

के बराबर होता था।[219] " दान " को " पैसा " भी कहा जाता था और " आधा दाम " को " अधेला " कहा गया ।[220] औरंगजेब ने अपने समय में नया " दान " आरम्भ किया जो पुराने दाम के मुकाबले लगभग वजन में 1/3 था । 1671 ई0 के बाद यह समस्त भारत में फैल गया ।[221] सोने, चाँदी और ताँबे के अन्य सिक्के भी जारी किये

- -

219. आइने अकबरी, क्वायन्स, पृ0-31,32, मीरात, भाग-1, पृ0-267 इरफान, पृ0- 81, चटर्जी, पृ0- 96, हरिशंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली, पृ0 - 172

220. मोरलैण्ड, पृ0- 331, मार्शल, पृ0- 416, इरफान, पृ0-381, आइने अकबरी, क्वायन्स, पृ0- 31,32

221. आइने अकबरी, जैरेट, भाग-2, पृ0- 35 से 37, हरिशंकर श्रीवास्तव, औरंगजेब के समय में एक दाम का वजन एक तोला 8 सुर्ख ≬ 323 ग्रेन ≬ था। ताँबे के सिक्के का मूल्य घटता बढ़ता रहता था और उसी आधार पर दाम और रूपये का मूल्य भी नियन्त्रित होता था । पृ0 - 172, इरफान, हबीब, पृ0-381,

गये जो कीमत में अलग - अलग थे ।[222] पूर्वी उत्तर प्रदेश में विभिन्न प्रकार के सिक्के बाजार में चल रहे थे । बहुत से सूबों में अलग सिक्के भी जारी किये गये थे । पुराने सिक्के जब चलन से बाहर हो जाते थे तो उन्हें टकसाल में देकर नए सिक्के कीमत के अनुसार प्राप्त किये जा सकते थे अथवा ऋणदाता या धन वाले इन सिक्कों को बदल देते थे । मुगल कालीन सिक्के को टकसाल में नया स्वरूप देकर उन्हें बाजार में जारी किया जाता था ।[223] टकसाल के प्रमुख अधिकारी " दरोगा " तथा " सराफी " थे । सराफी का उत्तरदायित्व था कि सिक्के

[illegible] ।

- -

222• शिशारोव, पृ० - 33।

223• मांसरेट कमेटेरियस, पृ०-207, आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव, अकबर दि ग्रेट, भाग-2, पृ०- 155, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ०- 135, 172, होदी वाला, स्टडीज इन इण्डो मुस्लिम हिस्ट्री, पृ० - 235 से 244 •

शुद्ध धातु के हों और उनमें मिलावट न हो ।[224]

औरंगजेब के काल में चाँदी के रूपये और सोने की " मुहर ॥ के भार में वृद्धि की गयी ।[225] पूर्वी उत्तर प्रदेश बंगाल और बिहार में ये सिक्के समान रूप से प्रचलित थे । बंगाल में "कौडी " काफी लोकप्रिय थी। साखपत्रों के रूप में हुण्डी का भी प्रचलन था । हुण्डी आधुनिक बैंकों में चलने वाले चेक के समान था । इसका प्रयोग व्यापारी अपने व्यापार के लिये करते थे और यह आपसी विश्वास पर आधारित था। और " सराफ " समुदाय के लोग विदेशियों तथा राज दरबारियों को भी व्यापार हेतु ऋण प्रदान करते थे । अठारहवीं शताब्दी में "कोठी "

- -

224. आइने अकबरी, ब्लाखमैन, भाग-1, पृ0-18, होदीवाला, स्टडीज इन इण्डो मुस्लिम हिस्ट्री, पृ-236, 244, आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव अकबर दी ग्रेट, भाग-2, पृ0-207, से 209 हरिशंकर श्रीवास्तव पृ0- 170

225. इरफान , पृ0 - 381

नामक स्थान बैंकिंग कार्यों के लिए प्रयुक्त होता था । विदेश व्यापार के लिए प्रयुक्त होने वाला एक रूपये का सिक्का 2·3 से 2·5 शिलिंग के बराबर था । जबकि एक " पैगोडा " 6 से 6 शिलिंग के बराबर था । एक पैगोडा की कीमत 3से 3·5 रूपये के बराबर होती थी । मनूची लिखता है कि सूरत की टकसाल में नए सिक्के बनाने से राज्य को नौ लाख रूपये की वार्षिक आय होती थीं ।[226]

बहादुर शाह के काल में विभिन्न सिक्के ढाले गये । ताँबे का नया सिक्का " आलमगीरी फुलूस " ढाला गया । इस सिक्के का वजन पहले 14 माशा था जिसे बाद में 21 माशा कर दिया गया । बहादुर शाह के शासन में प्रारम्भ से ज्यादा वजन वाले ताँबे के सिक्कों को पुन: टकसाल में ढाला गया । इन सिक्कों पर बादशाह का नया नाम " सिक्का -ए- मुबारक -ए बादशाह शाह आलम गाजी " वाक्य अंकित किया गया ।[227]

- -

226· मनूची, भाग-2, पृ0-336, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0-136

227· दानिशमन्द खान अली, बहादुर शाहनामा, इर्विन, लेटर मुगल्स, खण्ड-1, पृ0 - 240

जहाँदार शाह का शासन काफी कम समय के लिए रहा। जहाँदार शाह ने अल्पकाल के शासन काल में अपने नाम से सिक्के जारी किये और उस पर निम्नलिखित पद्य की पंक्तियाँ अंकित की गयीं।[228]

1. जाद सिक्का बार जार चुन मिहर साहब-ए-करम जहाँदार शाह, पादशाह -ए- जहान

" जहाँदार शाह, विश्व का शासक, ईश्वर का समुच्चय बोधक , सूर्य के समान चमकता है । "

प्रयुक्त होने वाला एक रूपये का सिक्का 2·3 से 2·5 शिलिंग के बराबर था जबकि एक " पैगोडा " 6 से 8 शिलिंग के बराबर था। एक पैगोडा की कीमत 3 से 2·5 रूपये के बराबर होती थी । मनूची लिखता है कि सूरत की टकसाल में नए सिक्के बनाने से राज्य को

- -

228. इर्विन , लेटर मुगल्स, खण्ड-1 , पृ0 - 240

नौ लाख वार्षिक आय होती थी ।[229]

विभिन्न शाह के काल में विभिन्न सिक्के ढाले गये । ताँबे पर नये शासक का नाम ढाला गया और वजन पहले 14 माशा और बाद में 21 माशा कर दिया गया । बहादुर शाह के शासन के प्रारम्भ में ज्यादा वजन वाले ताँबे के सिक्कों को पुन: ढाला गया । इन नए सिक्कों पर **बादशाह** का नया नाम " सिक्का -ए- मुबारक = ए- बादशाह शाह आलम गाजी " वाक्य ताँबे के सिक्कों पर ढाला गया ।[230]

जहाँ दार शाह का शासन काफी कम समय के लिए रहा । जहाँदार शाह ने अल्प काल के शासन काल में अपने नाम से सिक्के जारी किये और उस निम्नलिखित कविता अंकित की गयी -

- -

229 बहादुरशाह नामा, इर्विन ,पृ0- 141 ﴾लेटर मुगल्स﴿

﴾दानिशमन्द खान अली﴿

230 ए॰ मनूची , हरिशंकर शंकर श्रीवास्तव, पृ0-136

(1) जाद सिक्का बार जार चुन मिहर साहिब-ए- करम

जहाँदार शाह, पादशाह - ए - जहान

" जहाँदार शाह, विश्व का शासक, ईश्वर का समुच्य बोधक, सूर्य के समान सोने जैसा चमकता है।"

जहाँदार शाह ने अपने सिक्कों पर दूसरा पद्य अंकित कराया -

(2) दार अफांक जाद सिक्का चुन मिहर ओ माह अबुल फतह - ए - गाजी , जहाँदार शाह

" क्षितिजों पर सूर्य व चन्द्रमा की भाँति सिक्के प्रचलित करता था अब्दुल फतह विजेता, जहाँदार शाह ।

जहाँदार शाह ने एक अन्य कविता भी अपने सिक्कों पर ढलवाया -

(3) जाद सिक्का दार मुल्क चुन मिहर ओ माह शाहन शाह -ए- गाजी, जहाँदार शाह क्षितिजों पर सूर्य व चन्द्रमा की भाँति सिक्के प्रचलित करता था , जहाँदार शाह, राजाओं का राजा और एक विजेता जहाँदार शाह मृत्यु के बाद उसे " खुल्द आरामगाह " अर्थात " स्वर्ग में शान्तिपूर्ण " की उपाधि प्रदान की गयी ।

जहाँदार शाह की मृत्यु के बाद 1712 ई० में फर्रुखसियर ने मुगल साम्राज्य का शासन संभाला । पूर्वी उत्तर प्रदेश में उस समय कोई टकसाल नहीं थी । 21 सूबों में से मात्र 15 सूबों में टकसाल स्थापित की गयी थी । जिन छः सूबों में टकसाल नहीं थी उनमें पूर्वी उत्तर प्रदेश का इलाहाबाद सूबा भी शामिल था ।[23] फर्रुखसियर के शासन

- -

23. होदीवाला (स्टडीज इन इन्डो मुस्लिम हिस्ट्री) पृ० -125
हरिशंकर श्रीवास्तव , पृ० - 172

काल में एक नया वर्गाकार सिक्का जारी किया गया । इस विचित्र सिक्के को " दिरहम -ए- शराई," कहा गया । इसका वजन 176 ग्रेन था और इसकी कीमत 3 आना और 8 पाई थी । उडीसा में कुछ सिक्कों का भार 166•5 ग्रेन था तथा सबसे अधिक भार का सिक्का 187 ग्रेन था । लेकिन सामान्यतया सिक्का 176 ग्रेन का होता था । तथा इसकी परिधि 0•90 इंच थी । फर्रुख सियर ने अपने शासन काल में ढाले गये सिक्कों पर पद्य की प्रवृत्तियाँ अंकित कराई ।[232]

(1) सिक्काजाद,अज फजल - ए- हक, बार सिम ओ जार पादशाह - ए - बहार - ओ - बार, फर्रुख सियर "अल्लाह के करम से उसने (फर्रुखसियर) चाँदी व स्वर्ण मुद्राएं टंकित करवाई ।"

इसी प्रकार रफी - उद - दौला के शासन काल में भी

- -

232• इर्विन, लेटर मुगल्स, खण्ड-1, पृ0 - 399, 400

सिक्के जारी किये गये ।[233] रफो - उद - दौला के शासन काल के सिक्के सोने और चाँदी के प्राप्त हुए हैं । इनमें में बहुत से सिक्के पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में स्थित इलाहाबाद सूबे से , तथा अवध सूबे के जो क्षेत्र पूर्वी उत्तर प्रदेश में आते थे, प्राप्त हुए हैं ।

इस प्रकार ये कहा जा सकता है कि समाज के विभिन्न वर्गों ने व्यापार में पूर्णतया रुचि ली । राजसी परिवार और कुलीन वर्ग के समुदाय ने भी व्यापार में रुचि लेते हुए व्यक्तिगत लाभ की भी कामना की । यद्यपि कालान्तर में शनैः शनैः व्यापारियों के एक विशेष वर्ग ने एकाधिकार स्थापित किया जिसने भारत के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पटल पर विशेष प्रभाव छोड़ा ।

- -

233. इर्विन, लेटर मुगल्स, खण्ड-1, पृ0 - 432

सांस्कृतिक इतिहास

पृष्ठभूमि :-

मुगलों की विजय के पश्चात शिक्षा के क्षेत्र में विस्तृत परिलक्षित होती है । मुगल साम्राज्य का संस्थापक बाबर स्वयं एक ऊँचे दर्जे का विद्वान तथा साहित्य एवं कला को प्रश्रय देने वाला था ।[1] परम्परागत विषयों के अतिरिक्त गणित, ज्योतिष, तथा भूगोल आदि विषयों के अध्ययन की व्यवस्था सर्वप्रथम बाबर द्वारा दिल्ली में एक मदरसे की स्थापना के साथ की गयी थी ।[2] उसने स्वयं अपनी आत्मकथा " बाबरनामा " की रचना तुर्की में की थी परन्तु अनेक उर्दू के भी शब्दों का प्रयोग किया था ।[3] " बाबरनामा " आज भी विश्व साहित्य में एक उच्च कोटि की रचना

---

1. एस०एम०जाफर, मुगल एम्पायर, पृ0-27,28 तथा डा0 झारखण्डे चौबे एवं डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव, मध्ययुगीन भारतीय-समाज एवं-संस्कृति-पृ0-56
2. लईक अहमद, मुगल कालीन भारत, पृ0 - 379

मानी जाती है ।[4]

बाबर का पुत्र हुमायूँ भी एक अच्छा विद्वान था तथा उसने शिक्षा की प्रगति हेतु विद्वानों को प्रोत्साहित किया तथा दिल्ली में एक बड़े मदरसे का निर्माण कराया था ।[5] शेरशाह सूरी को शिक्षा से अत्यधिक प्रेम था । उसने शिक्षा की प्रगति के लिए अनेक प्रयास किये । उसके शासन काल में जौनपुर उच्च शिक्षा प्राप्त करने के महत्वपूर्ण केन्द्र के रूप में विख्यात था ।[6] जौनपुर को " शिराज - ए - हिन्द " के नाम से जाना जाता था।[7]

- -

4· इसकी तुलना सेन्ट आगस्टीन,रूसो, गिबन और न्यूटन की आत्म कथाओं से की जाती है । देखिये एडवर्ड्स और गैरेट, मुगल रूल इन इण्डिया,पृ0- 225, तथा लेनपूल, बाबर, रूलर्स आफ इण्डिया सीरीज पृ0- 10

5· एन0एन0ला, प्रोमोसन आफ लर्निंग इन इण्डिया, पृ0-121,124

6· वही, पृ0- 91- 113 तथा लईक अहमद, पृ0- 379

7· एफ0ई0कीय, ए0 हिस्ट्री आफ एजूकेशन इन इण्डिया एण्ड पाकिस्तान पृ0 - 148

मुगल साम्राज्य के पतन के समय जौनपुर में अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गयी , जिससे शिक्षण संस्थाओं का ह्रास हुआ ।[8]

अकबर का शासन काल शिक्षा के विकास की दृष्टिसे स्वर्ण युग माना जाता है । इस काल में उच्च कोटि के ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचना हुआ ।[9] अबुल फजल द्वारा रचित " आइन - ए - अकबरी " की रचना इसी काल में हुई जिसकी गणना सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक ग्रन्थों में की जाती है ।[10] अकबर की शिक्षा नीति उस समय के एक बड़े विद्वान फाथुल्ला शिराजी से प्रभावित थी।[11]

- -

8· डा0 झारखण्डे चौबे एवं डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव, पृ0- 547

9· डा0 हरिशंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली, पृ0- 257, स्मिथ अकबर, पृ0-22, तथा एडवर्ड्स और गैरेट, पृ0-226

10· लईक अहमद, पृ0- 383

11· युसुफ हुसैन, पृ0 - 84

जहाँगीर ने भी विद्वानों को प्रश्रय दिया । यद्यपि उसके काल में सांस्कृतिक दृष्टि से चित्रकला का विकास सर्वोत्कृष्ट रूप से हुआ परन्तु शिक्षा के विस्तार पर तथा मदरसों पर भी उसने पर्याप्त धन व्यय किया।[12] उसने मदरसों में योग्य अध्यापकों की नियुक्तियाँ की ।[13] जहाँगीर और शाहजहाँ ने वास्तुकला, चित्रकला तथा संगीत के विकास को पर्याप्त योगदान दिया ।[14] शाहजहाँ ने शिक्षा प्रणाली में विकास करने का अधिकप्रयास नहीं किया ।[15] शाहजहाँ के काल में फ्रांसीसी यात्री बर्नियर भारत आया था तथा उस काल की शिक्षा प्रणाली के दोषों को विस्तार से वर्णित किया है। शाहजहाँ का काल मुख्य रूप से मुगल वास्तुकला का स्वर्ण युग था । उसने सफेद संगमरमर के भवनों का निर्माण कराया । इस काल में वास्तुकला की विभिन्न तकनीकियों का विकास परिलक्षित होता है । सांस्कृतिक दृष्टि से शाहजहाँ का काल वास्तुकला के विकास का चरमोत्कर्ष था ।

---

12. एन०एन०ला, पृ० - 174, एफ०ई० कीय, पृ० - 128

13. पी०एल०रावत, पृ०- 88-89 तथा एडवर्ड्स और गैरेट, पृ०-228 तथा एफ०ई०कीय, पृ० - 124

14. बर्नियर, ट्रैवल्स, पृ० - 254, 255

15. एफ०ई०कीय, पृ०- 122

औरंगजेब का शासन काल सांस्कृतिक दृष्टि से विशेष उपलब्धि अर्जित न कर सका क्योंकि औरंगजेब के शासन काल में ही मुगल साम्राज्य के पतन की प्रक्रिया आरम्भ हो गयी थी। यद्यपि इस काल में भी साहित्यिक रचनाओं का प्रादुर्भाव हुआ परन्तु औरंगजेब का मुगल साम्राज्य के पतन को रोकने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में युद्धरत रहने के कारण विशेष सांस्कृतिक उपलब्धि दृष्टिगोचर नहीं होती है। औरंगजेब ने परिस्थितियों वश संगीत और अन्य ललित कलाओं को संरक्षण नहीं दिया।[16] अतः सांस्कृतिक क्षेत्र में औरंगजेब की उपलब्धियाँ नगण्य रही। उसने विद्यालयों में ऐसे ही पाठ्यक्रमों को शामिल करवाया जो उसके विचारों के अनुकूल हों। औरंगजेब के समय में शेख मुहीबुल्ला इलाहाबादी ने " तसविया " नामक पुस्तक की रचना की थी, जिसमें प्रतिपादित विचारों से औरंगजेब सहमत नहीं था। शेख मुहीबुल्ला इलाहाबादी की मृत्यु के उपरान्त औरंगजेब ने उनके शिष्य शेख मुहम्मदी से स्पष्टीकरण भी माँगा और उस पुस्तक को जलाने की बात भी

- -

16§ मनूची, स्टोरिया द मोगोर, अनुवादक, विलियम इरविन, जि० - 2, लन्दन §1907-8, पृ०- 8 §

कही।[17] परन्तु शेख मुहम्मदी औरंगजेब के विचारों से सहमत नहीं हुए ।[18] वस्तुत: इन घटनाओं का प्रमुख कारण औरंगजेब का अपने भाई दारा से वैचारिक मतभेद होना था ।[19]

औरंगजेब की मृत्यु के बाद सम्पूर्ण साम्राज्य में राजनैतिक व आर्थिक अस्थिरता का वातावरण व्याप्त हो गया । जिससे मुगलों की केन्द्रीय सरकार सांस्कृतिक दृष्टि से कोई उपलब्धि अर्जित न कर सकी । बहादुर शाह के समय में 1712 ई0 तक दिल्ली में ही दो या तीन मदरसों की स्थापना हो सकी । परन्तु 1739 ई0 में नादिरशाह के आक्रमण के पश्चात पूर्वी उत्तर प्रदेश सहित समस्त साम्राज्य छिन्न- भिन्न हो गया और स्वतन्त्र राज्यों के रूप में गठित होने लगा । नादिरशाह अपने साथ बादशाही के पुस्तकालय की खास पुस्तके ईरान ले गया ।[20]

---

17. युसुफ हुसैन, पृ0-88

18. शाहनवाज खान, मआसिर,- उल- उमरा, जिल्द-3, पृ0-606

19. युसुफ हुसैन, पृ0 - 98

20. एफ0ई0 कीय, पृ0- 132, तथा एन0एन0ला, पृ0-198

शिक्षा को विस्तारित करने एवं प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से प्रान्तों में तथा दिल्ली में धनी वर्ग के व्यक्तियों ने विभिन्न मदरसों तथा स्कूलों की स्थापना में पर्याप्त रुचि प्रदर्शित की ।[21] पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र इलाहाबाद में भी एक मदरसे की स्थापना की गयी ।[22] सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों व मदरसों को कालान्तर में सरकारी अनुदान बन्द कर दिया गया । यद्यपि औरंगजेब के उत्तराधिकारियों द्वारा इन मदरसों को सहायता दी गयी परन्तु अठारहवीं शताब्दी की शिक्षा व्यवस्था पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा ।[23]

व्यक्तिगत शिक्षण संस्थाएं राजकीय संस्थाओं की अपेक्षा अधिक दिनों तक बनी रही क्योंकि शासक बदलने पर राजकीय संस्थाओं का संरक्षण समाप्त हो जाता था ।[24] अधिकतर अठारहवीं शताब्दी में मराठों,

---

21. युसुफ हुसैन, पृ० - 89

22. फांसा, देलही पास्ट एण्ड प्रेजेण्ट , पृ० - 64

23. पी०एल०रावत, पृ०- 91-92

24. पी०एल०रावत, पृ०- 91

मुसलमानों, सिखों, अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के आपसी संघर्ष के कारण शिक्षा की अवनति भी हुई।[25]

इस्लामी शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों को वर्णमाला और धार्मिक प्रार्थना का ज्ञान कराना मकतबों द्वारा किया जाता था।[26] जब बालक 4 वर्ष 4 माह 4 दिन का हो जाता था तो उसे शिक्षा देने की रस्म पूरी की जाती थी और इसे "बिस्मिल्लाह" कहा जाता था। यदि बालक हठवश, वर्णमाला सीखने से इन्कार करता था तो उसे केवल बिस्मिल्लाह कहना सिखाया जाता था।[27] राजकीय परिवार की स्त्रियों को अरबी, फारसी, सैनिक, सैनिक शिक्षा कानून और अन्त में धार्मिक शिक्षा प्रदान की जाती थी।[28] सबसे पहले विद्यार्थियों को लिपि का ज्ञान

---

25. पी०एल०रावत, पृ०- 92

26. एस०एम०जाफर, कल्चरल आस्पेक्ट्स, पृ०-76 तथा ए रशीद, पृ०-158

27. एस०एम०जाफर, कल्चरल आस्पेक्टस, पृ०-76, ए०रशीद, पृ०-150, 158 एजूकेशन इन मुस्लिम इण्डिया, पृ०-150 तथा पी०एल०रावत, पृ०-93

28. एस०एम० जाफर, पृ०- 85 तथा पी०एल०रावत, पृ०- 93

कराया जाता था तथा सम्पन्न कुरात के तीसवें अध्याय में लिखित प्रतिदिन की प्रार्थना तथा " फातिहा "[29] द्वारा होता था । विद्यार्थियों को शेख सादी की पुस्तक गुलिस्तां और बोस्तां, फारसी भाषा का व्याकरण "युसुफ और जुलेखा " लैला- मजनू", सिकन्दरनामा " जैसी कविताओं, बोलचाल का ढंग, पत्रव्यवहार आदि का भी ज्ञान कराया जाता था।[30] इस काल में वर्णमाला की लिपि फारसी प्रचलित थी परन्तु उर्दू एक प्रमुख विषय के रूप में उभर चुका था ।[31]

मध्य युग में उच्च शिक्षा मदरसों द्वारा प्रदान की जाती थी । जिसका प्रबन्ध राज्य सरकार द्वारा किया जाता था जबकि मकतब का प्रबन्ध संस्थाओं द्वारा संचालित होता था ।[32] मदरसों में शिक्षा का

---

29. दफनाने के समय पढ़ा जाने वाला पद्य ।

30. ए0रशीद, पृ0- 151, 152 तथा पी0एल0 रावत, पृ0-93 तथा युसुफ हुसेन ,मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, पृ0- 85

31. पी0एल0 रावत, पृ0- 93

32. युसुफ हुसेन, पृ0- 7।

पाठ्यक्रम 10 से 12 वर्षों का होता था । यहाँ अरबी व्याकरण, साहित्य, तर्कशास्त्र, ताबीयी रियाजी, और इलाही,[33] विज्ञान, दर्शन, इतिहास, गणित , ज्योतिष, भूगोल, विधि, भूगोल , चिकित्सा शास्त्र, कृषि और निबन्ध आदि की शिक्षा प्रदान की जाती थी ।[34] प्रारम्भ में मुहम्मद साहब ने धर्मनिरपेक्ष शिक्षा पर बल दिया था परन्तु मुस्लिम काल में परिवर्तित मुसलमानों के लिए धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता महसूस की गयी ।[35] राज्य की नौकरियों में लाभ लेने के उद्देश्य से हिन्दुओं ने भी फारसी भाषा का अध्ययन/आरम्भ किया । अकबर अपने काल में शिक्षा को जीवन की व्यवहारिक आवश्यकताओं के अनुरूप बनाना चाहता था ।[36] औरंगजेब ने भी शिक्षा पद्धति

- -

33. इलाही विज्ञान से तात्पर्य है, वह सभी बातें जो सदाचार से सम्बन्धित हों और ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करने का साधन हों । रियाजी विज्ञान संख्या से सम्बन्धित है इसमें नक्षत्र शास्त्र,संगीत आदि विषय आते हैं । तिबीयी विज्ञान शारीरिक विज्ञान से सम्बन्धित है ।
34. एफ0ई0कीय,पृ0- 119
35. पी0एल0रावत,पृ0-92, डा0झारखण्डे चौबे एवं डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव पृ0-594
36. आइने अकबरी,ब्लाकमैन पृ0-278,ग्लेडविन,अनुवाद भाग-1,पृ0-223, नदवी,पृ0-117,एस0एम0जाफर,एजूकेशन,पृ0-86,एफ0ई0कीय,पृ0-118-119

के दोषों को दूर करने का प्रयास किया । औरंगजेब इतिहास,भूगोल, युद्धकला, राजनीति, दर्शनशास्त्र और कूटनीति आदि विषयों के अध्ययन पर बल देता था।[37] अपराध करने पर विद्यार्थियों को शारीरिक दण्ड दिया जाता था और इस सन्दर्भ में शिक्षक विवेक से काम लेते थे ।[38]

मुगल शासकों ने ललित कला तथा दस्तकारी को प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन दिया । मुगल काल में हाथीदाँत,[39] आभूषण और बेलबूटे[40] का प्रयोग सफलता पूर्वक किया जा रहा था ।

इस्लामी शिक्षा पद्धति में गुरू की भूमिका काफी महत्वपूर्ण होती थी और समाज में उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।[41] प्राचीन

---

37. पी०एल०रावत,पृ०- 96
38. एल०एम०जाफर, पृ०-81, पी०एल० रावत,कल्चरल आस्पेक्ट्स,पृ०-99, फरिश्ता,ब्रिग्स, जिल्द, 4, पृ०- 265
39. इलियट,जिल्द,1,पृ०- 28-35
40. आइने अकबरी, जिल्द- 1,पृ०- 290
41. एस०एम०, जाफर, एजूकेशन,पृ०- 4

प्राचीन भारतीय पद्धति के अनुसार गुरू एवं शिष्य के मध्य पिता एवं पुत्र का सम्बन्ध रहता था ।[42] इस्लामी शिक्षा के प्रमुख केन्द्र इलाहाबाद तथा जौनपुर थे ।[43] जबकि पूर्वी उत्तर प्रदेश में हिन्दू शिक्षा के प्रमुख केन्द्र बनारस, प्रयाग थे ।[44] बनारस के सम्बन्ध में बर्नियर लिखता है," बनारस एक विश्वविद्यालय के अनुरूप है, किन्तु न तो वहाँ हमारे विश्वविद्यालयों की भाँति कालेज हैं, और न ही नियमित कक्षाओं की पढ़ाई ही होती है, परन्तु वे प्राचीन स्कूलों के समान हैं । नगर में अनेक निजी घरों में शिक्षक अथवा गुरू लोग फैले हुए हैं ।[45] इन स्थानों पर काव्य, व्याकरण, ज्योतिष, छन्द, निरूक्त,

---

42. पी०एल० रावत, पृ०- 103

43. पी०एल०रावत, पृ०-111, एफ०ई०कीय, पृ०- 148

44. ए०एल०श्रीवास्तव, मेडिवल इण्डियन कल्चर, पृ०-110 युसुफ हुसेन, पृ० - 91

45. बर्नियर ट्रेवल्स इन मुगल एम्पायर, पृ०- 341, युसुफ हुसेन, पृ०- 91

न्याय दर्शन, वेदान्त और पुराण, वेद, चिकित्सा शास्त्र, इतिहास, भूगोल आदि की शिक्षा दी जाती थी ।[46]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मुगल साम्राज्य में शिक्षा अपने चरमोत्कर्ष पर थी । उच्च शिक्षा व्यवस्था ने ही उत्तम साहित्य के सृजन में अपना योगदान दिया । उच्च कोटि के विद्वान विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित पुस्तकों की रचना में संलग्न थे । परन्तु मुगल साम्राज्य के पतन और नादिरशाह तथा अहमदशाह अब्दाली के आक्रमणों के कारण भी शिक्षा व्यवस्था की प्रगति में रूकावट आयी ।

साहित्य :-

मुगल काल में फारसी भाषा ने अत्यधिक उन्नति की । मुगल साम्राज्य का संस्थापक बाबर तुर्की और फारसी भाषाओं का विद्वान था।[47]

---

46. ए०एल० श्रीवास्तव, मेडिविल इण्डियन कल्चर, पृ०- 109, 110

47. एस०एम० जाफर, मुगल एम्पायर, पृ० - 27,28, डा० झारखण्ड , चौबे एवं डा० कन्हैया लाल श्रीवास्तव, पृ०- 569.

तुर्की में लिखित उसकी आत्मकथा " तुजुके बाबरी " आज भी एक महत्वपूर्ण आत्मकथा मानी जाती है ।[48] बाबर तुर्की भाषा का अच्छा कवि था और उसने नवीन काव्य शैली आरम्भ की जिसे " मुबायान" कहते हैं ।[49] बाबर के साथ बहुत से विद्वान और इतिहासकार भारत आये । जिनमें अबुल वाहिद फारीगी, नादिर समरकन्दी, ताहिर ख्वान्दी, जैनुल आब्दीन तथा मिर्जा हैदर दोगलात प्रमुख थे ।[50] हुमायूँ ने फारसी भाषा को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया और बहुत से विद्वानों को संरक्षण भी प्रदान किया ।[51] हुमायूँ स्वयं गणित, ज्योतिष, फारीस, दर्शन, तुर्की का अच्छा विद्वान था ।[52]

फारसी साहित्य की उन्नति का श्रेय अकबर को दिया जाता है क्योंकि अकबर के शासन काल में मुगल साम्राज्य पूर्ण स्थायित्व प्राप्त कर चुका

---

48. हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 257

49. हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 257

50. डा0झारखण्डे चौबे, एवम् डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव, पृ0- 569

51. एस0आर0शर्मा, भारत में मुगल साम्राज्य पृ0- 99,100

52. हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0 - 257

था और अब अकबर के पास साहित्य की उन्नति के लिए पर्याप्त समय था। अकबर के दरबार में प्रसिद्ध उनसठ विद्वानों का उल्लेख अबुल फजल ने किया जिनमें शेख अबुल फैजी प्रमुख कवि थे।[53]

संस्कृत से फारसी में अनुवाद कराया। बदायूँनी ने "रज्मनामा" के नाम से महाभारत का अनुवाद किया। अबुल फजल ने पंचतंत्र का अनुवाद करके उसका नाम "अन्धारे साहिल" का अनुवाद फारसी में किया।[54] अकबर ने एक पुस्तकालय की स्थापना की और उसमें गद्य एवं पद्य की पुस्तके, फारसी, यूनानी, अरबी और कश्मीरी भाषाओं की पुस्तकें संकलित की।[55]

- -

53· आइने अकबरी, जिल्द-1, पृ0-189, के0ए0निजामी, स्टडीज, पृ0-135 से 137, हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0- 257, लईफ अहमद, पृ0-71 तथा झारखण्डे चौबे एवम् डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव, पृ0-569-570

54· आइने अकबरी, ब्लाकमैन, पृ0-110 से 112, मुन्तखब्वुल तवारीख, जिल्द-2, पृ0-212, 213 के ए0निजामी, स्टडीज, पृ0- 125 -126 स्मिथ, अकबर द ग्रेट मोगल, पृ0- 415

5· के0ए0निजामी, पृ0- 127

जहाँगीर के काल में भी फारसी के विभिन्न ग्रन्थों की रचना की गयी । जहाँगीर की आत्मकथा "तुजुके जहाँगीरी " जिसे कालान्तर में मोतमिद खाँ ने पूर्ण किया । एक महत्वपूर्ण रचना थी ।[56] शाहजहाँ के काल में लाहौरी की पादशाह,नामा, इनायत खाँ, ने शाहजहाँ नामा, मुहम्मद सालिह ने " अमले सालिह " मुहम्मद अमीन कजबीनी ने " शाह जहाँनामा " की रचना की, जिससे शाहजहाँ के काल के इतिहास के सम्बन्ध में जानकारी मिलती है ।

औरंगजेब के काल तथा कालान्तर में राजनीतिक स्थितियों की जानकारी के लिए मुहम्मद काजिम ने " आलमगीरनामा " साकी मुस्तैद खाँ ने " मआसिरे आलमगीरी " आकिल खाँ राजी ने " जफर नामा " तथा खाफी खाँ ने " मुन्तखब्वुल लुबाब" ने प्रसिद्ध फारसी ग्रन्थों की रचना की ।[57]

- -

56. बी0एन0लूनिया, पृ0 - 177

57. इलियट ,जिल्द - 7, पृ0 - 209

तथा लेखकों ने फारसी साहित्य को समृद्ध करने में अपना योगदान दिया बल्कि राज परिवार से सम्बन्धित महिलाओं ने भी फारसी साहित्य को पर्याप्त संरक्षण प्रदान किया । फारसी भाषा की प्रगति 1948 ई0 तक मुहम्मद शाह के शासन काल तक निर्बाध रूप से होती रही । इसके बाद इस भाषा का ह्रास होने लगा । फिर भी अठारहवीं सदी में सूफी सिद्धान्तों पर हिन्दू और मुसलमानों विद्वानों ने फारसी में पुस्तकें लिखी ।

हिन्दी :

भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना के पूर्व ही हिन्दी भाषा का विकास आरम्भ हो गया था । 1000 ई0 के बाद मुस्लिम आक्रमणकारियों से युद्ध करने की प्रेरणा देने वाली वीरगाथाओं का लेखन शुरू हो गया था।[59] मुगल काल हिन्दी साहित्य का उत्कृष्ट काल था । जायसी, तुलसीदास, अब्दुर्रहीम खानखाना, तथा बीरबल अकबर काल के दरबार से सम्बन्धित थे।[60]

---

59. रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास ,पृ0- 26

60. हरिशंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली, पृ0- 258

बूटा या वृक्षराज नामक हिन्दी कवि अकबर का विशेष कृपा पात्र था .[61]
अकबर के काल का सर्वश्रेष्ठ कवि मतिराम , बिहारी, बनारस के कवीन्द्र आचार्य, हरिनाथ , शिरोमणि मिश्र और वेदांग राय आदि प्रसिद्ध कवि थे ।

औरंगजेब की मृत्यु के उपरान्त राजनैतिक अस्थिरता और आर्थिक विपन्नता के कारण हिन्दी कवियों, लेखकों को पर्याप्त प्रोत्साहन न मिल सका । वे दरबारी जीवन को छोडकर प्रान्तीय राजाओं तथा जमीदारों की शरण में जाने लगे । जमींदार और स्थानीय राजा अपने मनोरंजन के लिए कवियों और लेखकों को रखने लगे । जमींदार अपनी शरण में रखकर अपने वैभव का प्रदर्शन करते थे ।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में अठारहवीं शताब्दी के प्रमुख कवि भिखारी दास थे । ये प्रतापगढ जनपद के निवासी थे ।[62] आचार्य

- -

61• हरिशंकर श्रीवास्तव, पृ0 - 258

62• डा0 शकुन्तला अरोरा, रीति कालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ0 - 9

भिखारी दास ने काकांग निरूपण के पूर्व हिन्दी काव्य की भा

सम्बन्ध में पर्याप्त विवेचन किया है । भिखारीदास हिन्दी काव्य परम्परा के आचार्य माने जाते हैं ।[63] उन्होंने अपने काव्य में बृजभाषा, संस्कृत और फारसी के शब्दों का समावेश किया है ।[64] उनके प्रमुख काव्य शास्त्रीय ग्रन्थों में " काव्यनिर्णय ", " श्रृंगार निर्णय " रस सारांश " तथा छन्दोर्णव पिंगल आदि है ।[65]

पूर्वी उत्तर प्रदेश के राजाओं और जमीदारों ने बहुत से हिन्दी और संस्कृत के विद्वानों को प्रश्रय दिया । बनारस के राजा बलवन्त सिंह के दरबार में संस्कृत के विद्वान रघुनाथ बन्दी जन और मुकुन्द लाल थे । रघुनाथ बन्दीजन हिन्दी के प्रसिद्ध विचारक और काव्य कला के मर्मज्ञ

- -

63· डा० किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ०-69

64· डा० भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, पृ०- 136

65· डा० भगीरथ, मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, पृ०-147,

भिखारीदास ग्रन्थावली (खण्ड-1) सं०-विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ०-5, 6

शकुन्तला अरोरा, रीति कालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि,

पृ० - 9

विद्वान थे। रघुनाथ बन्दीजन ने 1745 ई0 में " काव्य कलाधर " ने 1750 ई0 में " जगन्मोहन तथा " इश्क महोत्सव " नामक मौलिक ग्रन्थों की रचना की तथा बिहारी सतसई पर एक टीका भी लिखी।[66] बनारस इस समय हिन्दी के विकास का प्रमुख केन्द्र बन गया था। बनारस के राजा चेतसिंह के दरबार में लाल कवि, हरि प्रसाद और गोकुल नाथ बन्दी जन प्रमुख हिन्दी के कवि विद्यमान थे। राजा उदित नारायण सिंह के दरबार में बृज लाल भट्ट, गणेश, राम सहाय आदि प्रमुख कवीयों ने हिन्दी भाषा के विकास से योगदान दिया।[67] बनारस के बाद आजमगढ़ में भी हिन्दी विद्वान वहाँ के राजाओं का संरक्षण प्राप्त कर रहे थे।

आजमगढ़ के राजा महावत खाँ के दरबार में हिन्दी व संस्कृत के प्रसिद्ध कवि बलदेव मिश्र थे।[68] मुसलमान होने के बावजूद भी आजम खाँ के दरबार में प्रसिद्ध कवि हरजू मिश्र थे जिन्होंने " आजमखानी सतसई " की रचना की तथा इसके अलावा अमर कोश " नामक ग्रन्थ भी इन्हीं के द्वारा

- -

66 ए0एल0 श्रीवास्तव, शुजाउद्दौला, खण्ड-।।, पृ0-386, मोती चन्द्र, काशी का इतिहास, पृ0- 419

67. मोतीचन्द्र, काशी का इतिहास, पृ0-419 ए0एल0 श्रीवास्तव, शुजाउद्दौला, खण्ड-।।, पृ0- 389- 390

68. के0के0 हालोज, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स .... गोरखपुर डिवीजन, 1935 ॥आजमगढ़ डिस्ट्रिक्ट॥ पृ0 39

लिखा गया ।[69] इस प्रकार स्वायत्त राजाओं ने धर्म और रूढ़िवादिता का परित्याग करके हिन्दी तथा संस्कृत के कवियों को प्रोत्साहन दिया तथा इन भाषाओं के साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया । साहित्य के विकास को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से मुस्लिम शासकों ने हिन्दू विद्वानों को दान भी दिया । उदाहरण स्वरूप आजमगढ़ के राजा आजम खाँ द्वितीय के भाई बाबू जहाँयार खाँ ने हरजू मिश्र को को 52 बीघा करमुक्त भूमि अनुदान में दी ।[70] इन शासकों ने न केवल विद्वानों को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया बल्कि स्वयं भी हिन्दी भाषा की सेवा की । पूर्वी उत्तर प्रदेश में बनारस, आजमगढ़ तथा गोरखपुर के कुछ शासक तथा जमींदार शिक्षा रुचि रखते थे तथा विद्वान थे । बनारस के राजा चेतसिंह कवि थे और उन्होंने " लक्ष्मी नारायण विनोद " ग्रन्थ की रचना की थी ।[71] राजा बलवन्त

- -

69, जे0के0 हालोज, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स,.....गोरखपुर डिवीजन, 1935, ﴾आजमगढ़ डिस्ट्रिक्ट﴿ पृ0 - 38

70. जे0के0 हालोज, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स.... गोरखपुर डिवीजन, 1935, ﴾आजमगढ़ डिस्ट्रिक्ट﴿ पृ0- 39

71. मोती चन्द्, काशी का इतिहास, पृ0- 419

सिंह के भतीजे मनियार सिंह ने " भावार्थ चन्द्रिका " नामक ग्रन्थ लिखा था ।[72] आजमगढ के राजा आजम खाँ एवं द्वितीय ने सिंगार दर्पण " नामक काव्य ग्रन्थ की रचना की, जो कि उसके अनन्य हिन्दी प्रेम का परिचायक है ।[73] गोरखपुर सरकार में अनवल का राजा प्राकृत भाषा का प्रकाण्ड विद्वान था ।[74]

इस प्रकार स्पष्ट हैकि पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजाओं व जमींदारों ने मुगल परम्पराओं के अनुरूप ही हिन्दी भाषा को प्रोत्साहन दिया ।

उर्दू :

उर्दू भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कहा गया हैकि या तो यह

- -

72. वही, पृ0- 420
73. जे0के0 हालोज, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, गोरखपुर डिवीजन, 1935, {आजमगढ डिस्ट्रिक्ट} पृ0- 38,39

74. माटंमुमरी मार्टिन, ईस्टर्न इण्डिया, खण्ड -II, पृ0 - 430

कई भाषाओं का मेल है या इसकी उत्पत्ति फारसी तथा हरियाणवी भाषा के मेल से हुई है ।[75] बाबर ने अपनी आत्मकथा "तुजुके बाबरी " तुर्की भाषा में लिखी परन्तु उसमें " हिन्दवी " तथा उर्दू के शब्दों का प्रयोग किया गया ।[76] प्रमुख सूफी सन्तों ने उर्दू भाषा को अपने उपदेशों के माध्यम से और अधिक समृद्ध किया ।[77] अमीर खुसरों ने अपनी फारसी की कविताओं में उर्दू के शब्दों का सफलता पूर्वक प्रयोग करके ख्याति प्राप्त की । यह भाषा केवल दिल्ली तक ही नहीं बल्कि सुदूर प्रदेशों तक भी इसका विस्तार हुआ।[78] सूफी सन्तों के अतिरिक्त भक्ति आन्दोलन के प्रवर्तकों कबीर,नानक,सूर और

- -

75. महमूद शेरानी, पंजाब में उर्दू, पृ0-21, मसूद हुसैन, मुकदमा ए-तारीखे जबानी उर्दू, उद्धृत युसुफ हुसैन ,पृ0-10। तथा युसुफ हुसैन, पृ0-99,100.

76. युसुफ, हुसैन, पृ0- 111

77. रफिया सुल्तान ,उर्दू नस्त्र का आगाज और इरतका, पृ0-23

78. वही, पृ0- 78

तुलसी ने भी उर्दू भाषा के शब्दों का बहुतायत से प्रयोग किया ।[79] अकबर के शासन काल में इस भाषा को लोग " रेख्ता" के नाम से जानने लगे । उर्दू भाषा को शमशुद्दीन वली ﴾ 1668-1744 ﴿ ने समृद्ध बनाया । वली के समय में उर्दू शायरी का तीव्र गति से विकास हुआ और इस काल में आबरू, आरज़ू, हातिम, मजहर जानजाना, मीर, दर्द, सौदा जैसे उच्च कोटि के कवियों ने वली द्वारा निर्दिष्ट मार्ग का अनुसरण कर उर्दू साहित्य को समुन्नतशील बनाया । मीर सोज और सौदा अवध के नवाब सआदत खाँ के निमन्त्रण पर लखनऊ गए और वहाँ पर एक पृथक लखनऊ गए और वहाँपर सआदत खाँ के निमन्त्रण पर लखनऊ गए और वहाँ पर एक पृथक लखनऊ की उर्दू शायरी का विकास किया । आतिश और नासिख लखनऊ के प्रसिद्ध शायर थे ।[80] स्पष्टत: इन उर्दू लेखकों और शायरों ने अपना प्रभाव

- -

79· यूसुफ हुसैन, पृ0- 107 से 110 , अब्दुल हक, उर्दू की इब्तेदाईनशोवनुम

पृ0- 16, रघुपति फिराक,उर्दू भाषा और साहित्य, पृ0- 83,

लईक अहमद, पृ0- 79,80

80· यूसुफ हुसैन, पृ0-116

पूर्वी उत्तर प्रदेश की भाषा पर डाला । फारसी का विकास 1748 ई0 के बाद अवरुद्ध हो गया था और ये नयी भाषा सरल, सुबोध और सरस थी जिसे सभी ने आसानी से अपना लिया ।

सूफी वाद :

इस्लाम के रहस्यवादियों को सूफी कहा गया । अबू नसर अल सराज ने " किताब उल लुमा " में लिखा है कि सूफी शब्द से निकला है, जिसका अर्थ है उन ।[81] कुछ लोगों ने मदीना में मस्जिद के समीप रहने वाले " अहल सुफ्फाह " के सुफ्फाह से सूफी शब्द की उत्पत्ति मानी है । इसी प्रकार बानू सूफा नामक भ्रमणकारी जाति से तथा ग्रीक शब्द सोफिस्ता से सूफी और थियोसोफिया से तसव्वुफ की उत्पत्ति माना जाता है ।[82]

81• राम पूजन तिवारी, सूफी मत, साधना और साहित्य, पृ0- 169

82• डा0 झारखण्डे चौबे एवम् डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव, पृ0-409

सूफी वह धार्मिक साधक थे जो ऊनी चोंगा पहनता था तथा परम प्रियतम के रूप परमात्मा की उपासना करना ही उसके जीवन का लक्ष्य था । सभी मुस्लिम रहस्यवादी साधकों के लिए सूफी शब्द का प्रयोग किया जाता है । सूफीवाद उच्च स्तर के स्वतन्त्र विचार का स्वरूप है ।[83] सूफीवाद प्रगाढ़ भक्ति का धर्म है, कविता संगीत तथा नृत्य इसकी आराधना के साधन हैं तथा परमात्मा में विलीन हो जाना इसका आदर्श है ।[84]

इस्लाम धर्म और समाज को परिवर्तित परिस्थितियों के अनुकूल बनाने के लिए सूफी आन्दोलन प्रारम्भ हुआ ।[85] सूफी मत का विकास मानव संस्कृति, मुस्लिम समाज, नैतिकता तथा आध्यात्मिक सिद्धान्तों की रक्षा के लिए हुआ ।[86]

---

83. निजामी , पृ0- 52

84. ताराचन्द ,पृ0- 83

85. निजामी, पृ0- 50

86. निजामी , पृ0 - 57

सूफी मत का आधार प्रारम्भिक काल में व्यक्तिगत था । सूफी साधक एकान्त जीवन में प्रायश्चित करते थे तथा इनमें प्रेम साधना की भावना का अभाव था । आठवी शताब्दी के इन प्रमुख साधकों में इमाम हसन बसरी, इब्राहिम बिन आधम, अबू हाशिम, तथा रबिया बसरी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है । द्वितीय चरण में रहस्यवादी प्रवृत्तियों के उदय तथा उत्तरोत्तर विकास, सैद्धान्तिक विकास और दार्शनिक चिन्तन की प्रधानता रही ।[87] तृतीय चरण में , मुस्लिम समाज में अराजकता, अव्यवस्था तथा नैतिक पतन का सामना करने तथा उसमें नवजीवन का संचार करने के लिए सूफी सन्तों ने खानकाह के रूप में संगठित होने का निश्चय किया ।[88]

सूफी साधकों के अनुसार परमात्मा एक है, वह काल और स्थान

- -

87• राम पूजन तिवारी, सूफी मत साधना और साहित्य, पृ0- 53

88• निजामी , पृ0- 57

की परिधि में नहीं बांधा जा सकता है ।[89] आत्मा को सूफी साधकों ने ईश्वर अंश स्वीकार किया है । सूफी साधकों के अनुसार मनुष्य परमात्मा के सभी गुणों को अभिव्यक्त करता है ।[90] सूफी साधक पूर्ण मानव को अपना गुरू मानता है । अल हक्क के साथ एकत्व प्राप्त करना सूफी साधना का चरम लक्ष्य है ।

भारत में सबसे लोकप्रिय चिश्ती सिलसिला के प्रवर्तक ख्वाजा इसहाक शामी चिश्ती माने जाते है ।[91] कुछ विद्वान ख्वाजा अबू अब्दाल को इसका संस्थापक मानते हैं ।[92] परन्तु भारत वर्ष में इस सिलसिला की स्थापना का श्रेय ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती को ही है ।[93] चिश्ती सिलसिला के प्रमुख सूफी सन्त हमीदुद्दीन नागौरी, शेख कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी, फरीदुद्दीन मसूद शंकरगंज, निजामुद्दीन औलिया आदि थे ।[94] चिश्ती सिलसिला

- -

89· कल्चरल हेरिटेज आफ इण्डिया, पृ० - 595

90· ताराचन्द, पृ०- 76

91· तिवारी, पृ०- 443

92· युसुफ हुसेन, पृ० - 36

93· आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, पृ०- 80

94· के०ए०निजामी, पृ०- 185, 188, तिवारी पृ० - 460

के बाद सुहरावर्दी प्रमुख सम्प्रदाय था । सुहरावर्दी सम्प्रदाय के प्रवर्तक शेख बहाउद्दीन ज़कारिया थे ।[95] इस सम्प्रदाय के अन्य प्रमुख·····
सूफी सन्त शेख सद्रुद्दीन आरिफ, शेख रुकनुद्दीन अबुल फतह तथा शेख जलालुद्दीन सुर्ख थे ।

एक अन्य सूफी सम्प्रदाय कादिरी सिलसिला का प्रवर्तन अब्दुल कादिर अल जीलानी ने किया था । भारत में कादिरी सिलसिला के प्रवर्तक मुहम्मद गौस थे । इस सिलसिला के प्रमुख सूफी सन्त अब्दुल कादिर द्वितीय, शेख दाऊद किरमानी तथा शेख अबुल मा अली थे ।

सूफी मत की शाखाओं में नक्शबन्दी सिलसिला का प्रमुख स्थान है । रशहात ऐन अल ह्यात के अनुसार इसके प्रवर्तक ख्वाजा उबैदुल्ला थे ।[96] भारत में इस सिलसिला का प्रचार शेख अहमद फारूकी सरहिन्दी ने किया था ।[97] नक्शबन्दी सिलसिला के प्रमुख सूफी सन्त मुहम्मद मासूम, ख्वाजा

- -

95· के०ए० निजामी, पृ० - 22।

96· तिवारी, पृ०- 492, डा० झारखण्डे चौबे एवम् डा० कन्हैया लाल श्रीवास्तव, पृ० - 446

नक्शबन्द, हुजतुल्ला, क्यूम जुबैर, ख्वाजा मीरदर्द आदि थे। इस सिलसिला के एक अन्य प्रमुख सूफी सन्त शाहवली उल्ला थे, जिनका जन्म 1702 ई0 में हुआ और मृत्यु 1762 ई0 में हुई थी। इनके ऊपर सतानत पन्थी इस्लाम का प्रभाव पडा था और इनका विश्वास कुरान, शरीयत तथा हदीस पर आधारित था।[98]

समाज में सूफी सन्तों का प्रभाव तक बना रहा। सूफी सन्तों ने अपने शिष्यों को समाज सेवा, सद्व्यवहार पृथा तथा क्षमा आदि गुणा पर बल दिया।[99] उन लोगों ने जनता के चरित्र तथा उनके दृष्टिकोण को सुधारने का प्रयास किया।[100] सूफी सन्तों ने खडी बोली अथवा हिन्दुस्तानी तथा क्षेत्रीय भाषाओं के विकास में भी योगदान दिया।[101]

---

98. यूसुफ हुसैन, पृ0- 62, 63

99. ए0रशीद, पृ0 - 180

100. वही

101. ए0रशीद, सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इण्डिया, कलकत्ता, 1969, पृ0- 196, 200.

अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक सूफीवाद की प्रगति अवरुद्ध हो गयी । अठारहवीं शताब्दी में इस्लाम का आधुनिकीकरण हुआ जिसके कारण सूफी प्रथाओं का पतन हो गया और उनके द्वारा मुस्लिम समुदाय को पुन: सशक्त नहीं बनाया जा सका ।

हिन्दू दर्शन :

सभी धर्मों का अपना - अपना दर्शन है । दर्शन का मूल उद्देश्य सांसारिक दु:ख तथा अज्ञानता दूर करता है । दर्शन का मूल विषय ईश्वर, सृष्टि, आत्मा तथा जीव है तथा मूल उद्देश्य ईश्वरीय ज्ञान को प्राप्त कर सुख के अन्तिम लक्ष्य तथा मोक्ष को प्राप्त करना है। गौतम, महावीर तथा भक्ति आन्दोलन के महान समाज सुधारकों ने मनुष्य के दु:ख को दूर कर मोक्ष के साधन को अपने अपने ढंग से प्रतिपादित किया है तथा दार्शनिक चिन्तन भी प्रदान किया ।

हिन्दू दर्शन की पृष्ठभूमि का रेखांकन बारहवीं सदी के पूर्व ही शंकराचार्य ने किया । ब्रह्म के सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण एकेश्वरवाद

को प्रतिपादित किया ।[102]

स्थापत्य :

मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर ने स्थापत्य कला में अपनी रूचि प्रदर्शित की ।[103] उसकी आत्म कथा के अनुसार उसने कई सौ कारीगरों को भवन निर्माण में लगाया ।[104] उसकी निर्मित की हुई प्रमुख इमारतों में काबुली बाग मस्जिद, पानीपत और सम्भल में जामा मस्जिद है ।[105] वह निरन्तर युद्धों के कारण वास्तु कला पर विशेष ध्यान केन्द्रित न कर सका ।

---

102. डा0 झारखण्डे चौबे एवम् डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव, पृ0-404, 405

103. डा0 राम नाथ, मध्यकालीन भारतीय कलाएं और उनका विकास, पृ0- 53

104. तुजुके बाबरी, II, पृ0- 533

105. कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया., भाग - 4, पृ0- 524, डा0 राम नाथ, पृ0- 54

तथा अद्वैतवाद का था । उनके सिद्धान्त में भक्ति के लिए कोई स्थान न था । उनके विरोधी आचार्यों, ने प्रतिपादित सिद्धान्त को मायावाद कहा और शंकराचार्य का विरोध किया । हिन्दू दर्शन की व्याख्या करते हुए अन्य आचार्यों ने नए सम्प्रदायों की स्थापना की और नवीन प्रकार से हिन्दू दर्शन की व्याख्या की । इनके अलावा रामानन्द, रैदास, कबीर, धन्ना, सेना, पीपा, भवानन्द, सुखानन्द, आशानन्द, सुरसुरानन्द, दादू, मलूकदास, रज्जब, बूला साहब, बुल्लेशाह, नामदेव आदि प्रमुख दार्शनिक, सन्त और समाज सुधारक थे जिन्होंने अपनी लेखनी और उपदेशों द्वारा हिन्दू दर्शन में नवीन विचारों को प्रतिपादित करते हुए समन्वयवादी और सहअस्तित्व का दृष्टिकोण अपनाया । इन सन्तों ने न केवल नवीन दार्शनिक चिन्तन दिया बल्कि इस चिन्तन में समाज सुधार की भावना का भी समावेश किया ।

अठारहवीं शताब्दी में रज्जब और बुल्लेशाह ने अपने दार्शनिक विचारों से आम जनजीवन को प्रभावित करते हुए नवीन विचारों

उसके उत्तराधिकारी हुमायूँ ने दीनपनाह नामक नगर की स्थापना की । अकबर ने आगरा, फतेहपुर सीकरी में सुन्दर भवनों का निर्माण कराया तथा आगरा, लाहौर, इलाहाबाद और अजमेर के दुर्ग भी उसके द्वारा निर्मित्त किये गये ।अकबर ने फतेहपुर सीकरी में दीवाने खास, पंचमहल, खास महल, जोधाबाई का महल, बीरबल की कोठी, बुलन्द दरवाजा,तथा शेख सलीम चिश्ती के मकबरे सहित अन्य भवनों का भी निर्माण कराया ।[106]

शाहजहाँ का काल मुगल वास्तुकला का स्वर्णयुग था । यह काल संगमरमर के बहुतायत से प्रयोग के लिए विख्यात हुआ ।[107] अन्य प्रमुख इमारतों के अलावा ताजमहल, शाहजहाँ और मुगल काल की सर्वश्रेष्ठ एवं सुन्दरतम रचना है ।[108]

- -

106· डा०रामनाथ,पृ०-57 से 64, पर्सी ब्राउन, इण्डियन आर्कीटेक्चर, इस्लामिक पीरियड्ड् पृ०- 93 से 98

107· पर्सी ब्राउन, पृ०- 102

108· पर्सी ब्राउन, पृ०- 103 से 11C, ई०बी०हैवेल, हैण्ड बुक टू आगरा एण्ड द ताज, लंदन, 1900, जर्नल आफरायल एशियाटिक सोसायटी, अंक -7, हरिशंकर श्रीवास्तव, मुगल शासन प्रणाली पृ०-259,लईक अहमद,मुगल कालीन भारत , पृ०- 409,51C

औरंगज़ेब का काल मुगल वास्तु कला के पतन का काल था ।[109] इसका प्रमुख कारण न केवल आर्थिक साधनों की कमी अपितु सम्राट की अभिरूचि का अभाव था।[110] औरंगजेब ने रबियाउद् दौरानी का मकबरा, दिल्ली की मोती मस्जिद और लाहौर की बादशाही मस्जिद का निर्माण कराया । इन इमारतों में सौन्दर्य का स्पष्ट अभाव दृष्टिगोचर होता है ।

औरंगजेब की मृत्यु के उपरान्त मुगल वास्तुकला का पूर्णतया पतन हो गया ।[111] दरबारी राजनीति और योग्य शासकों के अभाव ने इस कला को पूर्णतया नष्ट कर दिया । मुगल शैली के पतन के बाद निर्माण कार्य क्षेत्रीय शासको, जैसे अवध के नवाब आदि के हाथों में चला गया ।[112] इन क्षेत्रीय शासकों ने मुगल वास्तुकारों और निर्माणविदों को अपेन दरबार में प्रश्रय

- -

109. पर्सी ब्राउन, पृ0- 111

110. पर्सी,ब्राउन, पृ0- 111

111. पर्सी ब्राउन, पृ0- 112

112. वही

दिया । इस काल में 1753 ई0 में दिल्ली में सफदर जंग का मकबरा निर्मित किया गया ।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में राजा और जमींदार प्राय: स्वतन्त्र शासक की भाँति व्यवहार करने लगे थे । उनका आचार व्यवहार व रहन सहन मुगल शासकों की भाँति का था । उन्होंने अपने निवास के लिए उच्च स्तरीय भवनों का निर्माण नहीं कराया जो कि अपनी वास्तुकला और निर्माण शैली के लिए प्रसिद्ध रहे हो । प्रत्येक राजा या जमींदार अपने पैतृक अथवा स्वनिर्मित गढियों में निवास करते थे ।[113] इन लोगों के निवास प्राय: नदियों के तट, पहाड़ियों अथवा दुर्गम स्थानों पर निर्मित्त किये जाते थे ताकि आम जनता से दूर एवं सुरक्षित रहे ।[114] इनके निवास स्थान प्राय:

113· बलवन्तनामा, पृ0-21,31, ए0फ्यूहरर, मानूमेण्टल एन्टीक्विटीज एण्ड इन्सक्रिपशान्स आफ नार्थ वेस्टर्न, प्राविन्सेज एण्ड अवध, खण्ड-II, 1891, पृ0- 187 से 192 ,213,252, 256, 257, एल0एल0 श्रीवास्तव, शुजाउद्दौला, खण्ड- II, पृ0- 350 , मान्टगुमरी मार्टिन, ईस्टर्न इण्डिया, खण्ड-II, पृ0- 368, 374, 402·

114· बलवन्त नामा, पृ0- 31 से 34

खाडियों एवं इमें बने के मध्य बने होते थे।[115] उदाहरण स्वरूप, आजमगढ के राजा महावत खाँ ने आजमगढ नगर की रक्षा हेतु उसके चारों तरफ खाई खुदवाई तथा हर तरफ जंगी मोरचा बनाकर सैनिक नियुक्त किये ।[116] इसी प्रकार गोरखपुर के परगना सिंधुआ - जोबना में स्थित पडरौना के जमींदार की गढी बांसों से घिरी हुई थी ।[117] इसकी सुरक्षा की दृष्टि से प्राय: गढी के चारों ओर खाई खुदवाई जाती थी जिसमें जल भरा रहता था ।खाई के चारों ओर काफी ऊँची एवं मजबूत दीवार भी निर्मित की जाती थी । इस प्रकार की व्यवस्था आजमगढ जनपद के परगना नत्थूपुर में स्थित तालुका हसनपुर के ताल्लुकेदार गुलाब मिश्र की गढी में की गयी थी । इसी प्रकार की व्यवस्था कान्तराव के जमींदार चेतू मिश्र तथा फूलपुर के जमींदार रामबख्श मिश्र ने भी की थी । अपनी गढियों की रक्षा हेतु

- -

115. मॉन्टगुमरी मार्टिन, खण्ड- II, पृ0- 514

116. तारीख - ए - आजमगढ पृ0 - 21 बी

117. मॉटगुमरी मार्टिन, ईस्टर्न इण्डिया, खण्ड - II, पृ0 - 354
355.

जमींदार और राजा सशस्त्र रक्षक भी नियुक्त करते थे। आजमगढ़ तथा बनारस के राजा ने अपने दुर्गों की रक्षा हेतु बड़ी संख्या में रक्षक नियुक्त किये थे तथा बाहर निकलने पर वे सशस्त्र सैनिकों को लेकर चलते थे।[118]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि पूर्वी उत्तर प्रदेश में 1707 ई० से 1761 ई० तक तथा कालान्तर में भी मुगल स्थापत्य कला का पतन हुआ इस काल में पूर्वी उत्तर प्रदेश के राजाओं ने जमींदारों ने भवन निर्माण कला में कोई रुचि प्रदर्शित नही की। वे निहित स्वार्थों और भोग विलास के जीवन को स्वतन्त्रता पूर्वक जीने के प्रति अधिक लालायित रहे। अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ से ही मुगल वास्तुकला की भव्य परम्परा समाप्त हो गयी।

मुगल शैली के पतन के उपरान्त भवन निर्माण कला मुगल वंश के हाथों से निकलकर अवध के नवाब और क्षेत्रीय राजाओं के हाथों में आ गयी।[119]

---

118. तारीखे - ए - आजमगढ़, पृ0- 21 बी,, 22ए, बलवन्तनामा, पृ0-32 33, मॉटगुमरी मार्टिन, खण्ड-II, पृ0-414, 415

119. पर्सी ब्राउन, पृ0- 113

अवध के नवाबों का शासन अठारहवीं शताब्दी के मध्य से आरम्भ हुआ। अवध के नवाबों ने मुस्लिम वास्तुकला की एक नवीन भव्य परम्परा की शुरूआत की और इसका प्रमुख केन्द्र लखनऊ बना। अवध के नवाबों ने अपनी भवन निर्माण कला में पत्थरों एवं संगमरमर का प्रयोग नहीं किया।[120] भवन को सभी दिशाओं में विस्तारित करके उनकी आधारशिला ईंट अथवा पत्थर के बिना गढ़े हुए टुकड़ों से रखी जाती थी तथा महीन चूने का प्रयोग पलस्तर तथा ईंटों की जोड़ने के काम में लाया जाता था।[121] इस नवीन कला ने भव्य एवं बड़े भवनों को न्यूनतम व्यय एवं कम समय में निर्मित किया। भवन निर्माण में प्रयोग होने वाली इन वस्तुओं का कारीगरों ने काफी कुशलता भी दिखाई। इस शैली में दीवारों पर प्लास्टर एक न''न परम्परा की शुरूआत थी।[122] इन भवनों का निर्माण सुडौल अथवा सामंजस्यपूर्ण

---

120. वही,

121. वही

122. वही

रखा गया । इन भवनों के निर्माण में छिद्रों का बहुतायत से प्रयोग किया गया तथा रोक के लिए खंभों पर बनी मेहराबों का भी प्रयोग किया गया ।[123] इस प्रकार की विशेषताएं लखनऊ में निर्मित भवनों में दृष्टिगोचर होती हैं । इन भवनों का निर्माण मुगल शैली से पूर्णतया भिन्न था ।

कालान्तर में अवध के नवाबों की सेवा में आये मेजर जनरल क्लाउड मार्टिन ने नवीन निर्माण शैली को जन्म दिया । उसने "पैलाडियन शैली " के आधार पर उत्तर भारत की प्रथम यूरोपीय ढंग की इमारत का निर्माण करवाया ।[124] इन भवनों में रोमन शैली का प्रयोग किया गया ।[125] कालान्तर में कुछ भवनों इटैलियन शैली का भी प्रयोग हुआ ।[126] अवध के नवाबों में संरक्षण में निर्मित होने वाले भवनों में गुम्बद का प्रयोग विशेष रूप से किया गया जो इन भवनों की प्रमुख विशेषता थी ।[127]

---

123. पर्सी ब्राउन, पृ0- 114

124. वही

125. वही

126. वही पृ0 - 113, 114

127. वही, पृ0 -113, 114

चित्रकला : -

मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर की रूचि चित्रकला में भी थी। बाबर ने अनेक चित्रकारों को संरक्षण तथा राज्याश्रय प्रदान किया ।[128] हुमायूँ ने भी चित्रकला में अपनी पर्याप्त रूचि का प्रदर्शन किया । अकबर का शासन काल मुगल कालीन संस्कृति के विकास के लिए सर्वाधिक उपयुक्त था।[129] अकबर के दरबार में फारूख, कलमाक, अब्दुस्समद, मीर सैयद अली तथा मिसकीन आदि प्रमुख चित्रकार थे ।[130] हिन्दू चित्रकारों में दासवंत, बसावन, केसोलाल, मुकुन्द, माधों, जगन्नाथ, खेम करन आदि थे ।[131] पुस्तकों के आधार पर चित्रण तथा भित्ति चित्र शैली अकबर के काल की ही देन है । चित्रकला की कलात्मक भावना जहाँगीर के हृदय में अतिरिक्त शक्ति के साथ पुनर्जागृत में हो उठी ।[132] चित्रकला जहाँगीर के काल में विकास की

---

128. एल0 वियान, कोर्ट पेन्टर्स, आफ द ग्रेंड मुगल्स, पृ0- 14

129. पर्सी ब्राउन, पृ0 - 49

130. ताराचन्द, पृ0 - 270

131. आइने अकबरी, भाग-1, पृ0 - 108

132. पर्सी ब्राऊन, पृ0 - 50

पराकाष्ठा पर पहुँच गयी ।

शाहजहाँ की अभिरूचि स्थापत्य कला में अधिक थी । औरंगजेब के काल में चित्रकला को प्रोत्साहन प्राप्त नहीं हुआ और यह अवनति की ओर अग्रसर हुई । 1707 ई0 में औरंगजेब की मृत्यु के बाद पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजनैतिक अस्थिरता का वातावरण व्याप्त हो गया अतः यहाँ के शासक वर्ग के लोग इस क्षेत्र में विशेष कुछ नहीं कर सके । नादिरशाह तथा अहमद शाह अब्दाली के आक्रमणों ने भी मुगल काल में पनपी इस कला को समाप्त प्राय कर दिया । इसके बावजूद भी चित्रकला की प्रगति होती रही ।

नादिरशाह तथा अहमद शाह अब्दाली के आक्रमणों के फलस्वरूप मुगल काल के चित्रकारों को विभिन्न क्षेत्रों में शरण लेनी पड़ी । विभिन्न क्षेत्रों के राजाओं के प्रश्रय से चित्रकला की विभिन्न शैलियों का उदय हुआ । इनमें राजस्थान में पुष्पित एवं पल्लवित हुई राजस्थानी चित्रकला शैली मुगल शैली से काफी भिन्न थी ।[133] दक्षिण में बीजापुर

- -

133. पर्सी ब्राउन, पृ0 - 54

व गोलकुण्डा के शासकों ने पाश्चात्य शैली को अपनाते हुए चित्रकला का विकास किया ।[134] कांगडा अथवा पहाडी शैली का विकास पंजाब व जम्मू के राजाओं के संरक्षण से हुआ, जिसने मुगल चित्रकला शैली को जीवित रखा।[135] इन चित्रकारों ने प्राकृतिक दृश्यों का सुन्दर व मनोहारी चित्रण किया । इन विभिन्न शैलियों की चित्रकला का प्रभाव अन्य क्षेत्रों की चित्रकला पर पड़ना स्वाभाविक ही था ।

पूर्वी उत्तर प्रदेश का क्षेत्र भी इन प्रभावों से अछूता नहीं था । विभिन्न शैलियों की चित्रकारी को पूर्वी उत्तर प्रदेश के कलाकारों ने अपनाया। जब विभिन्न शैलियों का सम्मिश्रण होता है तब एक नवीन शैली का जन्म

134· एच0के0 शेरवानी, कल्चरल सिन्थेसिस इन मेडिवल इण्डिया, जर्नल आफ इण्डियन हिस्ट्री, जिल्द - 12, भाग -1, अप्रैल 1963 तथा स्टेला कैमरिश, पृ0 - 160 से 171

135· एम0ए0 रंधावा, कांगडा, पेन्टिंग ,डा0 जो0 याजदानी, कमेमोरेशन वाल्यूम, 1966 तथा एच0के0 शेरवानी, पृ0- 66

होता है । इसी कारण अवध तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश में भी विभिन्न शैलियों के मिश्रण से चित्रकला की एक नवीन शैली का उदय हुआ जो कई मायनों में पूर्वकाल में स्थापित विभिन्न शैलियों से अलग थी ।

संगीत तथा नृत्य :

संगीत के प्रति मुगल शासकों का अगाध प्रेम था । अकबर ने इस क्षेत्र में सर्वाधिक रूचि प्रदर्शित की । अकबर स्वयं " नक्कारा " बजाने में प्रवीण था । अकबर के दरबार में तानसेन नामक संगीतकार को विशिष्ट स्थान प्राप्त था ।[136]

सम्राट जहाँगीर भी संगीत प्रेमी था । उसके दरबार में साठ दरबारी गायकों की उपस्थिति का उल्लेख प्राप्त होता है ।[137] शाहजहाँ स्वयं एक

- -

136. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, पृ0 - 246, डा0 रामनाथ, मध्ययुगीन भारतीय कलाएं, और उनका विकास, पृ0 - 28

137. एन0एन0ला, प्रमोशन आफ लर्निंग ······ पृ0 178, डा0 राम नाथ, पृ0 - 28

अच्छा गायक था । उसके शासन काल में दामोदर मिश्र ने " संगीत दर्पण " नामक ग्रन्थ लिखा । शाहजहाँ के दरबार में सुखसेन " गीटार " तथा सूरसेन " जीटर " नामक वाद्य यन्त्र बजाया करते थे ।[138]

औरंगजेब प्राय=: राज महल की स्त्रियों तथा राज कुमारियों के लिए संगीत सभाओं का आयोजन करता था तथा उसने सीमित संख्या में नर्तकियों तथा संगीतकारों को संरक्षण प्रदान किया था।[139] हालाकि संगीत के प्रति औरंगजेब ने विशेष रूचि प्रदर्शित नहीं की।

1707 ई० के बाद मुहम्मद शाह के काल में संगीत को संरक्षण मिला। उसके दरबार में अदारंग और सदारंग ने ख्याल गायन को नई दिशा दी और उन्होंने विभिन्न रागों में ख्याल की अनेक रचनाऐं की जो आज भी प्रचलित हैं। अठारहवीं शताब्दी में ही ख्याल गायन के साथ सितार का आविष्कार खुसरोखाँ द्वारा किया गया। पूर्वी उत्तर प्रदेश के राजा तथा जमींदार भी संगीत तथा नृत्य के द्वारा मनोरंजन प्राप्त करते थे। दरबार के प्रमुख कार्यक्रमों में संगीत एवं

138• बनारसी प्रसाद सक्सेना, शाहजहाँ आफ देहली, पृ0 258

139• मनूची, स्टोरियो द मुगल, सम्पादित इरविन, पृ0 346

नृत्य के लिए वेश्याएं रखी जाती थीं।[140] कुछ जमींदार नृत्य एवं संगीत के लिए कत्थकों, (पुरूष नर्तकों) को भी रखते थे।[141] पूर्वी उत्तर प्रदेश में जमींदारी अथवा नये राजा के पदासीन होने पर दरबार में संगीत एवं नृत्य के आयोजन किये जाते थे।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि संगीत तथा नृत्य अब मुगल दरबार से निकलकर स्थानीय राजाओं व जमींदारों के यहाँ प्रश्रय प्राप्त कर रहा था। अवध के विभिन्न नवाबों ने संगीत एवं नृत्य को पर्याप्त संरक्षण दिया जिसका प्रभाव पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र पर स्वाभाविक रूप से पड़ा।

मनोरंजन के साधन :

प्रत्येक युग में समाज की आवश्यकताओं के अनुसार आमोद प्रमोद के साधन रहे रहे हैं। मुगल काल में शिकार मनोरंजन का प्रधान साधन

---

140. गिरधारी, इन्तजाम, ए- राज - आजमगढ़, प0 67ए, बलभद्र, चेतसिंह, विलास, चतुर्थ सर्ग, अष्टम, प्रकरण, श्लोक संख्या - 3

141. मो0अ0ग0 फारूकी, शजरेशादाब, पृ0 - 92

था । अकबर ने एक विशेष प्रकार के शिकार की व्यवस्था की थी जिसे " कमरगा " कहते थे ।[142] जहाँगीर की ही भाँति भी मुगल शासक भी मछलियों के शिकार के शौकीन थे ।[143] मुगल सम्राट नाव द्वारा भी मनोरंजन करते थे ।[144] जानवरों की लड़ाई मुगल सम्राटों को विशेष रूप से प्रिय थी ।[145] बाबर ने अपनी आत्मकथाओं में हाथियों की लड़ाई का उल्लेख किया है ।[146] अन्त:गृह मनोरंजन में शतरंजन[147] तथा ताश[148] तथा चौपाल

- -

142. पी0एन0चोपड़ा, पृ0 - 69

143. तुजुके जहाँगीरी, पृ0 - 188

144. पी0एन0चोपड़ा, पृ0 - 72,73

145. चोपड़ा, पृ0 - 83

146. बाबरनामा, अनुवाद, जे0एस0किंग, पृ0- 631,

147. पंजाब यूनिवर्सिटी ,जर्नल 1963, पृ0 - 122, 123, एजाज - ए- खुसरवी, खण्ड-2, पृ0- 291 से 294 तथा 294 से 304

148. के0एम0अशरफ, पृ0 - 236

प्रमुख रूप से खेले जाते थे। अकबर के काल में बिसमत- ए- निशात [149] तथा पचीसी [150] नामक खेल प्रचलित थे।

जश्न भी मनोरंजन का एक साधन था जिसमें वाद्य तथा मौखिक संगीत का आयोजन होता था। [151] इसके अतिरिक्त शासक वर्ग तथा अमीर वर्ग अनेक कथाकारों तथा संगीतकारों को दरबार में रखते थे। [152]

साधारण वर्ग के लोग अपने जीवन में इतने अधिक मनोरंजन की व्यवस्था नहीं कर पाते थे। हिन्दू समाज राम लीला तथा कृष्ण लीला के द्वारा कभी कभी मनोरंजन प्राप्त करते थे। [153] शाहजहाँ के काल में नाटकों का भी आयोजन होता था। [154] मुगल काल में सूफी सन्तों द्वारा मुशायरे

- -

149. चोपडा, पृ0 - 60

150. वही, पृ0 - 61

151. केएम0 अशरफ, पृ0 - 229

152. चोपडा, पृ0 - 80

153. वही, पृ0 - 79

154. वही पृ0 - 80

तथा कव्वाली का आयोजन करता था जिससे साधारण वर्ग अपना मनोरंजन करता था।[155] मेलों का आयोजन भारतीय ग्रामीण जीवन के लिए सबसे खुशी का अवसर होता था।[156]

पूर्वी उत्तर प्रदेश में राजा अपने मनोरंजन के लिए शिकार, शतरंज का खेल तथा नाव की सैर इत्यादि अपनाते थे। बनारस के राजाओं ने राम नगर के निकट शिकारगाह निर्मित्त कराई और उसमें विश्राम करने के लिए पक्के मकान, कुंए आदि भी निर्मित कराये। राजा बलवन्त सिंह, राजा महीप नारायण तथा उदित नारायण सिंह ने अपने शासन काल में रूचिपूर्वक शिकारगाह पर अत्यधिक धन व्यय किया। आजमगढ के राजाओं में शिकार खेलने का प्रचलन था। गोरखपुर के सत्तासी राजा शिकार खेलने में रूचि रखते थे तथा इसी वंश के एक राजा बसन्त सिंह की मृत्यु शिकार खेलते समय हुई थी।[158] गोरखपुर के अधिकांश जमींदार प्राय: ....

155• रशीद, पृ0-105, 106 तथा चोपडा, पृ0- 80

156• जे0एम0सरकार, हिस्ट्री आफ औरंगजेब, खण्ड-5, पृ0-471 से 473

157• गिरधारी, इन्तजाम-ए-राज-ए-आजमगढ पृ0-15ए, बी, ।

158• माँटगुमरी मार्टिन, खण्ड-11, पृ0-501, नागेश्वर प्रसाद सिंह वर्मा, नागकौशलोत्तर, प्रथम खण्ड, सत्तासी राजा बसन्त सिंह से सम्बन्धित विवरण ।

चिड़ियों के शिकार के लिए बाज पाला करते थे।[159] इसके अतिरिक्त शतरंज के खेल एवं नाव की सैर द्वारा भी मनोरंजन किया जाता था।[160]

इसके अलावा पूर्वी उत्तर प्रदेश के राजाओं और जमींदारों द्वारा विवाह, अंत्येष्टि तथा त्योहारों आदि पर भी अत्यधिक धन व्यय किया जाता था। होली के अवसर पर हिन्दू व मुसलमान समान रूप से खुशियाँ मनाते थे। इस अवसर पर प्राय: नृत्य करने वाली वेश्याओं और पुरूष नर्तकों को बुलाया जाता था।[161] बनारस के राजा बलवन्त सिंह ने " बुढ़ापा मुंगल" नामक त्योहार को प्रारम्भ किया।[162] गोरखपुर के समृद्ध व्यक्तियों तथा जमींदारों द्वारा होली का त्योहार धूमधाम से मनाया जाता था।[163] कुछ राजा और जमींदार प्रतिदिन पूजा पाठ करते थे तथा मन्दिर भी जाते थे।[164] इसके अतिरिक्त ये शासक वर्ग दान धर्म में भी रूचि रखता था।

---

159. मॉण्टगुमरी मर्टिन, खण्ड-II, पृ0 - 504
160. मॉटगुमरी मार्टिन, ख0-II, पृ0 - 414 तथा गिरधारी, इन्तजाम - ए- राज - ए - आजमगढ़, पृ0- 62 बी,
161. मॉटगुमरी मार्टिन, खण्ड- II, पृ0 - 480
162. एम0ए0शेरिंग, बनारस······ पृ0 - 228,229 तथा सैयद मजमुलरजा रिजवी, (शोध प्रबन्ध) इवि0वि0 1983, पृ0-338,33
163. मॉटगुमरी मार्टिन, खण्ड-II, पृ0 - 480
164. वही, पृ0 - 482, तथा सैयद नजमुलरजा रिजवी, पृ0 - 339

मन्दिरों ,मस्जिदों, घाटों, तालाबों, कुओं तथा दानगृहों के निर्माण में भी यह वर्ग आगे रहा । बनारस के राजाओं द्वारा मन्दिरों एवं तालाबों को निर्मित करने के उदाहरण मिलते हैं ।[165]

इस प्रकार औरंगजेब की मृत्यु के बाद राजनैतिक अस्थिरता के वातावरण ने समस्त मुगल साम्राज्य को ऐसे वातावरण में ढकेल दिया जहाँ छोटे छोटे सरदार शिथिलता का लाभ उठाकर स्वतन्त्र होते गये । इन्होंने कृषकों का शोषण अपने निजी हितों के लिए किया । इनका सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन इन्हीं कृषकों के राजस्व के बलबूते पर चलता रहा । उन्होंने अपने ऐश्वर्य व भोग विलास में कमी नहीं की । अब भी कृषक संघर्षरत ही रहा । हालाँकि यें भी सत्य है कि मुगल साम्राज्य के विघटन के कारण साहित्य,

- -

165· ए, फ्यूरर, मानुमेण्टल एण्टीक्विटीज, ·····खण्ड-11, पृ0 - 213, एम0ए0 शेरिंग , बनारस, पृ0 - 172 तथा से0 न0 र0 रिजवी पृ0 -322

स्थापत्य, एवं कला तथा सांस्कृतिक जीवन को जो क्षति पहुँच रही थी उसे कुछ सीमा तक इन शासक वर्गों ने पूरा करने का प्रयास किया । इन राजाओं और जमीदारों ने सांस्कृतिक जीवन के कुछ क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान भी दिया ।

xx xxxxxxxxx xxxxxx xxxx

xxx परिशिष्ट-1 xxxx

xxxxxx xxxxx xxxxxxx xxx

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

xxxxx विशिष्ट - शब्दावली xxxxx

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

विशिष्ट शब्दावली

अबवाब	:	सरकारी अधिकारियों और जमींदारों द्वारा लगाये जाने वाले विविध प्रकार के उपकर, चुंगी व प्रभार । ये कर इस्लाम धर्म में स्वीकृत नहीं है ।
आइन	:	सरकारी नियम कानून ।
आबादी	:	सामान्य अर्थ में कृषि के क्षेत्र में बसी जनसंख्या, विशेषकर कृषि कार्य में लगी हुई जनसंख्या ।
अलतमगा	:	सरकारी अनुदान, इस विशेष प्रकार की काश्तकारी की शुरूआत जहाँगीर द्वारा की गयी थी ।

चकला : सत्रहवीं शताब्दी में इसका अभिप्राय उस खालसा भूमि से था जो चकलादार के अधीन होती थी । बंगाल में 18वीं शताब्दी में यह एक प्रशासनिक क्षेत्र था ।

दाम : तांबे का एक सिक्का जो अकबर के काल में रुपये के चालीसवें हिस्से के बराबर होता था लेकिन चाँदी के सिक्के के हिसाब से इसका मूल्य बदलता रहता था ।

दीवान : राजस्व मन्त्रालय में एक उच्च अधिकारी तथा प्रान्तीय राजस्व अधिकारी ।

फौजदार	:	सोलहवीं से अठारहवीं शताब्दी तक किसी प्रान्त के एक हिस्से के सामान्य प्रशासन की देखरेख करने वाला अधिकारी ।
हासिल	:	कभी - कभी इसका प्रयोग महसूल के अर्थ में किया जाता है जो सन्दर्भ के अनुसार उपज अथवा उपज की माँग को दर्शाता है । सोलहवीं शताब्दी से आमतौर पर इसका इस्तेमाल वास्तविक आय के अर्थ में होने लगा जो अनुमानित आय के ठीक विपरीत अर्थ में है ।
हाट	:	गाँवों में सामान्यत: सप्ताह में लगने वाला बाजार ।

हुन्डी	:	विश्वास पर आधारित एक प्रकार का भुगतान पत्र । जिसके आधार पर एक स्थान के व्यापारी को रूपये देकर दूसरे स्थान के व्यापारी से रूपये ले लिये जाते हैं ।
इजारा	:	भू राजस्व का ठेका ।
इजारादार	:	भू राजस्व का ठेकेदार ।
जागीर	:	मुस्लिम शासन के दौरान वह क्षेत्र जिसका राजस्व किसी राजकीय कर्मचारी को उसकी सेवाओं के बदले में वेतन के रूप में एक नियत अवधि के लिए दिया जाता था ।

जमा	:	राज्य द्वारा निर्धारित किसी क्षेत्र अथवा जागीर का कुल राजस्व ।
जजिया	:	गैर मुस्लिमों से वसूल किया जाने वाला व्यक्तिगत कर ।
जकात	:	यह कर मुसलमानों की उस सम्पत्ति पर लगता था जो उसके पास निर्धारित समय तक रहती थी । यह कर गैर मुस्लिमों से नहीं लिया जाता था । भारत में यह कर धार्मिक कर के रूप में नहीं, बल्कि आयात शुल्क (सीमा शुल्क) के रूप में वसूल किया जाता था ।
जिहाद	:	धर्मयुद्ध । इस्लाम के प्रसार के लिए युद्ध ।

जमा हाल हासिल	:	वास्तविक मालगुजारी ।
जात	:	मनसबदार का व्यक्तिगत पद जो उसकी पद स्थिति को निश्चित करता था तथा जिसके अनुसार उसे वेतन दिया जाता था ।
जाबिताना	:	भूमि की पैमाइश के सम्बन्ध में होने वाला व्यय ।
टंका	:	यह एक तोला सोना या चाँदी का होता था ।
कानूनगो	:	भूमि के विभिन्न हितों, नियमों और भू राजस्व वसूली का रिकार्ड रखने वाला सरकारी कर्मचारी जो लेखपाल तथा पटवारी के ऊपर होता था ।

खालसा भूमि	:	राज्य के सीधे नियंत्रण और प्रबन्ध में रखी गयी भूमि ।
खराज	:	गैर मुस्लिम किसानों से वसूल किया जाने वाला भूमि कर, इस्लाम धर्म में स्वीकृत चार करों, में से एक । अन्य कर हैं - खुम्स, जजिया और जकात ।
खुदकाश्त	:	भू स्वामी द्वारा अपनी जमीन पर स्वयं खेती करना, जबकि पाहीकाश्त इसके विपरीत होता था ।
कोतवाल	:	नगर की सुरक्षा की देखभाल करने वाला अधिकारी ।
खिजानादार	:	एकत्रित राजस्व को सुरक्षित रखने वाला अधिकारी ।

करोडी	:	सरकारी तौर पर इसे अमल गुजार भी कहा जाता था । अठारहवीं शताब्दी में इसका प्रयोग जागीरदार द्वारा नियुक्त संग्रहकर्ता के अर्थ में भी किया जाता था ।
तहवीलदार	:	कोषाध्यक्ष
मदद-ए-माश	:	विद्वान अथवा धार्मिक लोगों की सहायता के लिए सरकार द्वारा निर्धारित राजस्व परोपकारी संस्थान ।
मदरसा	:	उलमा को विशेष रूप से फिक्र का ज्ञान कराने के लिए पाठशाला ।
महाजन	:	व्यापारी, साहूकार ।

महाल : अशुद्ध अर्थ में " राजसम्पत्ति " भूखण्डों का एक वर्ग जिसे भू राजस्व को आंकने के लिए राजस्व की एक ईकाई माना जाता था । अकबर के शासन काल में राजस्व का एक उपविभाग था ।

मण्डी : नियमित रूप से लगने वाला बड़ा बाजार ।

मनसब : अधीनस्थ घोड़ों और सवारों की संख्या के आधार पर बनाया गया मुगल राजदार का एक पद । यह पद मनसबदार को दिया जाता था । मनसबदारी प्रथा अधीनस्थ घोड़ों और सवारों की संख्या पर आधारित सरकारी पदानुक्रम थी ।

मौजा	:	राजस्व के सन्दर्भ में गाँव के लिए प्रयोग में आने वाला शब्द ।
मुहर	:	मुगल कालीन सोने के सिक्के ।
मीर - ए - अर्ज	:	आवेदन पत्रों को प्राप्त करने वाला अधिकारी ।
मीर - बख्शी	:	मुगल प्रशासन के चार प्रमुख विभागों में सैन्य विभाग का मन्त्री ।
मीर - ए - सामान	:	मुगल साम्राज्य के चार प्रमुख केन्द्रीय विभागों के मन्त्रियों में से एक विभाग का मन्त्री । यह सम्राट के हीरे - जवाहरात, हथियार, साधारण वस्तुएं, शाही भवन, इत्यादि के रखरखाव तथा चीजों को वक्त पर

उपल		उपलब्ध कराने के लिए उत्तरदायी था ।
मुकद्दम	:	गाँव का प्रमुख अधिकारी । इसे चौधरी, पटेल, खूत या मुखिया भी कहा जाता था ।
मुतसद्दी	:	बन्दरगाह का प्रमुख अधिकारी ।
मुशरिफ	:	लेखाकार ।
राहदरी	:	वह कर जो किसी विशेष क्षेत्र से गुजरने वाले व्यापारियों से वसूल किया जाता था ।
रैयत	:	किसानों के लिए सामान्यत: प्रयोग किया जाने वाला शब्द ।

परगना	:	गाँवों का समूह । कस्बों के स्थान पर सरकारी तौर पर प्रयोग होने लगा ।
पटेल	:	गाँव का मुखिया ।
पटवारी	:	ग्राम का लेखापात्र
पेशकश	:	जमींदारों तथा राजाओं द्वारा मुगल सम्राट को दी जाने वाली भेंट तथा वार्षिक कर ।
फरमान	:	राजकीय आज्ञा पत्र ।
नाजिम	:	प्रान्त पति ।
नानकार	:	कानूनगों द्वारा वसूल किये गये लगान का एक प्रतिशत दस्तूरी ।

फोतादार :	कोषाध्यक्ष (पोत्दार) खंजाची ।
वितिकची :	लिपिक
वजीर - ए - आजम :	प्रधानमन्त्री ।
शरा (शरीयत) :	इस्लाम के धार्मिक नियम शरा कहलाते थे ।
शिक्दार :	शिक (सरकार या जिला) का प्रमुख अधिकारी ।
सद्र - ए - सुदूर :	मुगल केन्द्रीय प्रशासन के चार प्रमुख विभागों में एक विभाग का मन्त्री । यह समस्त धार्मिक कार्यों की देखरेख करता था । वह मुख्य न्यायाधीश था तथा न्याय सम्बन्धी कार्यों में वह सम्राट की सहायता करता था ।

सराय	:	व्यापारी तथा यात्री के ठहरने का अस्थायी स्थान ।
सर्राफ	:	देशी महाजन या उधार देने वाला ।
सैयद	:	मुसलमानों का एक प्रमुख समुदाय जो मोहम्मद के नाती हुसैन के वंशज होने का दावा करता था ।
सूबा	:	मुगल साम्राज्य का एक प्रान्त ।
स्यूरगाल	:	मुगल काल में पादशाह द्वारा दिये गये भत्ते । इनका भुगतान नकद अथवा भूमि अनुदानों के रूप में किया जाता था ।
सनद	:	वह प्रपत्र जिसके द्वारा किसी व्यक्ति विशेष को सरकारी पद, अनुदान,

ताल्लुक	:	अधीन क्षेत्र या आश्रित राज्य ।
तकावी	:	सरकार द्वारा किसान को दी गयी पेशगी रकम ।
हासिले - बाजार	:	बाजार कर ।
वजीर	:	मुगल सम्राट का प्रमुख मन्त्री । राजस्व एवं प्रशासन सम्बन्धी सम्पूर्ण अधिकार इसके पास रहते थे ।
वीरान	:	निर्जन स्थान, मुख्यत: ऐसे ग्राम के लिए कहा जाता था जिसे लोग छोडकर चले जाते थे और जहाँ कृषि कार्य नहीं होता था ।

आमिल , अमलदार	:	ग्रामों में भूमि कर वसूलने वाला अधिकारी अठारहवीं शताब्दी में इसका सूबेदार के अर्थ में प्रयोग किया जाने लगा जो सामान्य प्रशासन देखता था ।
अमीन	:	सत्रहवीं शताब्दी में प्रान्तों के दीवान के अधीन राजस्व निर्धारण करने वाला अधिकारी ।
उलमा	:	इस्लामी धर्मशास्त्र का ज्ञाता
बनजारा	:	अनाज तथा पशु व्यापारी, हिन्दुओं की एक घुमक्कड़ जनजाति ।
बटाई	:	खेत जोतने वाले और भू स्वामी अथवा सरकार के बीच उपज का बँटवारा । नकदी अथवा अनाज के रूप में भुगतान किया जाता था ।

दस्तूरूल अमल	:	राजस्व सम्बन्धी नियम व अधिनियमों का संकलन जिसमें मालगुजारी का संकलन जिसमें मालगुजारी व राजस्व सम्बन्धी कार्यों में संलग्न कर्मचारियों के लिए निर्देश होते थे ।
दीवाने - आला	:	साम्राज्य के केन्द्रीय शासन का वित्तमंत्री (इसे वजीर भी कहा जाता था ।
दीवाने - खालसा	:	उन क्षेत्रों का राजस्व मन्त्री जिनकी आय सीधे खजाने में जमा होती थी ।
दीवान - ए - तन	:	वेतन सम्बन्धी राजस्व मन्त्री ।
नाजिर	:	दरबार का एक अधिकारी जो सम्मन देने अथवा जाँच पडताल करने वाला होता था ।

मैय्यावारा	:	जमींदार परिवार के सदस्यों द्वारा संयुक्त रूप से विशिष्ट अधिकार एवं अनुलाभ रखना ।
सजावल	:	राजस्व एकत्रित करने हेतु नियुक्त अधीक्षक
सदावर्त	:	भोजन दान ।

xxxx xxxxxx
xxxxxxxx
xxxxxx
xxxx
xx

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

प्राथमिक स्त्रोत

अबुल फजल	:	आइन - ए - अकबरी, नवल किशोर प्रेस, दो खण्ड, लखनऊ, 1893
	:	आइन-ए-अकबरी, संपादक हरिवंश राय शर्मा, तीन खण्ड, महामना प्रकाशन मन्दिर।
	:	आइन-ए-अकबरी, ब्लाक मैन (अनुवाद) भाग-1 तथा जैरेट (अनुवाद) भाग 2 तथा 3, कलकत्ता, 1873- 1894
अबुल फजल मामूरी	:	तारीखे औरंगजेब
बलभद्र	:	चेतसिंह, विलास, काशी राज, विद्या मन्दिर, ट्रस्ट, वाराणसी
सैयद गुलाम हुसैन खाँ	:	सियर = उल - मुताखरीन, अंग्रेजी अनुवाद नोटा मानुस, चार खण्ड,

सादात खाँ	:	मखजान -ए- अकबर, स्टेट आर्काइव्स आफिस, इलाहाबाद ।
सैयद अमीर अली रिजवी	:	सरगुजश्त-ए- राजगान-ए-आजमगढ ﴾अनुवाद सैयद नजमुल रजा रिजवी﴿
साकी मुस्तैद खाँ	:	मआसिर-ए- आलमगीरी, अंग्रेजी अनुवाद सर जदुनाथ सरकार ﴾बिब-इण्डिका﴿ कलकत्ता, 1947
शाहनवाज खाँ	:	मआसिर- उल- उमरा, बिब, इण्डिका सीरीज ।
	:	मआसिर - उल - उमरा ﴾अंग्रेजी अनुवाद बेवरिज﴿ खण्ड-1, रिप्रिन्ट, पटना, 1979
खाफी खाँ	:	मुन्तखब्बुल- लुबाब, बिब0 इण्डिका सीरीज ,अंग्रेजी अनुवाद इलियट एण्ड डाउसन, कलकत्ता, 1974.

खैरूद्दीन मुहम्मद : बल्वन्त नामा, खुदाबख्श ओरियन्टल पब्लिक लाइब्रेरी, बाँकीपुर, पटना ‛अंग्रेजी अनुवाद एफ0 कर्वेन’ इलाहाबाद 1875.

गिरधारी : इन्तजाम - ए- राज - ए- आजमगढ इण्डिया आफिस, लन्दन ‛उद्धृत, सैयद नजमुल रजा रिजवी’

गुलाम हुसैन खाँ : तारीख - ए - बनारस, खुदाबख्श ओरियन्टल पब्लिक लाइब्रेरी ,पटना

मुहम्मद काजिम : आलमगीर नामा, बिब0 इण्डिका, कलकत्ता, 1865,- 73

मंहदी अली खाँ : दस्तूर - उल - अमल, क्षेत्रीय अभिलेखागार, इलाहाबाद ।

मुफ्ती गुलाम हजरत : क्वायफ = ए - जिला - ए - गोरखपुर इण्डिया आफिस, लन्दन, हस्तलिपि सं0 - 4540

: §उद्धृत सैयद नजमुल रजा रिजवी §

हरि चरन दास : चहार गुलजार शुजाई §इलियट व डाउसन§ हिन्दी अनुवाद, मथुरा लाल शर्मा, खण्ड -8, आगरा, 1973

हिदायत उल बिहारी : हिदायत- उल - क्वायद, फर्रुख सियर का शासन काल अब्दुल सलाम, मौलाना आजाद लाइब्रेरी ,अलीगढ ।

जगत राय शुजाई : फरहंग - ए - कारदानी, मौलाना आजाद लाइब्रेरी, अलीगढ ।

जहाँगीर : तुजुके जहाँगीरी, अंग्रेजी अनुवाद रोजर्स एण्ड बेवरिज, लन्दन, 1909

लक्ष्मी नारायण : हकीकत - ए - हिन्दुस्तान, मौलाना आजाद लाइब्रेरी, अलीगढ़ ।

नजीब अशरफ नदवी (सम्पादक) : रुक्कात- ए - आलमगीरी, दारूल मुसन्फीन, आजमगढ़,

: रुक्कात,- ए - आलमगीरी, कानपुर ।

: इलाहाबाद डाक्यूमेन्ट्स, फरमान, परवाना, सेलडीड्स, तसहिसास, जुडिशियल डिक्रीज इत्यादि, कवरिंग दि पीरियड फ्राम अकबर टू मुहम्मद शाह ।

भीमसेन : नुस्खा - ए - दिलकुशा, अंग्रेजी अनुवाद जादुनाथ सरकार, बॅम्बई, 1972.

विदेशी यात्रियों के विवरण :

- - - - - - - - - - - -

अलेक्जेण्डर हेमिल्टन : ए न्यू एकाउण्ट आफ दी ईस्ट
§ 1688 - 1723 § इंडीज फ्रॉम 1688 - 1723 ,
टू वाल्यूम्स, लन्दन, 1724

फ्रैंकोइस बर्नियर : बर्नियर्स वायजेज टू दी ईस्ट इण्डिज
एलिसिम प्रेस, कलकत्ता, 1909

एफ0एस0 ग्रोस : ए वोयज, टू दी ईस्ट इंडीज विद
§1754- 1758§ जनरल रिफ्लेक्शन्स आन दि ट्रेडआफ
इण्डिया, लन्दन, टू वाल्यूम्स

जौन सिलंटर स्टैबोरेनियस : वोयज टू दी ईस्ट इंडीज, अंग्रेजी अनुवाद
§1768 - 1771 § सैमुअल हुल बिलकाक, थ्री वाल्यूम्स
लन्दन ।

जौन बैपटिस्ट ट्रैवर्नियर : ट्रैवल्स इन इण्डिया, अनुवादक बी0लाल,
विलियम क्रुक द्वारा सम्पादित आक्सफोर्ड

मोंसरेट : कमेंटेरियन्स, अनुवादक जे०एस० हालैण्ड लन्दन, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1922

मैन्डेल्सो ≬ 1638-1639≬ : दि वायज ट्रेवल्स आफ दी एम्बेसडर्स सेण्ट बार्ड फ्रेडरिक ड्यूक आफ हाउसरेन टू दि ग्रेट ड्यूक आफ मास्को एटसेक्ट्रा, कन्टेनिंग ए पर्टिकुलर डिस्क्रिप्शन आफ हिन्दुस्तान, द मुगल्स, द ओरियन्टल लैण्ड एण्ड चाइना ≬ इन बुक थ्री ≬ बाई आदम ओरिलियन्स, सेकेण्ड एडीशन ,लन्दन, 1669.

मनूची, निकोलो : स्टोरिया दि मोगोर ,अनुवादक विलियम इरविन, लन्दन, 1925

पेल्सर्ट : जहाँगीर्स इण्डिया, अनुवादक मोरलैण्ड तथा गेइल, कैम्ब्रिज, 1925.

डब्लू0एच0 स्लीमैन : ए जर्नी थ्रू दि किंगडम आफ अवध इन 1849- 1850, दो खण्ड, लन्दन, 1858.

थेवेनौट : दि इण्डियन ट्रेवल्स आफ थेवेनाट एण्ड करेरी, सं0 एस0एन0 सेन, नई दिल्ली, 1940

हिन्दी साहित्य के प्राथमिक स्त्रोत :

1. देव ग्रन्थावली, भाग - 1 : डा0 पुष्पा रानी जायसवाल, हिन्दुस्तानी, एकेडेमी, इलाहाबाद, 1974.

(1) सुखसागर तरंग

(2) देव चरित

(2) देव ग्रन्थावली, प्रथम खण्ड : लक्ष्मी धर मालवीय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1967.

(1) रस विलास :

(3) सोम नाथ ग्रन्थावली प्रथम खण्ड : सं0 सुधाकर पाण्डे, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संक्त 2029.

(1) रस पीयूष निधि

(2) श्रृंगार विलास (पूर्वार्द्ध)

(3) श्रृंगार विलास (उत्तरार्ध)

(4) प्रेम पचीसी ।

(4) सोमनाथ ग्रन्थावली : संपादक सुधाकर पाण्डे, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संवत, 2030.

अन्य हिन्दी पुस्तकें :

डा0 नगेन्द्र : रीतिकाल की भूमिका

आर0पी0 तिवारी : भारतीय चित्रकला और उसके मूल तत्व ।

क्षेत्रीय अभिलेखागार, इलाहाबाद

डंकन, रिकार्ड्स : बस्ता न0 - 1, से 19 तक, 105 वाल्यूम ।

कमिश्नर्स आफिस, गोरखपुर रेवेन्यू रिकार्ड्स :

1. रिलेटिंग टू दी गोरखपुर एण्ड बस्ती : 132 वाल्यूम
2. रिलेटिंग टू दी आजमगढ : 67 वाल्यूम्स
3. गोरखपुर कलेक्ट्रेट से उपलब्ध रेवेन्यू लेटर्स ।

प्रकाशित अभिलेख :

सी०यू०एचिसन : ए कलेक्शन आफ ट्रीटीज, एन्गेजमेण्ट्स, एण्ड सनद्स रिलेटिंग टू इण्डिया एण्ड नेबरिंग कन्ट्रीज, खण्ड-1, 1863

बी०पी०सक्सेना : ए कैलेन्डर आफ ओरियन्टल रिकार्ड्स, खण्ड-1, इलाहाबाद, 1955

शोध लेख :

विलियम इर्विन : दि बंगश नवाब्स आफ फर्रुखाबाद-ए - क्रानिकल, 1713-57 जर्नल आफ दी एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल खण्ड- 48, भाग-1, 1879

बनार्ड एस० कोहन : पोलिटिकल सिस्टम इन एट्टीन्थ सेन्चुरी इण्डिया, जर्नल आफ दि अमेरिकन ओरियन्टल सोसायटी, खण्ड- 82, नं० -3, जुलाई-सितम्बर 1962.

...... : एक दलित जाति का परवर्ती स्तर, बनार्ड एस०कोहन की रिपोर्ट पर आधारित ग्रामीण भारत, सम्पादक मैकिम मैरियट, हिन्दी अनुवाद हरिश्चन्द्र उप्रेती, जयपुर, 1973

सैयद नजमुल रजा रिजवी : ए जमींदार - फैमिली आफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, प्रो०ई०हि०का०,बम्बई, 1980

दि विर्तिया जमींदार , आफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, प्रो०इ०हि०का०,बम्बई 1980.

उर्दू ग्रन्थ :

मोहम्मद अब्दुल गफूर फारूकी : शजरे शादाब, गोरखपुर, 1901.

सैयद मजहर हसन : तारीख - ए - बनारस, खण्ड-1, 1916
वाल्यूम, 11, 1926

रिपोर्ट्स और गजेटियर :

विलियम इरविन : रिपोर्ट आन दी रीविजन आफ
रिकार्ड्स एण्ड सेटिलमेण्ट आपरेशन इन
दी गाजीपुर डिस्ट्रिक्ट, 1880-85,
इलाहाबाद, 1886

विल्टन ओल्टम : हिस्टारिकल एण्ड स्टेटिस्टिकल मेमायर
आफ दि गाजीपुर डिस्ट्रिक्ट, भाग-1,
इलाहाबाद 1870, तथा भाग-11,
इलाहाबाद, 1876

ए0 फ्यूरर : दि मानूमेण्टल एन्टीक्वीटीज एण्ड इन्स्क्रिप्शन आफ नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध, खण्ड-II, इलाहाबाद 1997

जे0आर0रीड : रिपोर्ट आन दि डिस्ट्रिक्ट आफ आजमगढ कम्पाइल्ड इन कनेक्शन विद दि कम्प्लीशन आफ दि सिक्सथ, सेटिलमेन्ट, इलाहाबाद 1877

एल0वीने : सेटिलमेण्ट रिपोर्ट.....गोरखपुर 1868

: इम्पीरियल गजेटियर्स आफ इण्डिया {प्राविन्सेज सीरीज} यूनाइटेड प्राविन्सेज आफ आगरा एण्ड अवध, खण्ड-II, कलकत्ता, 1908

: आजमगढ का डिस्ट्रिक्ट गजेटियर,

1911

: आजमगढ-ए- गजेटियर, खण्ड- 33,

: दि डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स आफ द

यूनाइटेड प्राविन्सेज आफ आगरा एण्ड

अवध, इलाहाबाद, 1911

: गोरखपुर,-ए- गजेटियर, खण्ड-31,

दि डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स आफ दि

यूनाइटेड प्राविन्सेज आफ आगरा एण्ड

अवध, इलाहाबाद, 1909

: बस्ती, ए गजेटियर ,खण्ड-32,

इलाहाबाद , 1907

: बनारस- ए गजेटियर ,खण्ड-26,

दि डिस्ट्रिक्ट आफ गजेटियर आफ दि

यूनाइटेड प्राविन्सेज आफ आगरा एण्ड

अवध, इलाहाबाद, 1909

जे0के0 हालोज : डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स आफ दि यूनाइटेड प्राविन्सेज, खण्ड-33 डी गोरखपुर डिवीजन, आजमगढ, इलाहाबाद 1935.

शोध ग्रन्थ :

- - - - -

रेखा मिश्रा (वर्तमान में प्रो0 रेखा जोशी) : वीमेन इन मुगल इण्डिया, नई दिल्ली ।

डा0 हेरम्ब चतुर्वेदी : दि सोसायटी आफ नार्थ इण्डिया इन दि सिक्स्टीन्थ सेन्चुरी, एस0 डिपेक्ट टू कन्टेम्परेरी हिन्दी लिटरेचर इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद 1990.

नीरा दरबारी : सोशल एण्ड इकनामिक कन्डीशन आफ नार्दर्न इण्डिया ड्यूरिंग दि सेकेण्ड हाफ आफ दि सेवेन्टीन्थ सेन्चुरी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, 1977.

वीरेन्द्र कुमार वर्मा	:	सूबा आफ इलाहाबाद, 1707-1765 , इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद 1969.
काशी प्रसाद श्रीवास्तव	:	हिस्ट्री एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन आफ दि प्राविन्स आफ बनारस , इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
सैयद नजमुल रजा रिजवी	:	ए स्टडी आफ जमींदार्स आफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश इन दि एट्टींथ सेन्चुरी, 1983.
मधुबाला	:	हिन्दी साहित्य के स्त्रोतों के आधार पर अठारहवीं शताब्दी का समाज चित्रण (अप्रकाशित) इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद 1992

पी0आई0शिशारोव : इण्डिया इकनामिक डेवलपमेण्ट इन दिन सिक्सटीन्थ - एट्टीथ सेन्चुरी आउट लाइन हिस्ट्री आफ क्राफ्ट्स एण्ड ट्रेड ,अनुवादक डान डेनमेनिस, मास्को, 1971

ए0जे0कैसर : डिस्ट्रीव्यूशन आफ द रेवेन्यू रिसोर्सेज आफ द मुगल एम्पायर अमंग दि नोबिल्टी, इलाहाबाद सेशन, 1965

एए0के0 एम0फारूकी : रोड्स एण्ड कम्यूनिकेशन इन मुगल इण्डिया, दिल्ली, 1977

ए0एल0श्रीवास्तव : अकबर दि ग्रेट ,तीन खण्ड में, आगरा 1972

: दि मुगल एम्पायर 1526-1803, आगरा, 1977

: अवध के प्रथम दो नवाब, आगरा, 1957.

ए0जी0ओन : दि फाल आफ दि मुगल एम्पायर, लन्दन, 1912

ए0रशीद : सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इण्डिया, कलकत्ता, 1969

ए0ह्यूग इत्यादि : एन इन्साइक्लोपीडिया आफ इस्लाम, लन्दन, 1913-38

बी0ए0नारायन : जोनाथन डंकन एण्ड कल्चर इन मेडिवल इण्डिया, कलकत्ता, 1959

धर्मपाल : इण्डियन साइन्स एण्ड टेक्नोलोजी इन दि एट्टीन्थ सेन्चुरी : सम कन्टेम्परेरी यूरोपीयन एकाउण्ट्स, 1971

डी०पन्त : कामार्शियल पालिसी आफ द मुगल्स, बम्बई, 1930

इलियट एण्ड डाउसन : हिस्ट्री आफ इण्डिया एज टोल्ड बाई इट्स ऑन हिस्टोरियन्स, भाग-7,8, लन्दन, 1866-77 हिन्दी अनुवाद मथुरा लाल शर्मा ,प्रथम संस्करण, आगरा, 1973 ·

जी०एस० घुर्ये : इण्डियन कास्ट्यूम्स, बम्बई, 1951·

: कास्ट, क्लास एण्ड आक्यूपेशन, पापुलर बुक डिपो ,बम्बई, 1961

गैरेट एण्ड एडवर्ड : मुगल रूल इन इण्डिया, एशियन पब्लिकेशन सर्विस , नई दिल्ली, 1979

गोपीनाथ शर्मा : राजस्थान का इतिहास, शिव लाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा, 1979

हरिशंकर श्रीवास्तव : मुगल शासन प्रणाली, इलाहाबाद 1978

एच०के०नकवी : अर्बन सेन्टर्स एण्ड इन्डस्ट्रीज इन अपर इण्डिया ,1556-1803,बम्बई, 1968.

: अर्बनाइजेशन एण्ड अर्बन सेन्टर्सअण्डर दि ग्रेट मुगल्स, शिमला, 1971

इब्ने हसन : दि सेन्ट्रल स्ट्रक्चर आफ दि मुगल एम्पायर, आक्सफोर्ड 1936

इरफान हबीब : दि एग्रेरियन सिस्टम आफ मुगल इण्डिया एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1963

जे0एन0सरकार : मुगल एडमिनिस्ट्रेशन, कलकत्ता, 1935

जे०एस०ग्रेवाल : अर्बनाइजेशन इन मेडिवल इण्डिया 1982

जे०एस०डुबोयस : हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज आक्सफोर्ड, 1894

झारखण्डे चौबे एवं कन्हैया लाल श्रीवास्तव : मध्य युगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, उ०प्र० हिन्दी संस्थान० प्रथम संस्करण, 1979, वाराणसी ।

के०पी०मिश्र : बनारस इन ट्रान्जिशन 1738-95, नई दिल्ली, 1975

के० ग्लेमन : डच एशियाटिक ट्रेड 1620- 1740 , द हेग , 1958

के०के० दत्ता : सर्वे आफ इण्डियाज सोशल लाइफ एण्ड इकनामिक कन्डीशन इन द एट्टीन्थ सेन्चुरी 1707 - 1813 , कलकत्ता 1961

के0ए0 निजामी	:	स्टडीज इन मेडिवल इन्डियन हिस्ट्री एण्ड कल्चर, इलाहाबाद, 1956
लईक अहमद	:	भारतीय संस्कृति, इलाहाबाद मुगल कालीन भारत, इलाहाबाद, 1991
लाल खां बहादुर मल्ल	:	विश्वेनवंश वाटिका, बांकीपुर, 1877.
एम0ए0शेरिंग	:	बनारस, दि सकेण्ड सिटी आफ दि हिन्दूज इन एनशियन्ट हिन्दूज इन एनशियन्ट एण्ड माडर्न टाइम्स, रिप्रिन्ट, द्वितीय संस्करण, दिल्ली 1975
एम0अतहर अली	:	दि मुगल नोबिल्टी अण्डर औरंगजेब नई दिल्ली, 1966

एम0अजहर अन्सारी : सोशल लाइफ आफ दि मुगल एम्परर्स (1526- 1707) नई दिल्ली, 1974

एम0एल0 राय चौधरी : दि स्टेट एण्ड रिलीजन इन मुगल इण्डिया कलकत्ता, 1951

मुजफ्फर आलम : दि क्राइसिस आफ एम्पायर इन मुगल नार्थ इण्डिया, अवध एण्ड दि पंजाब 1707- 1748, दिल्ली, 1986

मोहम्मद यासीन : ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इण्डिया ,1605-1748, लखनऊ,1958

मौंटगुमरी मार्टिन : दि हिस्ट्री एन्टीक्विटीज, टोपोग्राफी एण्ड स्टेटिस्टकल आफ ईस्टर्न इण्डिया, खण्ड-11, इण्डियन रिप्रिन्ट,दिल्ली 1976

मोती चन्द्र : काशी का इतिहास, बम्बई, 1962

एन0पी0अगिनाइड्स : मुहम्मडन थ्योरी आफ फाइनेन्स, 1916

एन0ए0सिद्दीकी : लैण्ड रेवेन्यू एडमिनिस्ट्रेशन अण्डर दि मुगल्स, बम्बई, 1970

नागेश्वर प्रसाद सिंह वर्मा : नाग कौशलेत्तर, खण्ड- 1, 1918.

पी0एन0ओझा : सम आस्पेक्ट्स आफ नार्दर्न इण्डियन सोशल लाइफ, पटना, 1961

: ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ, इन मुगल इण्डिया, क्लासिकल पब्लिकेशन, नई दिल्ली ।

पी0शरण : स्टडीज इन मेडिवल इण्डियन हिस्ट्री, दिल्ली , 1952

: दि प्रोवीन्शियल गवर्नमेण्ट आफ दि मुगल्स, इलाहाबाद, 1941

पर्सी ब्राउन : इण्डियन आर्कीटेक्चर (इस्लामिक पीरीयड) बम्बई, 1975

: इण्डियन पेंटिंग अण्डर दि मुगल्स, आक्सफोर्ड, 1924

पी०एल०रावत : हिस्ट्री आफ इण्डियन एजूकेशन, आगरा 1956

पी०एन०चोपड़ा : सोसायटी एण्ड कल्चर ड्यूरिंग मुगल एज, आगरा, 1955

आर०ए० फ्राइकेन बर्ग : लैण्ड कन्ट्रोल एण्ड सोशल स्ट्रक्चर इन इण्डियन हिस्ट्री, विसकांसिन, 1969, भारतीय संस्करण, 1979.

आर०पी०त्रिपाठी : राइज एण्ड दि फाल आफ दि मुगल एम्पायर, इलाहाबाद, 1955

आर०सी० मजूमदार : हिस्ट्री एण्ड दि कल्चर आफ दि इण्डियन पीपुल, दि मुगल एम्पायर, भारतीय विद्याभवन, बम्बई, 1974

राधाकमल मुखर्जी : दि इकनामिक हिस्ट्रीआफ इण्डिया, 1600 - 1800, इलाहाबाद, 1967

राम नाथ : मध्यकालीन भारतीय कलाएं एवं उनका विकास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्रथम संस्करण, जयपुर, 1973

राजबली पाण्डेय : गोरखपुर जनपद और उसकी क्षत्रिय जातियों का इतिहास, गोरखपुर , 1946

एस0आर0शर्मा : दि रिलीजियस पालिसी आफ दि मुगल्स एम्परर्स, बम्बई, 1940

: मुगल गवर्नमेन्ट एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन बम्बई, 1951

सतीश चन्द्र : पार्टीज एण्ड पालिटिक्स एट द मुगल कोर्ट, अलीगढ़, 1959

: उत्तर मुगल कालीन भारत का इतिहास, नई दिल्ली, 1974

एस0नूरूल हसन : थाट्स आन एग्रेरियन रिलेशन्स इन मुगल इण्डिया, नई दिल्ली, 1973

: जमींदार्स अण्डर दि मुगल्स, संपादक इरफान हबीब, अंक -1, मैकमिलन, नई दिल्ली, 1981

एस0अतहर अब्बास रिजवी : ए हिस्ट्री आफ सूफीज्म इन इण्डिया, दो खण्ड, नई दिल्ली, 1975 ,1983

: उत्तर मुगल कालीन भारत ।

एस0एम0 पगाडी : एट्टीन्थ सेन्चुरी, बम्बई, 1963

ताराचन्द : इफ्लूएन्स आफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, इलाहाबाद, 1963

तपन राय चौधरी और इरफान हबीब (संपादक) : दि कैम्ब्रिज इकनामिक हिस्ट्री आफ इण्डिया, सी 1200-सी 1750, खण्ड-1, कैम्ब्रिज, 1982

थामस पेट्रिक हेज : ए डिक्शनरी आफ इस्लाम, लन्दन, 1885

यू0एन0डे : दि मुगल गवर्नमेन्ट, नई दिल्ली, 1970

विलियम इरविन : लेटर मुगल्स, भाग- 1,2, कलकत्ता, 1922

डब्लू0एच0मोरलैण्ड : दि एग्रेरियन सिस्टम आफ मुस्लिम इण्डिया, ﴾हिन्दी अनुवाद कमलाकर तिवारी﴿ इतिहास प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण, इलाहाबाद, 1963 अंग्रेजी संस्करण, कैम्ब्रिज, 1929

: दि रेवेन्यू एडमिनिस्ट्रेशन आफ दि यूनाइटेड प्राविन्सेज, इलाहाबाद, 1911।

डब्लू0एच0 विल्सन : ए ग्लोसरी आफ जुडीशियल एण्ड रेवेन्यू टर्म्स आफ ब्रिटिश इण्डिया, लन्दन, 1875.

युसुफ हुसैन : मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति, हिन्दी अनुवाद मुहम्मद उमर, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ़ ।

जहीरूद्दीन फारूकी : औरंगजेब एण्ड हिज टाइम्स, बम्बई, 1935.

जहीरूद्दीन मलिक : दि रिजाइन आफ मुहम्मदशाह एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1977

जियाउद्दीन देसाई : इन्डो - इस्लामिक आर्कीटेक्चर

जमीला बृजभूषण : कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इण्डिया, बम्बई, 1940

: इण्डियन ज्वेलरी, आर्नामेण्ट्स एण्ड डेकोरेटिव डिजाइन्स, तारपोरवाला सन्स एण्ड कम्पनी, बम्बई।

xxxxxxxxxx
xxxxxxx
xxxxx
xxx